राजस्थान के ग्रन्थागार

सम्पादक
डॉ० नारायणसिंह भाटी

निदेशक
राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी
जोधपुर

प्रकाशक
राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर
(जोधपुर विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त शोध-केन्द्र)

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर

□

मूल्य : ४०.०० रु०

सन् : १९७४

□

प्रकाशक :

राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी

(चौपासनी शिक्षा समिति द्वारा सस्थापित)

मुद्रक :

भारत प्रिण्टर्स

जोधपुर

विषय-सूची

सम्पादकीय

विश्व मे वाणी का उद्‌भव और वाणी से वाङ्‌मय का सृजन मानव सभ्यता के विकास-क्रम की पहली सीढी है और हर युग मे वाङ्‌मय को सुरक्षित रखने हेतु लिपि का आविष्कार ज्ञान के संसार का सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार है। जब हम हजारो वर्षो के सुदीर्घ अतीत पर विचार करते है तो पता चलता है कि सबसे पहले लिपि का अकन पत्थरो और पेड़ो पर साकेतिक रूप मे ही किया गया होगा किन्तु बुद्धि और वाङ्‌मय के विकास के साथ-साथ लिपि का सुनिश्चित स्वरूप बनता गया और अधिक सुविधा के लिए उसे ताड़ पत्र, भोज पत्र आदि पर अकित किया जाने लगा। इन पत्रों को एक क्रम मे जमाये रखना एक समस्या थी जिसे सुलझाने के लिए उन्होने ताडपत्रो को एक क्रम में जमा कर बीचो बीच छिद्र करके उसमे पेड़ की छाल के रेशो (बाद मे सूत) डालकर उसे गाठ से बाध (ग्रथित कर) दिया इसीलिए उन लिखित पत्रो के समूह को ग्रथ कहा जाने लगा।

विश्व मे ज्ञान का आलोक सबसे पहले भारत मे उदित हुआ, यह प्राच्य विद्या के सभी विद्वान मानते हैं और ऋग्वेद को भारतीय वाङ्‌मय का सबसे प्राचीन ग्रथ सिद्ध करते है। मूलत. भारत मे आर्य-सभ्यता का विकास पहले वैदिक सस्कृत मे और फिर सस्कृत प्राकृत आदि भाषाओ के विकास के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा है। इन भाषाओ मे लिखे गये हजारो ग्रन्थ भारतीय मनीषा के विकास-क्रम को दर्शाते है और भारतीय सस्कृति के अध्ययन के लिए अमूल्य सामग्री प्रस्तुत करते है। परन्तु आज जो भी ग्रन्थ-राशि इस देश मे बची हुई है वह उस महान् सम्पदा का एक अश मात्र ही है क्योकि समय के झझावात मे होने वाले उलटफेर और अनेक प्रकार की प्राकृतिक विपदाओ के कारण बहुत बड़ी सख्या मे यह राशि समय-समय पर लुप्त होती रही। प्राग्-ऐतिहासिक समय की बात को छोड भी दे तो ज्ञात ऐतिहासिक घटनाएँ भी हमे यह बताती है कि किस प्रकार इस महान साहित्य को बाहर से आने वाले

आततताइयो ने इसे विधर्मियो का साहित्य समझ कर जला डाला या रौद कर नष्ट-भ्रष्ट कर डाला।

सातवी शताब्दी ईसवी का चीनी यात्री हुवान्‌च्वाङ् नालन्दा विश्व विद्यालय मे इस अपूर्व ग्रन्थ-राशि को देख कर वड़ा प्रभावित हुआ था। भारत मे मुगलों के आक्रमण के साथ इस देश का जो सास्कृतिक ह्रास प्रारम्भ हुआ उसके साथ-साथ इस देश की ज्ञान-राशि जो प्राचीन ग्रन्थो मे सुरक्षित थी वह भी वड़ी तेजी के साथ आक्रमको द्वारा नष्ट की गई। इतिहास वताता है कि वारहवी शताव्दी मे वख्तीयार खलजी ने भारत पर आक्रमण किया तो उसने नालन्दा के इस महान् पुस्तकालय को भी जला कर नष्ट कर डाला। ऐसी प्रसिद्धि है कि ज्योतिष, आयुर्वेद, विज्ञान, कला, योग, न्याय, भाषाविज्ञान आदि विषयों के हजारो ग्रन्थ यहाँ सुरक्षित थे तथा 10,000 विद्यार्थी यहाँ अध्ययन करते थे। सघ स्थविर शीलभद्र से युवान्‌च्वाङ् ने दण्ड-नीति तथा पाणिनीय व्याकरण का अध्ययन किया था। यहाँ महायान दर्शन का केन्द्र था और सवसे अधिक मूल्यवान ग्रन्थ न्याय-शास्त्र और प्रमाण-शास्त्र के थे जो इस आक्रमण मे नष्ट हो गये। वारहवी शताव्दी के वाद यह क्रम मुगलो के निरन्तर आक्रमणो के कारण चलता ही रहा। कई बार ऐसा भी हुआ कि कट्टर हिन्दू अपने धार्मिक ग्रन्थो को विधर्मियों के हाथ में पड़ने से वचाने के लिए नदियो के जल मे प्रवाहित कर देते थे। इस प्रकार न जाने कितनी ज्ञान-राशि इन ग्रन्थो के साथ ही नष्ट हो गई इसका आज अनुमान लगाना असम्भव है।

भारत में अग्रेजी राज्य की स्थापना के वाद इस दृष्टिकोण मे कुछ परिवर्तन आया और पाश्चात्य देशो के जो प्रशासक यहाँ आये उनमे से कुछ विद्याव्यसनी व वास्तुकला तथा ग्रन्थो के कद्रदान भी थे। उनके माध्यम से इगलैण्ड, पूर्तगाल, फ्रांस, जर्मनी व इटली के कुछ विद्वानों का ध्यान इस ज्ञान-राशि की ओर आकर्षित हुआ और उन्होने इनका अध्ययन भी किया परन्तु साथ ही वे इस सम्पदा को यहाँ से उठा कर अपने देशो मे ले जाने से भी नही चूके। इस प्रकार हजारो दुर्लभ ग्रन्थ इन देशो मे पहुँच गये जो आज भी वहाँ के ग्रन्थागारो व पुस्तकालयों की शोभा वढा रहे हैं तथा भारतीय विद्वानो को भी वहाँ जाकर अध्ययन करने के लिए वाध्य करते हैं।

आधुनिक काल मे अग्रेजो के आगमन के पश्चात जो ग्रन्थ वच गये उनकी दशा भी कोई अच्छी नहीं रही। प्राचीन अध्ययन की वे परम्पराएँ अव लुप्त

हो चुकी थी और नई शिक्षा प्रणाली मे इस साहित्य का वह स्थान नही रह गया था। इसलिए इन ग्रथो की अवमानना प्रारम्भ हुई और जिन घरो मे अथवा मन्दिरों मठो मे ये ग्रन्थ पड़े थे वे दीमक का आहार बनने लगे उस समय मुनिजिनविजयजी द्वारा किया गया उद्बोधन यहाँ उद्धृत करने योग्य है—

"विदेशीय विभुता, विक्रम, विद्या और विचारों की चकाचौंध मे आकर हम अपने जातीय जीवन के गौरव को खो बैठे है इसका भी हमें ठीक होश नही रहा। पर अब कुछ कुछ हमारी यह मोह-निद्रा दूर होती दिखाई दे रही है और हमे अपनी दशा का कुछ मार्मिक भान हो रहा है। हम अपनी वेहोशी में क्या-क्या खो बैठे है और हमारी कौन सम्पत्ति किस तरह नष्ट हो गई है, इसका थोड- बहुत ख्याल हमे आ रहा है। हमारा कर्तव्य अब यह है कि हम शीघ्र ही अपनी इस जातीय और राष्ट्रीय जीवन-सम्पत्ति को, जो नाशोन्मुख हो रही है, गाव-गाव मे घूम कर खोज निकालें और उसका रक्षण करे।" फिर भी बहुत कम स्वदेशी विद्वान ऐसे थे जिन्होंने इनके उद्धार का प्रयास किया। इनमे डॉ. भण्डारकर, मुनि जिनविजय, बाबू श्यामसुन्दर दास आदि के नाम लिये जा सकते हैं। स्वाधीनता के पश्चात इस दिशा में कुछ जागृति आयी और कुछ विश्वविद्यालयो तथा शोध-केन्द्रों मे शोध की बढती हुई प्रवृत्ति के साथ-साथ इन ग्रन्थो की खोज का कार्य भी प्रारम्भ हुआ। परन्तु वह औपचारिक अधिक और ग्रन्थों के सग्रह व सुरक्षा की दृष्टि से गौण ही कहा जायेगा। प्रान्तीय राज्य-सरकारो ने भी इस कार्य को प्राथमिकता देते हुए ठोस प्रयास किये हो या शोध-सस्थाओ तथा विश्वविद्यालयो को ग्रथ-सग्रह के लिए विशेष अनुदान उदारता पूर्वक दिये हों ऐसा भी नही हुआ जिससे इस समय मे भी बहुत बड़ी सख्या मे सामग्री नष्ट हुई अथवा कबाड़ियो व एटीक व्यापारियो द्वारा विदेशियो के हाथो बेच दी गई। फिर भी जिन प्रान्तों मे कुछ उपयोगी कार्य हुआ है उनमे राजस्थान का नाम अग्रणी है।

विद्वानो का ऐसा अनुमान है कि सबसे बड़ी ग्रथ-सम्पदा राजस्थान मे है। इसके कई कारण हो सकते हैं। पहला तो यह कि मध्यकाल मे जब मुगल आक्रमण हो रहे थे और दो सस्कृतियो का टकराव जोरो से हो रहा था उस समय यहाँ के शासको ने अपने प्राणों की वाजी लगा कर यहाँ की सस्कृति की रक्षा के लिए बहुत बड़ा प्रयास किया और उन्होने इस सस्कृति की वहती हुई अविरल धारा को तो अवरुद्ध होने से बचाया ही साथ ही धार्मिक स्थानो और मन्दिरों तथा ब्राह्मणों की रक्षा करना उन्होंने अपना पहला फर्ज समझा, जिससे

इन स्थानो पर सगृहीत ग्रथ भी बचा लिये गये। मुगलकाल मे यहाँ के शासक राजस्थान से बाहर प्राय: बड़े सैनिक अभियानो मे दलबल सहित जाया करते थे और स्थान-स्थान पर कई महीनों तक उनके पड़ाव रहते थे। ऐसी स्थिति मे वे अनेक स्थानीय विद्वानो और धार्मिक सस्थानो के सम्पर्क मे आते थे तथा उनमे से कुछ विद्या-व्यसनी व साहित्य-प्रेमी शासक व सरदार वहाँ की साहित्यिक कृतियो की प्रतिलिपि करवाकर अपने पास रख लेते थे। इस प्रकार दक्षिणी भारत तथा उत्तरी भारत मे की गयी पाण्डुलिपियो की प्रतिलिपियाँ अच्छी सख्या में राजस्थान मे आकर सुरक्षित हो गई। दक्षिणी भारत मे तो जब औरगजेब की धार्मिक असहिष्णुता का प्रकोप अत्यधिक बढने लगा तो अनेक धर्मपरायण लोगो ने अपने धार्मिक ग्रथो को नदी के अर्पण कर देना उपयुक्त समझा बनिस्पत इसके कि वे विधर्मियो के हाथो नष्ट किये जावे। ऐसी स्थिति मे वहाँ पर तैनात अनेक राजपूत शासको ने उन ग्रथो का अधिग्रहण किया और उन्हे सुरक्षित रखने का आश्वासन दिया। ऐसे शासकों मे बीकानेर के महाराजा अनूपसिह सबसे अग्रणी थे। उन्होने सस्कृत की बहुत बड़ी ग्रथ-सम्पदा को अपने अधिकार मे कर वहाँ नष्ट होने से बचाया और उन्हे बीकानेर में लाकर सुरक्षित किया। बीकानेर का प्रसिद्ध ग्रन्थागार 'अनूप सस्कृत पुस्तकालय' इसी प्रयास की एक ऐतिहासिक देन है। दूसरा, यहाँ के कई शासक स्वयं विद्वानो और कवियो के बड़े कद्रदान थे जिससे साहित्य सृजन का प्रवाह बराबर बना रहा और उन्होने कवियो को स्थायी आश्रय देकर बहुत बड़े साहित्य की सर्जना करने को प्रेरित किया। डिगल और पिगल दोनो ही भाषाओं मे उच्च कोटि की साहित्य सर्जना इस काल मे हुई है जो राजस्थान की भारतीय साहित्य को अमूल्य देन है। तीसरा कारण राजस्थान की भौगोलिक स्थिति भी है। पश्चिमी राजस्थान का थार रेगिस्तान जहा आक्रमणकारी आसानी से नही पहुँच सकते इन ग्रन्थो का बहुत बडा सुरक्षित स्थान रहा तथा सूखी जलवायु के कारण भी अनेक ग्रन्थ क्षरित होने से बच गये। 11 वी शताब्दी के प्रारम्भ मे मुहम्मद गजनवी ने जब गुजरात को आक्रात कर सोमनाथ पर चढाई की और भारी लूटपाट मे वहाँ की सास्कृतिक धरोहर को नष्ट किया तो उस समय की अशान्त परिस्थितियों के कारण गुजरात के जैनाचार्य अपनी ग्रन्थ-सम्पदा की सुरक्षा के बारे मे बहुत सशंकित हो गये और पाटण आदि स्थानो के महत्वपूर्ण सग्रहो को उन्होने जैसलमेर जैसे सुरक्षित स्थान पर रखना अधिक उचित समझा जिसके फलस्वरूप गुजरात से बहुत ही महत्वपूर्ण प्राचीन ग्रन्थ-सम्पदा जैसलमेर

के दुर्ग में लाकर सुरक्षित की गयी जो आज 'जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार' के नाम से विख्यात है। यहाँ आने के पश्चात् यह सग्रह पूर्णतया सुरक्षित रहा और भारतीय सस्कृति की यह अमूल्य धरोहर राजस्थान मे आकर नष्ट होने से बच गयी।

स्वाधीनता से पूर्व इस ग्रन्थ-राशि का पता कुछ राजकीय सग्रहो व जैन सग्रहो तक ही सीमित था परन्तु स्वाधीनता के पश्चात् इस दिशा मे बडा ही उपयोगी कार्य हुआ है तथा राजकीय व अराजकीय ऐसे अनेक सग्रहालय निर्मित हुए जहाँ लाखो ग्रथ सुरक्षित कर अध्येताओ को उपलब्ध कराये गये। राजस्थान सरकार द्वारा जोधपुर में संस्थापित 'राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान' व इसकी शाखाओ मे दो लाख से भी अधिक ग्रन्थ सुरक्षित किये गये हैं। इस ग्रन्थ सुरक्षा का बहुत बडा श्रेय पुरातत्वाचार्य मुनि जिनविजयजी को है जिन्होने इस सस्था को यह स्वरूप मानद निदेशक के रूप मे कार्य करके दिया और अपने प्रभाव से भी व्यक्तिगत सग्रहो के हजारो ग्रथ सस्था की विभिन्न शाखाओ मे सुरक्षित करवाये तथा उनका विधिवत केटेलोग बनवाने कार्य भी प्रारम्भ करवाया। उनके पद त्याग के पश्चात् ग्रथ-सग्रह का यह क्रम वही रुक गया, यदि यह क्रम चलता रहता और सरकार का उदार सहयोग पूर्ववत् मिलता रहता तो अब तक कितने ही ग्रन्थ शायद और सग्रहीत हो जाते। जोधपुर मे स्थित इस प्रमुख सस्था के अलावा भी यही पर राजस्थानी शोध-सस्थान चौपासनी, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश व रावटी का सम्यक् ज्ञान भण्डार, मे कोई पचास हजार के लगभग महत्वपूर्ण ग्रंथ सस्कृत, प्राकृत, राजस्थानी, ब्रज आदि भाषाओ के सगृहीत है तथा उनके केटेलोग प्रकाशित करने का क्रम भी चल रहा है। इसके अलावा बीकानेर का अनूप सस्कृत पुस्तकालय, जैसलमेर का जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार, जयपुर का सिटी पैलेस म्यूजियम स्थित पोथीखाना, टोक का अरबी-फारसी सग्रहालय तथा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की इन नगरो मे शाखाओं के अलावा अनेक निजी व्यवस्था मे चल रहे महत्वपूर्ण सग्रह है जिनमे विविध विषयो के ग्रथ सुरक्षित है।

राजस्थान के इन सभी ग्रन्थागारो का अभी तक पूर्ण सर्वेक्षण नही हो पाया है और न ही उनके पूरे केटेलोग बने हैं। जहाँ तक ग्रन्थो के प्रकाशन का सम्बन्ध है यह कार्य अभी प्रारम्भिक स्थिति मे ही है और साधनो की कमी व उपयुक्त विद्वानों के अभाव मे भी बहुत कम ग्रन्थ सुसम्पादित होकर प्रकाश मे

आये है । राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की प्राच्य ग्रंथमाला तथा राजस्थानी शोध संस्थान की शोध पत्रिका 'परम्परा' के माध्यम से कई महत्वपूर्ण ग्रथ प्रकाश में अवश्य आए हैं ।

ऐसी स्थिति मे हमने यह महसूस किया कि इन ग्रंथागारो में सगृहीत इस अमूल्य ज्ञान-राशि और सांस्कृतिक धरोहर का सम्यक् परिचय विद्यार्थियो, विद्वानो तथा सस्कृति के जिज्ञासु अध्येताओ तक पहुँचना चाहिए । इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु हमने इस विषय पर प्रकाश डालने की योजना बनाई जिसके फलस्वरूप यह सामग्री विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत की जा रही है, यद्यपि इसे राजस्थान के ग्रंथागारो का सर्वांगीण अध्ययन तो नही कहा जा सकता क्योंकि वडे सग्रहो के अलावा छोटे अज्ञात व्यक्तिगत सग्रहो का परिचय यहाँ समाहित नही किया जा सका है फिर भी इस दिशा मे यह प्रयास उपयोगी सिद्ध होगा ।

ज्ञात सग्रहों के बारे मे जो भी लेख यहाँ प्रकाशित किये गये हैं वे इन संग्रहो के अधिकारी विद्वानो द्वारा लिखे गये हैं जिससे राजस्थान की वहुत वड़ी ज्ञान-राशि का आधारभूत प्रामाणिक परिचय करवाने में ये सहायक सिद्ध होगे ।

मेरे आग्रह पर जिन विद्वानो ने अपने विद्वतापूर्ण गवेषणात्मक निवन्ध इस प्रयोजन की पूर्ति हेतु लिखकर भेजे हैं मैं उनका हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ और साथ ही यह अपेक्षा करता हूँ कि सरकार अथवा कोई सक्षम सस्था अज्ञात एव अल्प ज्ञात निजी संग्रहों के सर्वेक्षण का कार्य अपने हाथ मे लेगी ताकि समय रहते इस ज्ञान-राशि का परिचय विद्वानो को हो सके और अनेक मूल्यवान ग्रथ नष्ट होने से भी वचाये जा सकें । इस सम्वन्ध मे सरकार के अलावा हमारे यहाँ के विश्वविद्यालयो का भी वड़ा दायित्व है । हिन्दी, राजस्थानी व इतिहास विभाग के अन्तर्गत पजीकृत होने वाले शोध-छात्रो से यह कार्य किसी न किसी रूप मे करवाने की परम्परा डाली जानी चाहिए और इसके लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को उचित साधन उपलव्ध करवाने चाहिये ।

नारायणसिंह भाटी

नाग पंचमी कथा वि० स० ११०६ जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार, जैसलमेर

शतकवृत्ति वि० स० ११५८ राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जा-५

लघुस्तव वि० सं० १३९७ महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, जोधपुर

भुवनदीपक वृत्ति वि० सं० १३२६ पोथीखाना सिटी पैलेस म्यूजियम जयपुर

लोकनालि सूत्र वि० स० १३४७ प्राचीनतम ग्रंथ रा० शो० सं० चौपासनी

जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार, जैसलमेर

सुशील कुमार सूथा

जैसलमेर नगर जैसा[1] अथवा जैसल द्वारा बसाया गया था। जैसलमेर (जैसल का दुर्ग) शब्द की व्युत्पत्ति जैसल तथा मेरू, इन दो शब्दो के योग से हुई है। राज्य के तत्कालीन शासक राव जैसल ने उस समय की राजधानी लौद्रवा को प्रतिरक्षा की दृष्टि से अनुपयुक्त समझ कर दूसरे स्थान पर जैसलमेर के दुर्ग की स्थापना सवत् 1212 सावरण सुद 12 इतवार तथा मूल नक्षत्र मे की थी। (सन् 1155 ई.)[2] आज भी भग्नावस्था मे लौद्रवा जैसलमेर के उत्तर-पश्चिम मे जिले के मुख्यालय से 16 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। जिले का यह क्षेत्र, प्राचीनकाल मे माडधरा अथवा वल्ल मडल के नाम से प्रख्यात था।[3]

राजस्थान बनने के पश्चात् सन् 1949 मे भूतपूर्व जैसलमेर रियासत में जोधपुर रियासत के कुछ भाग मिलाकर, जैसलमेर जिले का निर्माण किया गया।[4]

यह जिला राजस्थान के सुदूर पश्चिम मे स्थित है और भारत के विशाल मरुस्थल थार का बडा भाग है। यह 26°-01′ से 28°-02′ उत्तरी अक्षांस व 69°-29′ से 72°-20′ पूर्वी रेखाश के मध्य स्थित है।[5]

---

1. शर्मा, जी. एन , सौशल लाइफ इन मिडइवल राजस्थान, आगरा, 1969, पृ 49.
2. मू. नै. ख्या., भाग 2, पृष्ठ 279, ख्यात , पृष्ठ 47, तवारीख, पृ. 28, टॉड : राज भाग 2, पृष्ठ 495, वी. वि भाग 2, पृष्ठ 1757, पूर्णचन्द्र नाहर : जै. ले स खण्ड 3, भूमिका, पृष्ठ 5, रिप्रेजेण्टेशन ऑफ जैसलमेर स्टेट 1935 पृ 38.
3. राजस्थान जिला गजेटियर्स, जैसलमेर, 1977, पृ 1
4. राजस्थान जिला गजेटियर्स, जैसलमेर, 1977, पृ 1.
5. स्त्रोत कार्यालय भारतीय सर्वेक्षण विभाग, पश्चिमी वृत कार्यालय, जयपुर, राजस्थान।

   राजस्थान जिला गजेटियर्स, जैसलमेर, 1977, पृ. 1

यह जिला पश्चिम, उत्तर और उत्तर-पश्चिम की ओर पाकिस्तान से सीमित है तथा उत्तर-पूर्व मे बीकानेर जिले से घिरा है। इसके दक्षिण मे बाड़मेर व पूर्व में जोधपुर जिले स्थित हैं।

भारत मे मुगल सल्तनत के स्थापना काल (1526 ई.) से पूर्व का लगभग 250 वर्षो का समय एक स्थिर राजनीतिक शासन का समय नही था। इस काल मे बहुत से वंशों ने शासन किया, जिनमे गुलाम वश, खिलजी वंश, तुगलक वश, लोदि वश और फिर मुगल वश प्रमुख हैं। राजनैतिक अस्थिरता के कारण युद्ध होते रहते थे जिसका प्रभाव जन साधारण तथा धार्मिक जीवन व्यतीत करने वालो पर अधिक पड़ता था। आततायियो के आक्रमणो से धर्मग्रन्थो को बचाने के लिये सबसे अधिक सुरक्षा की दृष्टि से उपयुक्त स्थानों की आवश्यकता को महसूस किया गया।

जैसलमेर के बारे मे यह धारणा प्राचीनकाल से चली आ रही थी कि यह मरुभूमि मे स्थित रेत के टीलों से घिरा हुआ एक रेगिस्तानी प्रदेश है। यहाँ रेत के बड़े बडे टीले, गर्म हवाएँ, आँधिया, काँटे त पत्थर ही दिखाई पडते हैं। इसी कारण बाहरी लोगों का यहाँ पर आना कम हुआ। प्राचीनकाल मे केवल ऊँटो, घोडो व बैलगाड़ियो द्वारा अनेकानेक तकलीफे सहते यात्री बडी कठिनाई से जैसलमेर पहुँच पाते थे।

जैसलमेर को सभी प्रकार से सुरक्षित और उपयुक्त स्थान समझ कर आततायियों के आक्रमणो से धर्मग्रथों को बचाने के लिये खरतरगच्छाचार्य श्री जिनभद्रसूरिजी महाराज ने जैसलमेर दुर्ग स्थित श्री सभवनाथ मन्दिर के भूमिगत भण्डार में हस्तलिखित ताड़पत्रो, पाण्डुलिपियां एवं कागज पर लिखे अमूल्य सग्रह ग्रन्थो का संकलन खभात, पाटण, अणहलपुर आदि विविध स्थानों से करके यहाँ बहुत बड़ा ग्रंथालय स. 1500 में स्थापित किया (1443 ई मे)। यह भण्डार श्री जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार के नाम से प्रसिद्ध है।

खरतरगच्छ की पट्टावली जो 19 वी शताब्दी के अन्त मे, बीकानेर (राजपूताना) के यति क्षमा कल्याणजी ने बनाई है से ज्ञात होता है कि ये खरतरगच्छ की आचार्य परम्परा के 56 वें पट्ट-धर मुख्य शाखा के प्रधान आचार्य थे। खरतरगच्छ की पट्टावली में श्री जिनभद्रसूरि के बारे मे उनके आचार्य बनने तथा भण्डारों को स्थापित करने के बारे मे वर्णन किया गया है।

मूल :—

"तत्पट्टे श्री जिनभद्रसूरयः। तत्प्रबन्धो यथा—प्रथम सं. १४६१ वर्षे सागरचन्द्राचार्येण श्री जिनराजसूरिपट्टे श्री जिनवर्द्धन सूरिः स्थापित ग्रसीत्। स चौकदा जेसलमेरु दुर्गे श्री चिन्तामणि पार्श्वदेव ग्रहे मूलनायक पार्श्वे स्थिता क्षेत्रपालमूर्ति विलोक्य स्वामिसेवकयोत्तुल्यस्थानेऽवस्थानमयुक्तमिति विचिन्त्य च क्षेत्रपालमूर्ति तत उत्पाट्य द्वारे स्थापितवान्। ततः कुपितः क्षेत्रपालो यत्र तत्र गुरूणां चतुर्थंव्रतयंग दर्शयामास। अनया रीत्या एकदा [सूरयः] चित्रकूटे समागतास्त त्रापि देवेन तथैव कृतम्। ततः सर्वेऽपि श्रावकाश्चतुर्थव्रतभङ्ग ज्ञात्वाऽयं पूज्य पदयोग्यो नेति कथयामासुः। अथ वर्द्धमान (वर्द्धन) सूरयो व्यन्तरप्रयोगतो ग्रथिलीभूता सन्त पिप्पलक ग्रामे गत्वा स्थिता, कियन्त शिष्याः पार्श्वे स्थितवन्त। अथ पश्चात् सागरचन्द्राचार्य प्रमुख समस्तसाधुवर्गेण एकत्रीभूय गच्छस्थिति रक्षणार्थं नवीन आचार्य. स्थाप्य इति विचारं कृत्वा, एकं नवीन क्षेत्रपालमाराध्य तं च सर्वदेशेषु सम्प्रेष्य, "यद् यूयं करिष्यध्व तदमास्क प्रमाणम्" इति समस्तखरतरगच्छीयसघस्य हस्ताक्षराणि आनाय्य सर्व साधुमण्डली संमील्य, भणसोलग्रामे आजन्मे। तत्र श्रीजिनराजसूरिभिरेकः स्वशिष्यो वाचक शीलचन्द्रगणिपार्श्वे ग्रध्यापनाय रक्षितोऽभूत्। स चाधीतसकल सिद्धान्तार्थो भणशालिक गोत्रीयो भारो इति मूलनामा सं १४६१ [वर्षे] गृहीतदीक्षः क्रमेण पञ्चविंशतिवर्षाणो जातः। त च योग्यं ज्ञात्वा श्रीसागरचन्द्राचार्यः सप्त भकाराक्षराणि संमील्य सं १४७५ (वर्षे) माघसुदिपूर्णिमास्यां भणसालिक—नाल्हासाहकारित सपादलक्षरूपकव्ययरूपनन्दि महोत्सवेन सूरिपदे स्थापितवान्।

सप्तभकारस्तु अमी—भाणसोलनगरम् १, भणशालिकगोत्रम् २, भादौनाम ३, भरणी नक्षत्रम् ४, भद्राकरणम् ५, भट्टारकपदम् ६, जिनभद्रसूरि-नाम ७। अथैवंविधा अर्बुदाचलगिरजेसलमेरु प्रमुखस्थानेषु बिम्बप्रासादप्रतिष्ठा कारकाः। श्री भावप्रभाचार्यकीर्तिरत्नाचार्यस्थापका। स्थाने स्थाने पुस्तकभाण्डागारस्थापकाः श्री जिनभद्रसूरयः सं. १५१४ मार्गशीर्षवदिनवम्यां कुम्भलमेरुनगरे स्वर्ग प्राप्ताः। तद्वारके सं. १४७४ [वर्षे] श्रीजिनवर्द्धमानसूरितः पिप्लखरतरशाखा निर्गता॥"[1]

अर्थात् :—

जिनराजसूरि के पट्ट पर जिनभद्रसूरि बैठे। उनका वृतात इस प्रकार है। स 1461 के वर्ष मे जिनराजसूरि के पट्ट पर सागरचद्राचार्य ने जिनवर्द्धनसूरि की स्थापना की। ये एक समय जैसलमेर (राजपूताना) गये तो वहाँ के चिन्तामणि-पार्श्वनाथ के मन्दिर मे मूलनायक तीर्थंकर की बराबरी मे बैठी हुई

1 स. मुनिजिनविजय, विज्ञप्तित्रिवेणि, पृ 47-48 जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर

क्षेत्रपाल-देव की मूर्ति देखी। उसे देखकर इनके मन मे विचार हुआ कि क्षेत्रपाल, जो तीर्थंकरो का सेवक है, उसकी प्रतिमा को परमात्मा की प्रतिमा के बराबरी मे बिठाना अयुक्त है; इसलिए इन्होने इस मूर्ति को वहाँ से उठा कर दरवाजे मे रख दी। यह देखकर क्षेत्रपाल कुपित हुआ और जहाँ तहाँ इन आचार्य के ब्रह्मचर्य का भंग दिखलाने लगा। स्त्री का रूप धारण कर रात्रि के समय इनके मकान मे आने जाने लगा। इस तरह कितनेक दिन बीत गये। ये फिरते फिरते चित्रकोट (चित्तोड) गये। वहाँ भी क्षेत्रपाल ने वैसा ही किया जिसे देखकर श्रावकों की श्रद्धा इन पर से उठ गई। थोड़े समय बाद इस व्यतर के प्रयोग से ये भ्रमचित्त (पागल) बन गये। अपने कुछ शिष्यो के साथ पिप्पलगाव मे जाकर स्थिरवास होकर रहने लगे। यह स्थिति देख कर, सागरचन्द्राचार्य आदि समस्त साधु वर्ग एकत्र हुआ और गच्छ की स्थिति को व्यवस्थित रखने के लिये किसी नये आचार्य की स्थापना करने का विचार किया। क्षेत्रपाल की आराधना कर सब जगह के खरतर संघों की इस विषय मे अनुमति मगवाई और फिर सब साधु इकट्ठे होकर भणसोल नामक गांम मे आये। वहाँ पर श्री जिनराजसूरि ने अपने एक शिष्य को, वाचक शीलचंद्र के पास अध्ययन करने के लिये रक्खा हुआ था जो सकल-सिद्धान्तों का अच्छा वेत्ता हो गया था। यह शिष्य भणशाली गोत्रीय था। इसका मूल नाम भादो था। इसने सं. 1461 में दीक्षा ग्रहण की थी। इस समय इसकी कुल उम्र 25 वर्ष की थी। आगन्तु साधुओ ने इसे आचार्यपद के योग्य समझकर, सागरचन्द्राचार्य ने सात भकारो का मिलान कर, स. 1475 मे आचार्यपद दिया। सात भकार इस प्रकार है 1 भणसोल नगर, 2 भणसालि गोत्र, 3 भादो मूल नाम, 4 भरणी नक्षत्र, 5 भद्राकरण, 6 भट्टारक पद और 7 जिनभद्रसूरि (नया) नाम। आचार्य पद का महोत्सव भणसाली सा नाल्हा ने सवा लाख रुपये खर्च कर किया था। इन्होने अपने आचार्यत्व काल मे आबू, गिरनार, जैसलमेर आदि अनेक स्थलो मे, अपने उपदेश से, जिनमंदिर, जिन प्रतिमा ओर प्रासाद-प्रतिष्ठा आदि अनेक धर्म कृत्य करवाये थे। भावप्रभ और कीर्तिरत्न नाम के विद्वानों को आचार्य पदवी प्रदान की थी। अनेक जगह पुस्तक-भण्डार नियत किये थे। इस प्रकार बहुत कुछ शासनोन्नति कर स 1514 के मार्गशीर्ष वदि 9 मी के दिन कु भलमेर (तावे उदयपुर) मे स्वर्गवास प्राप्त किया। इनके समय मे, सं. 1474 मे, जिनवर्द्धनसूरि से पिप्पल-खरतर नाम की खरतरगच्छ की 5वी शाखा निकली।

जैसलमेर दुर्ग मे स्थित श्री सभवनाथजी का मन्दिर तीन वर्ष मे तैयार हुआ था। जिनभद्रसूरि के उपदेश से चौपड़ा गौत्रीय सा. हेमराज पूना वगैरह

ने स. 1494 में इस मन्दिर को बनवाना आरम्भ किया और बडी धूमधाम से प्रतिष्ठा महोत्सव स. 1497 मे कराई। वृद्धिरत्न माला (पृ. 4) मे मन्दिर प्रतिष्ठा का समय स 1487 बताया गया है जो गलत है। क्योकि सभवनाथजी के मन्दिर की प्रशस्ति मे स 1494 मे बनना और 1497 मे प्रतिष्ठा महोत्सव का स्पष्ट उल्लेख है।

मन्दिर की प्रशस्ति पीले पाषाण पर खुदी हुई है। गद्य-पद्यमय 35 पक्तियो का एक बडा लेख है। इसकी लम्बाई 2 फुट 4.5 इंच है व चौडाई 1 फुट 7 इच है।

प्रशस्ति का मूल :—

25 वी पक्ति—**न्वितैरेभिः ।।२।। पंचम्युद्यापनं चक्रे वत्सरे नवतौ पुनः। चतुर्भिर्बांधवैरे भिश्चतुर्धा धर्मकारकैः ।।३।। अथ संवत् १४६४ वर्षे श्री वैरिसिंहराउलराज्ये श्री जिनभद्रसूरीणामुपदेशेन नवीनः प्रास।**

26 वी पंक्ति—**दः कारितः। ततः संवत् १४६७ वर्षे कुंकुमपत्रिकाभिः सर्वदेशवास्त-व्यपरः सहस्र श्रावकानामंत्र्य प्रतिष्ठामहोत्सवः। सा शिवाद्यैः कारितः। तत्र च महसि श्रीजिनभद्रसूरिभिः श्री संभवनाथ प्रभु**

महारावल वैरसी (वयरसिह) [(सं. 1493-1505 (ई 1436-1448)] के शासन काल के अभिलेख वि. स. 1493 से वि स 1498 तक प्राप्त हुए हैं। महारावल वैरसी ने स्वय उपस्थित रहकर शुभ कार्य सम्पन्न कराये थे। वाचनाचार्य सोमकुजरजी ने प्रशस्ति रची, भानुप्रभगणि ने पत्थर पर लिखा और शिलावट शिवदेव ने खोदी थी।

(मूल प्रशस्ति की 33 वी तथा 34 वी पक्तियो में इसका स्पष्ट उल्लेख है)

मूल मन्दिर के अन्दर प्रवेश करते ही बाये हाथ की तरफ एक दरवाजा है जिसमे से बाहर निकलते ही दाहिनी ओर दीवार पर पीले पत्थर पर एक तप पट्टिका खुदी हुई है। इसके शिरोभाग के दोनो तरफ का कुछ भाग (अश) टूट गया है। इसकी लम्बाई 2 फुट 10 इच और चौड़ाई 1 फुट 10 5 इच है। इसमे बांये तरफ प्रथम 24 तीर्थंकरो के च्यवन, जन्म, दीक्षा और ज्ञान चार कल्याणक की तिथियाँ कार्तिक वदि से अश्विन सुदि तक महीने के हिसाब से खुदी हुई है। इसके बाद तीर्थंकरों की मोक्ष कल्याणक तिथियां भी महीनेवार है। दाहिने तरफ प्रथम 6 (छ) तपो के कोठे बने हुए हैं फिर इनके नियमादि

खुदे हुए हैं इसके नीचे वज्रमध्य और भवन मध्य तपो के नक्शे हैं और एक तरफ श्री महावीर तप का कोठा खुदा हुआ है और इन सभी के नीचे दो अंशो मे लेख हैं। (लेख के पोष सुदि में '११' नाणा अभिनदणस्य' और '१४ नाण अजियस्स' खुदे हैं। ये भ्रम है अक ११ के बदले १४ और १४ के बदले ११ होना चाहिये।)

वास्तव मे इस तप पट्टिका को जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार का ही-एक महत्वपूर्ण स्त्रोत गिना जाय तो उचित ही होगा। यह पट्टिका सवत् 1505 मे खोदी गई है तथा जैसलमेर दुर्ग पर चाचिगदेव का शासन बताती है।

तप पट्टिका के नीचे के भाग में मूल—

पंक्ति 6—रूपट्टालंकार श्रीजिनभद्रसूरि विजय राज्ये श्री जेसलमेरु दुर्गे श्री चाचिगदे

पक्ति 7—वे पृथिवीं शासति सति संवत् १५०५ वर्षे

जिस दीवार पर यह तप पट्टिका है वह ज्ञान भण्डार मे प्रवेश करते समय दाहिने हाथ की तरफ है ऐसा प्रतीत होता है कि ज्ञान भण्डार के द्वारपाल के रूप मे इस तप पट्टिका को वहाँ पर स्थापित किया गया हो।

तप पट्टिका के सहारे पाँच-छः सीढियां नीचे की ओर ज्ञान भण्डार के अन्दर ले जाती है। अन्दर पहुँचते ही एक छोटा सा कमरा नजर आता है जिसके मध्य मे स्तम्भ है तथा छत को हाथ बढ़ाकर छुआ जा सकता है दीवारो पर पुराने चित्र कांच के फ्रेमो मे मढे हुए हैं, जो चित्रकला के उत्कृष्ट नमूने हैं। इनमे बहुत से चित्रों पर सोने व चादी का कार्य किया हुआ है। एक छोटे से आले मे पन्ने की लगभग 2.5 से मी. की भगवान् पार्श्वनाथ की मूर्ति सोने के फ्रेम मे रखी हुई है तथा फ्रेम स्वयम् ध्वनि सम्बोधक शब्द की आकृति का बना है।

भण्डार के इसी कक्ष मे काच के एक सन्दूक मे गुरुदेव दादा साहब श्री जिनदत्तसूरिजी के स्वयं के ओढने की 821 वर्ष पुरानी चादर, मुहपत्ती व चोलपट्टा आज भी सुरक्षित है। पूर्व मे ये वस्तुएँ अजमेर से ले जाकर पाटण के भण्डार में सुरक्षित रखी गई थी। जैसलमेर मे महामारी का प्रकोप होने पर पाटण के श्री सघ से विनीत कर ये वस्तुएँ जैसलमेर मंगवाई गई थी। इनके प्रक्षाल के जल को जैसलमेर के परकोटे पर छिड़का गया था।[1]

---

1. मुनिराज श्री प्रकाश विजय, जैसलमेर पच तीर्थी का इतिहास, पृ 69
2. वही, पृ सं 68

इन वस्तुओ के बारे मे मान्यता है कि गुरुदेव के अन्तिम सस्कार के समय ये वस्तुएँ अग्निसात होने से बच गई ।[2] गुरु भक्तों ने उन्हे आज तक सुरक्षित रखा है ।

जिन सीढियो से भण्डार मे प्रवेश करते हैं उसके बिल्कुल सामने की दीवार के एकदम बाये हाथ को सतह से लगता हुआ एक छोटा दरवाजा है जिसकी लम्बाई 2 5 फुट है तथा चौड़ाई 2 फुट है से अन्दर प्रवेश करना पड़ता है । यह दरवाजा सख्त लोहे की सलाखो का बना है । अन्दर प्रवेश करते ही करीब 12 फुट लम्बा व सात (7) फुट चौड़ा कक्ष नजर आता है जिसमें लोहे की करीब 4 या 5 अलमारियां है इन्ही अलमारियो मे एल्यूमिनियम के डिब्बों मे बहुत ही सावधानीपूर्वक ताड़पत्रीय ग्रथों को रखा गया है ।

प्रत्येक ताडपत्र के मध्य एक छिद्र है तथा प्रत्येक ताड़पत्र पर पत्र संख्या अंकित है । एक मोटे धागे को उनमे पिरोया गया है तथा प्रथम व अन्तिम ताड़पत्रो के ऊपर लकडी की पट्टिका ताड़पत्रों के समान ही लम्बी व चौडी लेकिन कुछ मार्जन अधिक है । सम्पूर्ण ग्रन्थ को उसी मोटे धागे से कस कर अच्छी तरह लपेटा गया है । इस ग्रन्थ को कपड़े मे अच्छी तरह तीन ओर से कस कर चौथी ओर से बहुत लम्बी डोरियो को उन पर लपेटा गया है ।

अभी हाल ही मे इनके ऊपर भी पौलीथीन की खोलियाँ चढा कर रबड के छल्ले चढा कर और अधिक सुरक्षित बना दिया गया है । इससे आर्द्रता व दीमक आदि के प्रभाव की सम्भावनाएँ समाप्त हो गयी है ।

इस भण्डार के जीर्णोद्धार तथा सूचीकरण के समय मे आगम प्रभाकरजी मुनि श्री पुण्य विजयजी महाराज सा (स 1952-2027) को दो प्राचीन सूचिये प्राप्त हुई है । इनमे से एक वि. स. 1809 पोष सुदि 4 की है तथा दूसरी सूचो स. 1941 पोष सुदि 11 रविवार की है । यह सूची कपडवजर (गुजरात) के सेठ नीहालचद भाई नत्थू भाई की तरफ से आण सूरगच्छाधिपति विजयगुण-रत्नसूरि की मारफत सुरत निवासी श्री मोतीचदजी ने की है ।

इससे यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन समय से पूर्व ग्रथो की कितनी सख्या थी व किस बण्डल (पोथी मे) मे कितने ग्रन्थो की सख्या है ज्ञात नही था । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही ग्रन्थो के सूचीकरण का कार्य किया गया होगा ।

इस भण्डार के सूचीकरण का कार्य आगम प्रभाकर मुनि श्री पुण्य विजयजी ने किया है तथा लाल भाई दलपत भाई भारतीय सस्कृति विद्यामदिर अहमदाबाद-9 से प्रकाशित हो चुका है। (L. D Series 36)

इस भण्डार मे उपलब्ध ग्रन्थों का विवरण इस प्रकार है—

ग्रन्थो की संख्या (1) ताड़पत्रीय 426
(2) कागज 2257

लेखन सवत् ताडपत्र (1) प्राचीन वि. स. 1115 (1048 AD)
(2) अर्वाचीन वि. सं 1747 (1690 AD)

कागज (1) प्राचीन वि. स. 1246 (1189 AD)
(2) अर्वाचीन वि. स. 1986 (1929 AD)

ताड़पत्रीय ग्रन्थो की लम्बाई व चौड़ाई
(1) अधिकतम लम्बाई 39 5″ (इंच) (2) न्यूनतम लम्बाई 8 5″ (इच)
(3) अधिकतम चौड़ाई 4 5″ (इच) (4) न्यूनतम चौडाई 1.5″ (इच)

चित्र पट्टिकाएँ—

ग्रथो के अतिरिक्त 36 चित्र पट्टिकाएँ है जिनमे विशिष्ठ शलाका चित्र पट्टिका सर्वोत्तम है।

ग्रन्थो की भाषा—

प्राकृत, मागधि, सस्कृत, अपभ्रंश, ब्रज, गुजराती तथा मरु भाषा।

ग्रन्थो के विषय—

जैन साहित्य, वैदिक साहित्य, बौद्ध साहित्य, न्याय, अर्थशास्त्र, कोष, वैद्यक, ज्योतिष, दर्शन, मीमासा आदि।

कुछ विशेष ग्रन्थो के नाम—

भगवती सूत्र, नैषघ चरित महाकाव्य, नागानन्द नाटक, अनर्घ राघव नाटक, वेणीसहार नाटक, वासवदता, भगवद्गीता भाष्य, पातन्जली योग दर्शन, कौटिल्य अर्थ शास्त्र, शृंगार-मंजरी, काव्य मीमांसा आदि।

प्राचीन ताड़पत्रीय ग्रन्थ—

विशेषावश्यक महाभाष्य पत्र 284। भा. प्रा। क. जिनभद्रगणि क्षमाक्षमण। गा 4300। ले. स अनु 10 शताब्दी पूर्वार्घ। सह. श्रेष्ठ। द. श्रेष्ठ। लं. प. 16.5″ × 2″।

इस ग्रन्थ का क्रमांक 116 है।

ग्रथ का अन्त इस प्रकार है—

सव्वाणुयोगमूलं भास सामाइयस्स [सोतूणं] ।
होति परिकम्मियमती जोग्गो सेसाणुयोगस्स ।।

पंच सता इगितीसा सगणिवकालस्स वट्टमाणस्स ।
तो चेत्तपुण्णिमाए बुधदिण सातिम्मि णक्खते ।।

रज्जाणुपालणपरे सी [लादि] च्चम्मि णरवरिन्दम्मि ।
वलभीणगरीए इयं महृदि [सिरि] संतिजिण भवणे ।।

।। गाथाग्रं चत्तारि सहस्साणि तिण्णि सताणि ।।

लेखन कला की दृष्टि से यह ग्रन्थ असाधारण महत्व का है परन्तु ग्रन्थ मे लेखन समय अनुमान के आधार पर दिया गया है ।

एक दूसरा ग्रन्थ ओधनिर्युक्ति वृति-द्रोणाचार्य रचित वि. स 1117 मे लिखी हुई है । इस ग्रन्थ की सख्या 84 है । कुल पृष्ठो की सख्या 105 है अपूर्ण है । पत्र सख्या 10, 46 नही है । पत्र सख्या 105 पर मल्ल लडते हाथियो के चित्र है ।

कागज का प्राचीनतम ग्रन्थ—

भण्डार के पोथी 79 मी मे ग्रथ सख्या 1324 मे दो ग्रथ है तथा दोनो ही ग्रथ समकालीन है ।

पहला ग्रन्थ सूक्ष्मार्थ विचारसार प्रकरण है जिसकी भाषा प्राकृत है जिसके कर्त्ता चक्रेश्वरसूरि है । यह ग्रन्थ पत्र न 1 से 73 मे है तथा स 1246 मे (1189 AD) लिखा गया है ।

दूसरा ग्रन्थ षड्शीतिप्रकरण चतुर्थ कर्म ग्रथ टिप्पनकसह है जो पत्र स. 74 से 105 मे है । इसकी भाषा प्राकृत है । मूलकर्त्ता जिनवल्लभगणि है तथा टीकाकर्त्ता रामदेवगणि है । स्थि. श्रेष्ठ है । ल प 8 5×9 75" (इच) है तथा स. 1246 मे (1189 AD) लिखा गया है ।

भारतीय प्राचीन लिपि की दृष्टि से कुछ ऐसे ग्रन्थ भी यहाँ उपलब्ध हुए है जिनकी सचित्र और शुद्ध प्रतिलिपि अन्यत्र उपलब्ध नही है विशेषकर श्री दशवेकालिक आदि ग्रन्थ और भगवान श्री पार्श्वनाथ के पंच कल्याण के 20 चित्र, चित्रकला की दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण है ।

मूल अर्द्ध मागधी के अन्य ग्रथ, उनकी निर्युक्ति, भाषा और टीकाओ के विशिष्ट हस्तलेख इस भण्डार से प्राप्त हुए है। आचाराग सूत्र, सूत्र कृताग, स्थानाग, समवयाग, भगवती सूत्र, भगवती प्रशस्ति आदि आगम ग्रन्थो की कई कई प्रतियाँ इस भण्डार मे विद्यमान है। इस ज्ञान भण्डार मे साख्य, मीमासा, वैशेपिक, न्याय, योग आदि भारतीय दर्शन एव काव्य, अलकार, छन्द, कथा, आख्यायिका, कोष, व्याकरण आदि विषयो के चुने हुए अनेक ग्रन्थ सगृहीत है।

12 वी और 13 वी शताब्दी मे लिखे ताड़पत्रीय ग्रथो की अधिकता है।

प्राचीन पाण्डुलिपियो मे कुवलयमाला, काव्य मीमासा (राजशेखर) काव्यदर्श (सोमेश्वर भट्ट) काव्य प्रकाश (मम्मट) एव श्री हर्ष का नैषधचरित के नाम विशेष उल्लेखनीय है। इसी भण्डार मे विमलसूरि के पउमचरिय (1141 स) हितोपदेशामृत (स. 1253) वासुदेव हिण्डो, शान्तिनाथ चरित (देवचन्द्रसूरि), नैषधटीका (विद्याधर), मुद्राराक्षस नाटक (विशाखदत्त) विशेष उल्लेखनीय है।

जैसलमेर दुर्ग में जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार के अलावा भी कुछ और भण्डार है। वर्तमान समय मे इन सभी भण्डारो का एकीकरण कर दिया गया है तथा अलग अलग भण्डारो से ग्रन्थो की सख्या बहुत अधिक प्राप्त की गई है। कुछ भण्डारो मे इने गिने ताडपत्रीय ग्रन्थ भी प्राप्त हुए है। लेकिन कम सख्या मे होते हुए भी प्राचीनता के दृष्टिकोण से इनका अलग महत्व है। तपागच्छीय ज्ञान भण्डार से एक ताड़पत्रीय ग्रथ प्राप्त हुआ है। इस ग्रथ का क्रमांक 1 है।

पचाशक प्रकरण जिसकी भाषा प्राकृत है तथा कर्त्ता हरिभद्रसूरि है। ले स. 1115 (1048 AD) का लिखा है।

अन्त—सवत् १११५ वर्षे लिखिता।

अलग अलग भण्डारो में ग्रन्थो की सख्या—

(1)	यति श्री डूगरजी के भण्डार मे	1378
(2)	तपागच्छ के भण्डार में	1274
(3)	लोकागच्छ के भण्डार मे	688
(4)	थाहरूशाह के भण्डार मे	476
(5)	आचार्य गच्छ के भण्डार मे	192

अतः लगभग 4008 कागज के ग्रथ और प्राप्त हुए है तथा वर्तमान समय में इन सभी ग्रन्थो को जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार मे समाविष्ट कर लिया गया है ।

इन ग्रन्थो में जैन आगम के लगभग 1000 ग्रन्थ है जैन तात्विक व औपदेशिक के ल. 1000 ग्रन्थ है । जैन भक्ति व क्रिया के ल. 900 ल 675 के इतिहास, भूगोल व वृतान्त के है । ल 60 ग्रन्थ जैनेत्तर धार्मिक ग्रन्थ है ।

लगभग 400 के व्याकरण, छदालकरण, काव्य शास्त्र, कोश, न्याय व साहित्यिक ग्रथ है ।

लगभग 240 के ज्योतिष, निमित्त विधाये, मन्त्र तन्त्र, वैद्यक तथा अवर्गीकृत ग्रन्थ है ।

महत्व—

प्रारम्भ मे जो जैन श्रमण वर्ग श्रुतज्ञान को लिपिबद्ध करने के विपक्ष मे था वह समय के अनुकूल उसे परम उपादेय मानने लगा और देवर्द्धि गणि क्षमाक्षमण के समय से ज्ञानोपकरण का सविशेप प्रयोग करने के लिए उपदेश देने लगा । वर्तमान समय मे हमारे सामने तत्कालीन लिखित वाङ्मय का एक पन्ना भी उपलब्ध नही है । अतः वे कैसे लिखे जाते थे, कैसे उनका सशोधन किया जाता था । कहाँ और किस प्रकार रखा जाता था । इस विपय मे प्रकाश डालने का कोई विशेप साधन नही है । गत लगभग एक हजार वर्प के ग्रन्थ व ज्ञान भण्डार विद्यमान है, जिससे ज्ञात होता है कि श्रुतज्ञान की अभिवृद्धि मे जैन श्रमण और श्रावक वर्ग से सविशेप योगदान किया था । इस दिशा मे श्री जिनभद्रसूरि का योगदान विशेप उल्लेखनीय है ।

वाचनाचार्य श्री गुणविनयगणि ने अपने 'सवोधसत्तरी' के विवरण के अन्त की प्रशस्ति मे इनका उल्लेख करते हुए लिखा है कि[1]—

श्री ज्ञानकोशलेखनदक्षा जिनभद्रसूरयो मुख्याः ।
तत्पट्टे सआतास्ततोऽद्युतन् दिव्यगुणजाताः ।।१७।।

पाटन के वाडीपुर-पार्श्वनाथ के मन्दिर की प्रशस्ति मे भी इस बात का उल्लेख है[2]—

"स्थान(ने) स्थान(ने) स्थापितसारज्ञानभाण्डागार—श्री जिनभद्रसूरि—"

(Epigraphia indica, Vol. I, XXXVII)

---

1 स मुनि जिनविजय, विज्ञप्ति त्रिवेणि , जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर, पृ 57
2 वही, पृ 57

जिनभद्रसूरि के पूर्व मे ताडपत्रो पर ही ग्रन्थो के लिखने की प्रथा थी। इनकेसमय मे बहुत बडा परिवर्तन हुआ। यह परिवर्तन कागज की प्रवृति वढ़ने के कारण हुआ, कागज ने ताडपत्रो का स्थान ले लिया। अत: ताडपत्रो पर जितने भी ग्रन्थ लिखे थे उनकी नकले कागज पर की गई। जैसलमेर का प्रदेश मरुस्थल होने के कारण बहुत विषम है इसलिये गुजरात की अपेक्षा, मुसलमानों के उद्वेगजनक आक्रमण वहा कम होते थे। इस स्थिति का विचार कर, पुराने आचार्यो ने गुजरात मे से वहुत सी पुस्तक जैसलमेर पहुँचा दी थी। जैसलमेर खरतरगच्छ का प्रधान स्थान था। जिनभद्रसूरि इस गच्छ के नेता थे। इसलिये ये सब पुस्तके इनके स्वाधीन थी। सं 1475 से 1515 तक 40 वर्षो में लाखो ग्रथो को लिखवाया और उन्हे भिन्न भिन्न भण्डारो मे रखवाया।

प्राय कर के बहुत सी पुस्तकों के अन्त में जिनभद्रसूरि का जिक्र और जिस श्रावक ने उसे लिखवाई उसका उल्लेख किया हुआ मिलता है।

जैसे—

पोथी नं 1, ग्रन्थ सख्या 7 के अन्त में—

संवत् १४८६ वर्षे पोष वदि ३ शुक्रे श्रीखरतरगच्छे श्री जिनभद्रसूरि शिष्य सुमतिसेन श्रा. तेजा. ल.।

पोथी न. 2, ग्रन्थ सख्या 16 के अन्त में—

स्वस्ति। संवत् १४८६ वर्षे कार्तिक मासे कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां तिथौ गुरुदिने स्वातिनक्षत्रे प्रीतियोगे भट्टारक प्रभुश्री [जिनभद्र] सूरि पुस्तक भण्डारे ज्ञातधर्म कथांगटीका मंत्रि आसा लिखित ।।छ।।श्री।।

पोथी न. 3 ग्रन्थ सख्या 34 के अन्त मे—

स्वस्ति संवत् १४८८ वर्षे प्रथम आषाढ वदि ३ सोमेऽद्येह श्रीपत्तने खरतरगच्छे भट्टारक प्रभु श्री जिनभद्रसूरिणा विजयराज्ये भांडागारे श्री ब्रहत्कल्पटीकाया तृतीयखंड समाप्तं। प्रतिशुद्धं कृत ।।छ।।

पोथी न 7 ग्रथ संख्या 74 के अन्त मे—

सवत् १४९६ वर्षे चैत्र सित पूर्णिमास्यां भृगुदिने जैसलमेरौ खरतरगच्छाधीश श्री जिनभद्रसूरिवरैः पुस्तकमिद लेखितम्। लिखितं च विप्रपञ्चाननेन ।।छ।। शिवमस्तु सर्वजगतः ।।छ।। मंङ्गल महाश्रीः ।।छ।।श्री।।

• जिनभद्रसूरि ने, विद्वता के प्रमाण मे ग्रन्थो की रचना की हो ऐसा प्रतीत नही होता। दूसरे आचार्यो के जैसे नये नये ग्रन्थ तथा पुराने ग्रन्थो पर टीका-टिप्पनादि लिखे हुए मिलते है वैसे इनकी कोई विशेष कृतिया उपलब्ध नही होती। और न ही कही पर इस विषय का उल्लेख भी देखने मे आया। एक ग्रंथ इनका बनाया हुआ ज्ञात हुआ है। इसका नाम 'जिनसत्तरी प्रकरण' है।[1] यह प्राकृत में है तथा गाथाबद्ध है इसकी कुल गाथाये 220 है। इसमे 24 तीर्थकरो के पूर्वभव सख्या, द्वीप, क्षेत्र, विजय, नगर, नाम और आयु आदि 70 बातो की सूची है इसके अन्त मे इन्होनें अपने गुरु का तथा निज का नामोल्लेख किया है—

> "गणहर सुहम्मवंसे कमेण जिणरायसूरिसीसेहिं।
> पमरणमिणं हियट्ठं रइयं जिणभद्दसूरिहिं॥"[2]

श्री हरिभद्रसूरि ने 'भागदृष्टि समुच्चय' मे 'लेखना पूजना दान' द्वारा पुस्तक लेखन को योग भूमिका का अग बताया है। 'मण्ह जिणाण आठ' सज्झाय मे पुस्तक लेखन को निम्नोक्त गाथा मे श्रावक का नित्य कृत्य बतलाया है।

> संघोवरि बहुमाणो पुत्थयलिहणं पमावणा तित्थे।
> सड्ढाणकिच्चमेयं निच्च सुगुरुवएसेण॥५॥

जैन शासन के कर्णधार जैनाचार्यो ने शास्त्र निर्माण व लेखन कार्य को परम्परागत बनाये रखा तथा उनकी साहित्य सरक्षण की प्रवृति के कारण ही यह जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार सुरक्षित है जो भारतीय सस्कृति की अमूल्य निधि है।

1. विज्ञप्ति त्रिवेणी., सं. मुनिजिन विजय, जैन आत्मानन्द सभा भावनगर, पृ. 66
2. वही, पृ. 66

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान का ग्रंथागार : सिंहावलोकन

डॉ. डी. बी. क्षीरसागर
ब्रजेश कुमार सिंह

भारत की प्राचीन सस्कृति की अमूल्य धरोहर के रूप मे अनेकानेक विषयो पर उपलब्ध होने वाली पाण्डुलिपि की सामग्री पर विशेषत: राजस्थान मे उपलब्ध हुई पाण्डुलिपियों के प्रसग मे यह बात स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आती है कि जब राजस्थान की भूमि पर सतत युद्ध चलते रहने के उपरान्त भी अनवरत साहित्य-सर्जना चलती रही। जहाँ राज्याश्रय मे कवि और पण्डितो ने साहित्य का सृजन किया, वही चारण परम्परा मे राजस्थान के इतिहास को सुरक्षित रखा है साथ ही जैन आचार्यो तथा उनके उपाश्रयो मे चातुर्मासिक अध्ययन की परम्परा मे सहस्रो ग्रथो का लेखन हुआ तथा धर्मोपदेश मूलक साहित्य का निर्माण हुआ। अध्ययन के विभिन्न आयामो में प्राय. सभी विषयो से सम्बन्धित ग्रन्थ रचना को जन्म दिया। मध्यकाल का समय भक्ति के पुनर्जागरण का समय है और इस दृष्टि से दादूपथी और राम स्नेही सम्प्रदायो के मठों मे भी भक्त कवियो द्वारा नवीन ग्रन्थो के निर्माण के साथ ही महाभारत और भागवत जैसे विशालकाय ग्रन्थो के किये गये पद्यानुवाद आज स्वतन्त्र काव्य के रूप मे प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके है। ग्रन्थ प्रणयन और सरक्षण की इसी प्रदीर्घ पार्श्वभूमि पर उपलब्ध हुए ग्रन्थो के सरक्षण, सम्पादन और प्रकाशन की महती आवश्यकता का अनुभव करते हुए स्वतन्त्रता के पश्चात् राजस्थान सरकार ने पुरातत्त्वाचार्य मुनि श्री जिनविजय जी की सत्प्रेरणा से सर्वप्रथम 'सस्कृत मण्डल' की स्थापना सन् 1950 मे की गई। तदुपरान्त 'सस्कृत मण्डल' का विलीनीकरण होने के पश्चात् पाण्डुलिपियो के अध्ययन, शोधादि की दृष्टि से जयपुर मे 'राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर' की मुनि श्री जिनविजय जी के निर्देशन मे स्थापना सन् 1954 ई. मे हुई।

पुरातत्त्व मन्दिर का पुनर्गठन एव स्वतन्त्र स्थायी विभाग के रूप मे सन् 1956 मे इसका नामकरण 'राजस्थान पुरातत्त्वान्वेषण मन्दिर' किया गया। इससे पूर्व ही 1 अप्रेल सन् 1955 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति माननीय डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी ने इस विभाग के मुख्यालय भवन का जोधपुर मे शिलान्यास किया। भवन का निर्माण कार्य पूर्ण होने पर 14 दिसम्बर 1958 को राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमन्त्री माननीय श्री मोहनलाल सुखाडिया ने इस भवन का उद्घाटन किया। तब विभाग का जयपुर स्थित मुख्यालय जोधपुर स्थानान्तरित किया गया।

जोधपुर के मुख्यालय तथा एकमात्र शाखा कार्यालय के कार्यक्षेत्र को बढाने की दृष्टि से और इतस्ततः बिखरी पाण्डुलिपि सम्पदा के अधिग्रहण तथा सरक्षण की दृष्टि से सन् 1961-62 मे बीकानेर, कोटा, अलवर, उदयपुर व टौंक मे विभाग के शाखा कार्यालयो की स्थापना की गई। इन शाखा कार्यालयों मे तत् तत् स्थानो मे सगृहीत राजकीय पुस्तकालयों तथा निजी संग्रहो से ग्रथ प्राप्त करके कार्य को प्रारम्भ किया गया। सन् 1962-63 मे चित्तौड़गढ़ में ग्रन्थ-स्वामियो से ग्रथ भेट-स्वरूप प्राप्त करके शाखा कार्यालय की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त आलोच्य वर्ष में राजस्थान के पूर्वी भाग व्रज प्रदेश में शतावधि प्रकीर्ण ग्रथो के सरक्षण की दृष्टि से भरतपुर मे भी शाखा कार्यालय की स्थापना की गई है, जहाँ पर निकट भविष्य में पाच हजार से अधिक ही राजकीय पुस्तकालय भरतपुर तथा अन्य निजी सग्रह स्वामियों एवं सस्थाओ से ग्रन्थ विभाग के लिए मिलने की आशा है।

प्रारम्भ से लेकर अब तक मुख्यालय जोधपुर तथा जयपुर, अलवर, कोटा, बीकानेर, उदयपुर एव चित्तौडगढ शाखा कार्यालयों मे ग्रथो को खरीद करके, सरस्वती लाइब्रेरियो, राजकीय पुस्तकालयो तथा ग्रन्थ स्वामियों से स्थानान्तरण एव भेट स्वरूप प्राप्त करके ग्रन्थो की कुल सख्या अब 1,00,267 हो गई है। इस बृहत्काय भण्डार का शोध जगत् को लाभ हो सके इस दृष्टि से उनके सूचीकरण, सम्पादन तथा प्रकाशन योजना को वैज्ञानिक रीति से क्रियान्वित करते हुए विभाग ने अत्यधिक गति प्रदान की है। इन मुख्य प्रवृत्तियो के अन्तर्गत विभाग ने 20,000 बीस हजार प्रकाशित सन्दर्भ पुस्तकों का सग्रह भी किया है।

विभाग मे सगृहीत हस्तलिखित ग्रथो के आधार पर 155 महत्वपूर्ण ग्रथो को सम्पादित कर प्रकाशित किया है जिनमे सस्कृत-प्राकृत एव हिन्दी-राजस्थानी के सूचीपत्र भी शामिल है। इसके अतिरिक्त अनेक ग्रन्थो एव सूचीपत्रों का मुद्रण कार्य प्रेसो मे चल रहा है। इस प्रकार विभाग ने शोध जगत् के विद्वानो के उपयोगार्थ सामग्री उपलब्ध कराने मे महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त की है। शोध विद्वानो तक विभिन्न तरह की उपयोगी शोध सामग्री पहुँच सके इस निमित्त आलोच्य वर्ष 1984-85 से एक 'रिसर्च जर्नल' निकालने का कार्य भी विभाग ने प्रारम्भ कर दिया है जिसका प्रथम अक प्रकाशित हो रहा है। पुरातत्त्वाचार्य मुनि श्री जिनविजय जी के पश्चात् डॉ फतहसिंह जी, डॉ दशरथ शर्मा, डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा, श्री जे. के. जैन प्रभृति विद्वानो ने निदेशक पद पर रहते हुए विभाग की गतिविधियो को सचालित किया है। वर्तमान मे डॉ पद्मधर पाठक के निर्देशन मे सचालित मुख्यालय तथा उपर्युक्त उल्लिखित शाखा कार्यालयो मे सगृहीत ग्रन्थ सग्रह के विशिष्ट विवरण के सम्यक् परिचय की दृष्टि से तत्तद् ग्रथ सग्रह के अनुसार उनका सक्षिप्त परिचय यहाँ पर दिया जाना समीचीन होगा—

1 मुख्यालय जोधपुर सग्रह—

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान का मुख्य कार्यालय जोधपुर विश्वविद्यालय के केन्द्रीय कार्यालय के पास राजेन्द्रमार्ग पर स्थित है। इस सग्रह मे 40,988 हस्तलिखित ग्रंथ, 981 प्रतिलिपियाँ तथा 273 फोटो प्रतियाँ सगृहीत है। ये फोटो प्रतियाँ जैसलमेर मे स्थित 'जैन ज्ञान भण्डार' के अन्तर्गत 258 विशिष्ट ग्रथो मे उपलब्ध 336 महत्वपूर्ण रचनाओ की 7,862 प्लेट्स है। मुख्यालय के इस सग्रह मे से 37,500 अधिग्रहणाक तक के उपलब्ध सस्कृत-प्राकृत ग्रथो का सूचीपत्र विभिन्न जिल्दो मे विभाग द्वारा प्रकाशित किया जा चुका है। इसी प्रकार 15,673 तक के ग्रथो मे उपलब्ध हिन्दी राजस्थानी एव भाषा ग्रथो के सूचीपत्र प्रकाशित किये जा चुके है तथा शेष हिन्दी राजस्थानी व सस्कृत-प्राकृत ग्रथो के सूचीपत्रो को शीघ्र ही प्रकाशित करवाने का कार्य चल रहा है।

शोधार्थियो के पाठ-सम्पादन इत्यादि मे उपयोगार्थ अधिकाधिक ग्रथो की फोटो कापी उपलब्ध करा कर सहयोग प्रदान किया जा सके, इस दृष्टि से विभागीय स्तर पर व्यवस्था उपलब्ध है, जिससे वे शोधार्थी भी लाभान्वित हो रहे हैं जो यहाँ उपस्थित नही हो सकते। शोध अध्ययन मे सन्दर्भ ग्रथो की

उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए स्वतन्त्र सन्दर्भ पुस्तकालय की भी स्थापना की गई है। इस पुस्तकालय मे अब तक अनेकानेक दुर्लभ पुस्तको का सग्रह किया गया है। प्रतिष्ठान के संग्रह के महत्त्वपूर्ण ग्रथो के साथ ही अन्यान्य स्थानो पर सगृहीत महत्त्वपूर्ण ग्रथो की उपलब्धि के लिए 'फोर्ड फाउण्डेशन' के आर्थिक सहयोग से एक माइक्रोफिल्म युनिट की भी स्थापना की गई है, जिससे इस प्रकार की पाण्डुलिपियो को उपलब्ध करने-कराने का कार्य आगामी सत्र 85-86 से प्रारम्भ किया जा रहा है। विभाग द्वारा प्रारम्भ की गई 'राजस्थान पुरातन ग्रथमाला' के प्रकाशन बहुत ही कम मूल्य पर शोध जगत् को उपलब्ध कराने के लिए प्रकाशन विभाग के साथ ही बिक्री विभाग को भी कायम किया गया है।

जोधपुर मुख्यालय के विशाल हस्तलिखित ग्रन्थ सग्रह मे सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, हिन्दी, राजस्थानी एव अन्य भाषाओ के विभिन्न लिपियो मे लिपिबद्ध विविध विषयो के ग्रथ, खरडे, पट्ट आदि सगृहीत है। इस सग्रह मे वेद, वेदाग, स्मृति, इतिहास, पुराण, दर्शन, बौद्धग्रन्थ, जैन, भक्ति, तन्त्र, आगम, मन्त्रशास्त्र, काव्य, व्याकरण, कोश, छान्दस् शास्त्र, अलकार, नाट्य, सगीत, शिल्प, अर्थ-शास्त्र, राजशास्त्र, रत्नशास्त्र, कामशास्त्र, आयुर्वेद एव ज्योतिष आदि विषयो के ग्रन्थ विद्यमान है।

धर्मशास्त्रीय ग्रन्थो मे जयसिंह कल्पद्रुम, कान्हदेव व्यास कृत मेवाड उद्वाह पद्धति जहाँ सस्कारों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, वही निम्बार्क सम्प्रदाय से सम्बन्धित धरणिराम कृत सिद्धान्त ज्योत्सना और वाक्धरभूषण कृत यजुर्मजरी वेद के धार्मिक कृत्यों के भाष्य के लिए महत्त्वपूर्ण है। इस सग्रह मे नवीन उपलब्ध होने वाले सस्कृत के महाकाव्यो मे कामाभिनन्दन महाकाव्य, मुकुन्द-विलास महाकाव्य, पाण्डवचरितम्, प्रद्युम्नचरित्र, मुकुन्दविजय महाकाव्य, ईश्वरविलास महाकाव्य, नलोदय, सूरसिंह वश प्रशस्ति, अभिनन्द कविकृत राम-चरित्र महाकाव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कतिचित् अतिप्रसिद्ध महा-काव्यो पर मिलने वाली दुर्लभ टीकाएँ इस सग्रह की विशेषता है। शिशुपालवध महाकाव्य पर इस सग्रह मे सरस्वती तीर्थ, दिनकर मिश्र, हरिदास एव ललित कीर्त्तिगणि की अवचूरि तथा दिनकर मिश्र की सर्वानुवादिनी टीका भी छात्रो की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार रघुवंश महाकाव्य पर न्यूनाधिक पूर्ण रूप से 20 से अधिक टीकाएँ उपलब्ध है जिनमे चारित्र्यवर्धन, धर्ममेरुगणि, गुण-विनयगणि, समयसुन्दर, क्षेमहस, चरणधर्म तथा सुमतिविजय आदि की जैन

टीकाएँ प्रतिलिपि समय की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। किरातार्जुनीय की प्रसन्नसाहित्य चन्द्रिका टीका भी अप्रकाशित होने के साथ ही पूर्ववर्त्ती टीकाग्रो के साररूप होने से महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

नाटक साहित्य मे विश्वनाथदेव कृत आनन्द रघुनन्दन, रामनाटक, अज्ञातकर्तृक रामहनुमान्नाटक, धर्मविजय नाटक, माधवानल नाटक, अपेक्षाकृत प्राचीन उत्तररामचरित की प्रतिलिपि, श्रीकृष्णभक्ति नाटिका महत्त्वपूर्ण है। इनके अतिरिक्त रूपको के एक प्रकार 'भाण' भी यहाँ उपलब्ध हुए है। चूँडाजी पंत का मदनसजीवन, काशीपति मिश्र का मुकुन्दानन्द भाण तथा युवराज कवि का रससदन भाण प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। महाकाव्य और नाटक के अतिरिक्त लघुकाव्य भी यहाँ प्रचुर रूप मे विद्यमान हैं। भर्तृहरिशतक की कई टीकाएँ, सगीतमाधव, राधासुधानिधि, गोविन्द विरुदावलि, अन्योक्ति मौक्तिक, प्रेमपत्तन, अमरूक शतक की कलाधरसेन की टीका, श्रीनाथ व्यास कृत शतकत्रयी एव नागराजशतक आदि प्रमुख है।

गद्य और पद्य दोनों मे ही सरस अभिव्यक्ति से युक्त चम्पू काव्यो मे वेकटाध्वरिन, पारिजात चम्पू, गोपालचम्पू के नाम उल्लेखनीय हैं। साहित्य शास्त्र मे काव्यप्रकाश की रचना के निकटस्थ समय की संकेत टीका एव पुष्टिमार्गीय काव्यविवेचन की परम्परा मे कविराज चक्रवर्ती कृत रसमकरन्द, मध्यकालीन रीतिकाल के प्रभाव से प्रभावित-सा भोज की परम्परा मे शृगार रस की श्रेष्ठता को प्रतिपादित करता है। धर्मनख्यात्रान का साहित्यरत्नाकर, मुग्धमेधालंकार की अज्ञात टीका, काव्यकौस्तुभ जहाँ अपनी नवीनता के कारण महत्त्वपूर्ण है, वहाँ अलकारशेखर अपनी पाठ भिन्नता के कारण विद्वानो के लिए आकर्षण का विषय है।

प्रतिष्ठान मे सगृहीत सगीतशास्त्र के ग्रन्थो मे बीकानेर के पण्डित भावभट्ट कृत अनूपसगीतरत्नाकर, अनूपविवेक और अनूपविलास, अनेकदेशीय पण्डितो द्वारा रचित सगीत शिरोमणि, नृत्यराघवमिलन, फकीरचन्द चौहान कृत वाद्य-विवेक विलास, मयराम कृत सुरतरगिणी, गिरधर मिश्र कृत रागमाला कुछ ऐसे ग्रथ हैं जो केवल शार्ङ्गधर कृत सगीत रत्नाकर के मात्र अनुयायी ही नही हैं। इसके अतिरिक्त जनार्दन भट्ट की अलापमजरी, आमेर नरेश के आश्रय मे पौण्डरीक विट्ठल द्वारा प्रणीत नर्तन निर्णय, रागमाला, रागमजरी, सद्राग चन्द्रोदय,

सगीत वृत्तरत्नाकर तथा विट्ठलीय ग्रन्थमाला मध्यकालीन सगीत पर प्रकाश डालने वाले ग्रथो मे महत्त्वपूर्ण है।

ज्योतिष के ग्रन्थो मे चमत्कार चिन्तामणि, तिथिकल्पद्रुम, मनोनन्दनम्, मुहूर्त्त मुक्तावली की टीकाएँ, भानुपण्डित कृत सज्जनवल्लभ, महेश्वरभट्ट कृत मुहूर्त्तवृत्तरात, भास्करीय सिद्धान्त शिरोमणि की टीकाएँ आदि महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। उपलब्ध आयुर्वेदीय ग्रन्थो मे आनन्दभारती कृत आनन्दमाला, शालिहोत्र के सचित्र ग्रन्थ, पालकाप्य, गजायुर्वेद ग्रन्थ, अनुपान मंजरी, पाकावली, हसराज कृत भिषक्चक्र चित्तोत्सव, मल्लदेव कृत मल्लप्रकाश तथा हस्तिरुचि कृत वैद्यवल्लभ उल्लेखनीय है। तन्त्र-मन्त्र शास्त्रीय ग्रन्थो मे शिवानन्दभट्ट कृत सिहसिद्धान्तसिन्धु, त्रिपुरार्चन चन्द्रिका, साखायनतन्त्र, भुवनेश्वरी पद्धति, त्रिपुराभारती लघुस्तव, विद्यानन्द कृत सौभाग्य रत्नाविध, क्रमदीपिका, अर्थरत्नावली, दामोदरानन्द कृत कालपटल, निजात्मानन्द की क्रमपद्धति, नारायण भट्ट कृत तारानित्यपूजाविधि इत्यादि ग्रथ तात्रिक उपासना के एव तन्त्र साहित्य के स्वतत्र अध्ययन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

यहाँ पर हिन्दी-राजस्थानी मे ऐतिहासिक ग्रन्थ तथा रामस्नेही, नाथ सम्प्रदाय, दादू पथी आदि सम्प्रदायो के ग्रन्थ प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है। इतिहास के ग्रन्थो मे राठौडो की वशावली, मु हना नैणसी री ख्यात, मु दियाड री ख्यात, मानसिह जी री ख्यात, तखतसिह जी री ख्यात, मारवाड रा परगना री विगत, पृथ्वीराज रासउ रसाल की धारणोजप्रति, अजीत विलास आदि मुख्य रूप से है। रासो साहित्य मे प्रतापरासो, हमीर रासो, वीसलदेवरासो, खुमानरासो आदि की अनेकानेक महत्त्वपूर्ण प्राण्डुलिपियाँ उपलब्ध है। राजस्थानी साहित्यशास्त्र के इन्द्रगढ ठिकाने के हस्तलिखित सग्रह के अन्तर्गत शिवसिंह तथा सग्रामसिह के काव्यशास्त्रीय ग्रथो के अनुवाद, शम्भुराम मिश्र कृत छन्दरत्नावली, उदयचन्द भण्डारी और उत्तमचन्द भण्डारो के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ, बिहारी सतसई की अमरचन्द्रिका व हरिप्रकाश टीका, बिहारी सतसई की सस्कृत टीका, गणपति कवि व मगलमिश्र का महाभारत का अनुवाद, गगादास कृत छन्दोमजरी, कृष्णदास कृत रामायण का पद्यानुवाद, पद्मनाभ कृत दुर्गावती प्रकाश, सुन्दर श्रृगार को राजस्थानी टीका, दशकुमार वचनिका, ऐतिहासिक गीत सग्रह, रसिकप्रिया की टीकाएँ, हरिचरणदास के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ, वरणीराम लालस कृत काव्यप्रबन्ध, मनोहर कवि कृत जम आभूपण चन्द्रिका, कवि उम्मेद कृत वाणीभूपण इत्यादि ग्रन्थ सस्कृत काव्यशास्त्र के प्रभाव से इतर राजस्थानी

साहित्य की विस्तृत छन्दशास्त्रीय परम्परा पर प्रकाश डालने वाले है। ऐतिहासिक काव्यो मे ईसरदास बारहठ एव पृथ्वीराज सादू, खिड़िया जग्गा, खिड़िया बख्ता, कृपाराम, आसिया दूदा और आसिया बाकीदास के ऐतिहासिक गीत कवित्त सग्रह भी महत्त्वपूर्ण ग्रथ हैं।

सम्पादन की दृष्टि से रचनाकालीन अथवा रचना के निकटतम समय की प्रतिलिपि का महत्त्व सर्वविदित है। इस दृष्टि से भोजचरित चउपई, झाझ-रिया ऋषिचरित्र स्वाध्याय, दशवेकालिकवृत्ति, पार्श्वनाथरास, पृथ्वीराज रासो, अजीतसिंह कनकावती रास, समयसुन्दर कृत नलदमयन्ती चउपई जैसे ग्रन्थो का विशेष महत्त्व है। राजशेखर उपाध्याय, राजसोमोपाध्याय, महिमाकुशल का हस्तलेख भी इसी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है। पूर्वनिर्मित रचनाओ की सशोधित प्रतिया भी सम्पादन की दृष्टि से महत्त्व की होती है। इस प्रकार के उल्लेखो मे जटमल कृत गोरा बादल पद्मिनी चरित्र चउपई का कु जलाल द्वारा किया गया सशोधन अथवा रामायण की तिलक टीका का सक्षिप्ती-करण महत्त्वपूर्ण है।

सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहासो के साधन रूप मे पुष्करणा और श्रीमाली जाति के अवटक, पक्वान्न और आभूपणो की सूचियाँ, भौगोलिक दृष्टि से तीर्थमाला स्तवन के अतिरिक्त शतरज जैसे खेल के लिए मराठी भापा सहित उपलब्ध हुई तिरुवेंकटाचार्य कृत विवेकविलास मणिमंजरी, वैदिक योगि-नियो का तात्रिक अध्ययन, जैन साहित्य के सज्झाय सग्रह, एक ग्रन्थ मे उपलब्ध होने वाले आगमो की पेतालीस टीकाओं के नाम, अमृतविजय और विद्याविजय कृत ग्रन्थो की सूचियों का अपना महत्त्व है। मु हता नणसी और उनके वशजो की उपलब्ध हुई जन्मकुण्डलियाँ जहाँ वश विशेप पर प्रकाश डालती हैं, वहाँ युगलकिशोर पाठक कृत विवाह पद्धति मे तत्कालीन समाज के विवाह पद्धति के समग्र दर्शन होते है। इसी दृष्टि से देवकरण पचोली कृत वाराणसी विलास के 250 कवित्तो मे महाराणा जगतसिंह की काशी यात्रा से उदयपुर वापसी पर किए गए स्वागत का वर्णन भी सामाजिक इतिहास के परिप्रेक्ष्य मे उल्लेखनीय है।

विभाग मे 1500 से अधिक चित्रित ग्रन्थ उपलब्ध हैं। ये ग्रथ ताड़पत्र, चर्मपत्र एव कागज पर लिखे हुए हैं। कागज पर लिखित 12 वी शताब्दी (सवत् 1204 A D) का प्राचीनतम ग्रथ ध्वन्यालोक लोचन है। ताडपत्रो मे श्रीभागवत के विभिन्न स्कन्ध एव कतिपय जैन ग्रथ भी हैं यथा—भागवत देवी-

माहात्म्य कालकाचार्य कथा। इनकी लिपि अधिकाँशत: दक्षिण भारतीय हैं और उनकी चित्राकन पद्धति भी दक्षिणी है। चर्मपत्र पर आर्य महाविद्या नामक बौद्धग्रथ मिला है जो पाल शैली के चित्राकन पर आधारित है। इसके अतिरिक्त विभाग मे अनेक ग्रथ जैन शैली मे चित्रित है जिसे विद्वानो ने अपभ्र श शैली, पश्चिम भारतीय शैली एव गुजराती शैली नाम से सम्बोधित किया है। इस तरह की शैली मे इस विभाग में कल्पसूत्र के अनेक नमूने उपलब्ध है जिनमे वि. 1485 का कल्पसूत्र प्राचीनतम है। इसका चित्राकन कागज पर सुवर्ण की स्याही से किया गया है और इसमे विभिन्न तीर्थङ्करो के समवसरण के दृश्य चित्रित किए गए हैं। इसके अलावा कालकाचार्य कथा, तत्त्वार्थ सूत्र, ब्रह्माण्ड वर्णन, उत्तराध्ययन सूत्र, क्षेत्रसमास, नरपतिजयचर्या, सग्रहणी सूत्र, काव्यप्रशस्ति इत्यादि ग्रथ जैन शैली मे चित्रित हुए मिले है। इसके अतिरिक्त राजपूत शैली की पहाडी कलम की परम्परा में भी कई ग्रथ मिले हैं जिनमे गीतगोविन्द, दशमहाविद्या, भागवत के नाम गिनाये जा सकते है।

जम्मू-कश्मीर शैली के निदर्शन भी यहाँ देखे जा सकते है जिनमे विभाग मे उपलब्ध श्रीभागवत अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। यह ग्रन्थ कागज के एक लम्बे खरड़े पर लिखा हुआ तथा इसकी लिपि माइक्रोस्कोप की सहायता से ही पढी जा सकती है।

राजस्थान की विभिन्न शैलो जिन्हे पूर्व राजपूत शैली के अन्तर्गत ही माना जाता था, के अनेक निदर्शन यहाँ उपलब्ध है। यहाँ विभिन्न शैलियो के ढोला-मारू चउपई की कई दुर्लभ प्रतियाँ मिली है। इनका चित्राकन जोधपुर, बीकानेर, जयपुर एव बू दी शैली मे किया है। किशनगढ के महाराजा नागरी-दास से सम्बन्धित भी एक चित्र विभाग मे उपलब्ध है। राजस्थानी प्रेमाख्यानो मे सदैवच्छ सावलिगा री वारता, जलाल बूबना री वारता, फूलजी फूलमती री वात शीलकँवर री चउपई, बेलि क्रिस्न-रुक्मिणी री, माधवानल कामकन्दला चउपई, पन्द्रहवी विद्या इत्यादि अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है। इसी परम्परा मे मधुमालती सचित्र कथा 25 विभिन्न चित्रित प्रतियो के आधार पर विभाग से प्रकाशित है।

2. शाखा कार्यालय जयपुर—

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान का मुख्यालय दिसम्बर 1958 मे जयपुर से जोधपुर मे स्थानान्तरित होने के वाद से विभाग के जयपुर कार्यालय

में शाखा कार्यालय के रूप मे ग्रन्थ सग्रह का कार्य प्रारम्भ हुआ। यह कार्यालय विधान सभा के सामने श्री रामचन्द्र जी के मन्दिर मे अवस्थित है। जयपुर सग्रह मे पण्डित हरिनारायण जी विद्याभूषण सग्रह के 829 ग्रथ, सुभद्रादेवी और सौभाग्यदेवी (प. लक्ष्मीनाथ दाधीच सग्रह) के सग्रह के 556 ग्रथ तथा विश्वनाथ शारदानन्दन सग्रह के 321 ग्रंथ भेट स्वरूप प्राप्त किये गये है। महाराजा पब्लिक लाइब्रेरी, जयपुर के 1608 ह. लि. ग्रथो को स्थानान्तरित करते हुए इनके सूचीकरण का कार्य प्रारम्भ किया गया तथा इन चारो ही सग्रहो के सस्कृत प्राकृत ग्रंथो का सूचीपत्र सन् 1966 मे प्रकाशित किया गया। तत्पश्चात् श्री बद्रीनारायण फोटोग्राफर से 1906 ग्रथ, श्री रामकृपालु शर्मा से 1501 ग्रथ, बाबा हरिदास से 1 तथा जिनधरणेन्द्र सूरि के बड़े उपासरे से 2506 ग्रथ भेट स्वरूप प्राप्त किए गए। ग्रथाक 7118 तक के शेष सस्कृत-प्राकृत ग्रथो का सूचीपत्र 1984 मे प्रकाशित कर दिया गया है तथा शेष सस्कृत-प्राकृत एव हिन्दी-राजस्थानी के सूचीपत्र आलोच्य वर्ष मे छप चुके है। वर्तमान समय मे शाखा कार्यालय, जयपुर के ग्रथ सग्रह की कुल सख्या 11,892 हो गई है।

विद्याभूषण ग्रथ सग्रह मे अधिकतर धर्मशास्त्र और ऐतिहासिक प्रशस्तियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। धर्मशास्त्रीय ग्रथो मे नारायण धर्मसार सग्रह, कुलशेखर नृपति विरचित मुकुन्दमाला, कृष्णलहरी स्तोत्र जहाँ महत्त्वपूर्ण हैं, वहा साहित्य की दृष्टि से ईश्वरविलास महाकाव्य एव सगीतरघुनन्दन तथा रागमजरी सगीत की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इस सग्रह मे सगृहीत शिलालेखो मे मानसिंह कच्छवाहा (1969), माण्डल के राजा जगन्नाथ कच्छवाहा, रणथम्भौर के चौहान राजा हमीर (1345), तोरमाण का शिलालेख तथा दूबकुण्ड के कच्छपवश घात की प्रशस्ति महत्त्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त चाटसू का शिलालेख, बीसल जी के मन्दिर का शिलालेख, ग्वालियर दुर्ग के शिव मन्दिर की प्रशस्ति भी उल्लेखनीय है।

प लक्ष्मीनाथ दाधीच सग्रह मे न्याय, स्तोत्र साहित्य तथा साहित्यशास्त्र के ग्रथ महत्त्वपूर्ण है। न्यायशास्त्र के ग्रथो मे समय दीधिति, शिरोमणि मूल टीका, तर्ककारिका तथा क्रोडपत्र उल्लेखनीय है। अनेक अष्टको के अतिरिक्त दविमति के स्तोत्र, विश्वनाथ विज्ञप्ति पचाशिका उल्लेखनीय है। सस्कृत साहित्य के ग्रथो मे गोपीनाथ कृत आनन्दनन्दन काव्य, माधवस्वातन्त्र्यम् नाटक, गोपीनाथ कृत वृत्तचिन्तामणि, विद्याभूषण कृत काव्यकौस्तुभ, गोविन्द कृत काव्यप्रदीप, काव्यामृत एव छन्दशास्त्रीय ग्रंथो मे बन्धकौमुदी महत्त्वपूर्ण हैं।

विश्वनाथ शारदानन्दन सग्रह मे चक्षुष्मती विद्यारत्न, मन्त्ररत्न तथा बालार्चापद्धति मन्त्रशास्त्रीय ग्रथो मे तथा साहित्य शास्त्रीय ग्रथो मे राधाविनोद काव्य एव रसमंजरी की व्यग्यार्थकौमुदी टीका महत्त्वपूर्ण है। महाराजा पब्लिक लाइब्रेरी के हस्तातरित ग्रथ सग्रह मे नृपति विलास काव्य, नलायन, श्रीकण्ठचरित्र, मधुसूदन विरचित अमन्दमन्दाकिनी शतक तथा कृष्णवल्लभ कृत काव्यविभूषण शतक को नवीन श्रेणी के ग्रथो मे रखा जा सकता है।

जयपुर सग्रह के शेप ग्रथो मे वास्तु पद्धति, अजितशान्ति स्तोत्र, कल्याणमन्दिर का बालावबोध तथा षष्टिशतक का बालावबोध महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी-राजस्थानी के भी अनेको ग्रथ बहुत ही महत्त्वपूर्ण है इसके अतिरिक्त हिन्दी-राजस्थानी की प्राचीन पत्र-पत्रिकाओ का महत्त्वपूर्ण सकलन भी है जो शोधार्थियो के लिए बहुत ही उपयोगी है।

3. अलवर शाखा कार्यालय—

अलवर के महाराजा विनयसिह जी द्वारा स्थापित पुस्तक शाला मे सर्वप्रथम हस्तलिखित ग्रथो का सग्रह सन् 1840 मे किया गया। सत्र 1961-62 मे विभाग के शाखा कार्यालय को प्रारम्भ करने के लिए सर्वप्रथम इस सग्रह को हस्तातरित कर 5433 ग्रथ सगृहीत किए गए। इनमे 496 ग्रथ हिन्दी के है तथा शेष ग्रन्थ सस्कृत-प्राकृत के हैं। इसके अतिरिक्त प रामदत्त शर्मा से 361 ग्रन्थ भेट स्वरूप प्राप्त किए गये। ग्रन्थ सग्रह का कार्य जारी रखते हुए अन्यान्य ग्रन्थदाताओ से ग्रन्थ भेट स्वरूप प्राप्त करके अब तक शाखा अलवर के सग्रह मे 6689 ग्रथ सगृहीत हुए है। यद्यपि यहा के सस्कृत-प्राकृत ग्रन्थो का एक सूचीपत्र पीटर पीटर्सन ने सन् 1892 मे बम्बई से प्रकाशित किया था, परन्तु प्रथमत: यह दुष्प्राय होने, द्वितीयत सूचीकरण की नवीन पद्धति के अनुसार यह सूचीपत्र न होने से सस्कृत-प्राकृत का एक नवीन सूचीपत्र प्रकाशित करा दिया है तथा हिन्दी-राजस्थानी ग्रन्थो के सूचीपत्र का मुद्रण कार्य चल रहा है।

अलवर शाखा वैदिक साहित्य, न्याय, मीमासा तथा साहित्य की दृष्टि से अनेक नवीन ग्रन्थो से समृद्ध है। ऋग्वेद की अधुनातन अज्ञात आश्वलायन तथा शाखायन सहिता पाठ सग्रह की सबसे बड़ी उपलब्धि है। वैदिक साहित्य के अन्य ग्रथो मे गृह्यसूत्र की टीकाएँ, ऋग्वेद के प्रातिशाख्य, श्रौतसूत्रो की पद्धतिया तथा प्रयोगवृत्ति तथा कातीय गृह्य एव शुल्वसूत्र पर अनेक टीकाएँ महत्त्वपूर्ण

है। वेंकटनाथार्य कृत अधिकार संग्रह, ब्रह्मसूत्र विवरण, भावप्रकाशिका पुरुषोत्तमाचार्य कृत अध्यात्मकाटिका वेदान्त के उल्लेखनीय ग्रन्थ हैं। न्याय-शास्त्रीय ग्रन्थो मे महादेव कृत ईश्वरवाद, चन्द्रनारायण कृत क्रोडपत्र, तत्त्व-चिन्तामणि की सक्षिप्त टीका सर्वोपकारिणी तथा बनारस के महादेव कृत न्यायसार महत्त्वपूर्ण हैं। गीतगोविन्द की कृष्णदत्त, कमलाकर, शंकर मिश्र कृत व्याख्या, अमर कवि कृत गौरीशकर कीर्त्ति, चक्रपाणि दीक्षित कृत दश-कुमारशेष महत्त्वपूर्ण है। वही लघु काव्यो मे फाल्गुनशतक, मृगाकशतक, वख्तेश रहस्य, शम्भूमति विलास तथा वाराणसी दर्पण उल्लेखनीय है। अभिनव नाटकों का सग्रह भी इस संग्रह की विशेषता है। कृष्णकवि कृत मुक्ताचरित नाटक, रामदेव कृत रामाभ्युदय नाटक, कविदण्डत कृत हृदयविनोद प्रहसन उल्लेखनीय है। कृष्ण भक्ति के ग्रन्थो मे भावमिश्र का शृगारसरसी तथा सुखलाल मिश्र की शृगारमाला एव छन्दशास्त्रीय ग्रन्थो मे जगन्नाथ कृत छन्दपीयूष, दामोदर कृत वाणीभूषण, शम्भुराम कृत छन्दोमुक्तावली तथा कुमारमणि भट्ट कृत छन्दो-दीपिका महत्त्वपुर्ण हैं।

4 शाखा कार्यालय कोटा—

यह कार्यालय गढ़ के अन्दर है। सत्र 1961-62 मे विभाग के इस शाखा कार्यालय का प्रारम्भ सरस्वती सग्रहालय से स्थानान्तरित ग्रन्थो के सग्रह से किया गया। इस संग्रहालय से 4834 ग्रन्थ प्राप्त हुए जिनमे अधिकाशत. सस्कृत-प्राकृत के ही ग्रन्थ हैं। इस सग्रह के पश्चात् झालावाड सग्रहालय के ग्रन्थ स्थानान्तरित करके तथा चन्द्रकात सारोला के ग्रन्थ सग्रह भेट स्वरूप प्राप्त करके एवं अन्यान्य लोगो से भेट स्वरूप ग्रन्थ प्राप्त करते हुए अब तक इस सग्रहालय मे कुल 8553 ग्रन्थ सगृहीत हुए हैं। कोटा सग्रह के ग्रन्थो मे श्रौतसूत्र पद्धतियाँ, कर्मकाण्ड, पुराणों की अनेक प्रतिलिपियाँ, वैष्णव सम्प्रदाय के वल्लभ मत के अणुभाष्य तथा विपुल मात्रा मे स्तोत्र साहित्य उपलब्ध है। सकृत् दर्शन मे यद्यपि सान्द्रकुतूहल नाटकम्, कीर्त्तिकौमुदी काव्य, नृसिंह चम्पू आदि कतिपय ही अभिनव साहित्यिक कृतियो का नामोल्लेख किया जा सकता है तथापि यदि अष्टाविध पुराणों के पाठ निर्वारण के कार्य को यदि हमे प्रारम्भ करना है तो कोटा सग्रह मे विद्यमान पुराणो की प्रतिलिपियो के विना पूरा करना युक्तियुक्त एव समीचीन प्रतीत नही होगा।

5. शाखा कार्यालय बीकानेर—

सत्र 1961-62 मे बीकानेर मे राजकीय मुद्रणालय के पास गंगा गोल्डन जुबली क्लब स्टेडियम मे विभाग के शाखा कार्यालय की स्थापना की गई थी। वर्तमान मे यह कार्यालय उसी के पास ही विभाग द्वारा निर्मित अपने नये भवन मे स्थित है। स्थापना से अब तक सगृहीत ग्रन्थो की सख्या 19839 है। संग्रह की दृष्टि से मुख्यालय के बाद यहाँ का सग्रह सबसे अधिक बड़ा है।

इस संग्रह मे सर्वश्री मोतीचन्द जी खजाँची सग्रह, जयचन्द जी सग्रह, यति श्री हिम्मतविजय जी संग्रह, आनन्दविजय जी सग्रह, श्री पूज्यजी जिनचारित्र्य सूरि सग्रह, सुश्री मगनश्री छगनश्री सग्रह उपाध्याय विवेकवर्धन के सग्रहो को भेट स्वरूप प्राप्त करके ग्रथ सगृहीत हुए है। बीकानेर सग्रह की विशेषताओ मे पहली विशेषता यही है कि सम्पूर्ण विशाल सग्रह भेट स्वरूप ग्रथ प्राप्त करके बनाया गया है तथा 90 प्रतिशत से अधिक ग्रथ जैन साहित्य के है।

बीकानेर सग्रह के सस्कृत-प्राकृत ग्रथो के दो सूचीपत्र प्रकाशित कर दिए गए है तथा अवशिष्ट ग्रथो का सूचीपत्र बनाने व छपाने का कार्य तेजी से चल रहा है। इस सग्रह के अजैन ग्रथो मे न्यायशास्त्र के उपाधिदर्पण तथा सद्राद्धान्त, वेदान्तसार की बालबोधिनी टीका, शृगार चूडामणि, भरतसगीतिसयोग तथा विदग्धमुखमण्डन का अवचूरि महत्त्वपूर्ण है। इस सग्रह मे जैन धार्मिक साहित्य विपुल मात्रा मे चित्रित है। कल्पसूत्र, क्षेत्रसमास, सग्रहणी, कालकाचार्य कथा इत्यादि के अनेक दुर्लभ एव महत्त्वपूर्ण नमूने सुरक्षित है। इनमे अनेक ग्रथ सुवर्णाक्षरो से लिखे गए है। इसी प्रकार आवश्यक सूत्र की वृहद्वृत्ति, उत्तराध्ययन एव श्राद्धप्रतिक्रमण की वृत्ति, प्रवचनसारोद्धार का अर्थप्रदीप बालावबोध तथा विपुल मात्रा मे उपलब्ध होने वाला स्तोत्र साहित्य तथा उनके अनुवाद जैन साहित्य को सामान्य जन तक पहुँचाने के लिए आचार्यों द्वारा किए गए अनवरत प्रयासो का प्रमाण है।

6. शाखा कार्यालय चित्तौड़गढ़—

सत्र 1962-63 मे पुरातत्त्वाचार्य मुनि श्री जिनविजय जी द्वारा निर्मित भामाशाह भारती भवन मे श्री लादूराम दुधाडिया के 3506 ग्रन्थो को प्राप्त कर शाखा कार्यालय, चित्तौड मे ग्रन्थो के सग्रह का कार्य प्रारम्भ किया गया। वर्तमान मे शाखा कार्यालय चित्तौड किला रोड पर स्थित है। बाद मे श्री बी. आर चौधरी, आर्या मगनजी छगनजी, बशीलाल दाधीच, मुनि श्री कान्तिसागर

व श्री संतोषजी यति द्वारा दान में ग्रन्थ प्राप्त किए गए तथा सस्कृत-प्राकृत एवं हिन्दी-राजस्थानी के सभी अर्थात् 5426 ग्रंथो के सूचीकरण का कार्य प्रारम्भ किया गया।

इस सस्कृत-प्राकृत ग्रन्थों के दो सूचीपत्र तथा हिन्दी-राजस्थानी के 3507 से 5426 तक के ग्रन्थो का सूचीपत्र प्रकाशित किया गया। श्री लाधूराम दुधाड़िया सग्रह् के हिन्दी-राजस्थानी के ग्रंथों का सूचीपत्र मुद्रणाधीन है।

इस सग्रह् में कामसमूह् काव्यप्रबन्ध तथा मूलराय यशोवर्णन जहाँ अप्रकाशित काव्यो के रूप मे उल्लेखनीय है वहाँ आशीनगर प्रशस्ति इतिहास की दृष्टि से, नीलकण्ठ कृत शब्दशोभा तथा दुर्गाराम कृत शिवगीता का उल्लेखनीय ग्रथो मे समावेश होता है। यद्यपि इस सग्रह् मे विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण ग्रंथों की वहुतायत नही है फिर भी प्राचीन लिपि की दृष्टि से जैन साहित्य के अधिकाश ग्रथ उपलब्ध है। यथा—कलावती प्रबन्ध चउपई का इस सग्रह् में उपलब्ध पाठ प्रकाशित पाठ से नितान्त भिन्न है। इसी प्रकार सम्राट अकबर द्वारा सम्मानित आचार्य जिनचन्द्रसूरि का हस्तलेख, दशवैकालिक गीत की रचना-कालीन प्रति, जगन्नाथ कृत रामायण तथा चित्रकूट शत इत्यादि ग्रंथ लिपि विशेषज्ञ तथा भक्ति साहित्य के अनुसन्धित्सुओ के लिए आकर्षण का विषय है। इसके अलावा ज्योतिष शास्त्र के अनेक अप्रकाशित ग्रन्थ तथा उनकी टीकाएँ सग्रह् मे उपलब्ध है।

7. शाखा कार्यालय उदयपुर—

मुख्यालय का सग्रह् जहाँ सचित्र व जैन ग्रन्थो के लिए महत्त्वपूर्ण है, वही विभाग के उदयपुर शाखा कार्यालय का सग्रह् भी मेवाड के सचित्र ग्रथों, इतिहास की वशावलियो, ऐतिहासिक काव्यो तथा हिन्दी के लघु काव्यों की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

सन् 1961-62 मे उदयपुर के राजमहल मे सरस्वती भण्डार के भवन में ग्रन्थो के सग्रह् का कार्य शुरु किया गया और इस सिलसिले मे सरस्वती भवन लाइब्रेरी से 2752 ग्रंथो को हस्तान्तरित कर प्राप्त किया गया। सन् 1971-72 मे 1113 ग्रंथ खरीदे गए तथा अन्य भेट प्राप्त ग्रन्थों सहित 4096 ग्रंथ संगृहीत किए गए।

सन् 1975 मे उदयपुर शाखा के तत्कालीन अधिकारी डॉ. ब्रजमोहन जावलिया के विशेष प्रयत्नो से वनेड़ा के प्रसिद्ध वकील स्व पं रविशंकर देराश्री

के बहुमूल्य ग्रथ सग्रह को भट मे प्राप्त किया गया, जिनमे सस्कृत-प्राकृत के साथ ही हिन्दी व इतिहास के ग्रन्थों का भी समावेश हुआ है। इस सग्रह के बाद इस शाखा सग्रह की कुल ग्रथ सख्या 6873 हो गई है।

पूर्व मे सगृहीत संस्कृत-प्राकृत ग्रंथो का सूचीपत्र (भाग-12) प्रकाशित किया गया है, जिसमे 3302 सस्कृत-प्राकृत ग्रथो की कृतियो का समावेश है। देराश्री सग्रह के सस्कृत-प्राकृत ग्रथो का सूचीपत्र भी (भाग-22) प्रकाशित हुआ जिसमें 3010 सस्कृत के ग्रथो का उल्लेख हुआ है।

देराश्री-सग्रह के हिन्दी-राजस्थानी ग्रथो का लगभग 1600 प्रविष्टियों का सूचीपत्र भी छप गया है तथा 1 से 4096 तक के हिन्दी-राजस्थानी ग्रथों के सूचीपत्र का सम्पादन किया जा रहा है। इस सग्रह मे जीवधर कृत अमरसार, रणछोड भट्ट कृत अमरकाव्य व राजप्रशस्ति, रघुनाथ कृत जगतसिह काव्य, गगाधर कृत मण्डलिक महाकाव्य, सदाशिव नागर कृत राजरत्नाकर महाकाव्य जहाँ तत्कालीन सामाजिक व ऐतिहासिक घटनाओ के साक्ष्य के रूप मे वर्तमान है, वही गीतगोविन्द की अनेक टीकाएँ इस सग्रह की अपनी विशेषता है। चक्रपाणिमिश्र कृत राज्याभिषेक पद्धति जहाँ राणाप्रताप के राज्याभिषेक का सम्पूर्ण वर्णन करती है, वही गरीबदास पुरोहित के द्वारा अनेक धर्मशास्त्रीय ग्रथो की कराई गई प्रतिलिपियाँ भी पुष्पिकाओ की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

वास्तुशास्त्र के ग्रथो मे मण्डनसूत्रधार का प्रासाद-मण्डन और राजवल्लभ, सगीतशास्त्रीय ग्रथो मे महाराणा कुम्भा कृत सगीतराज, कामशास्त्रीय ग्रन्थो मे वीर शकरनारायण कृत शिवार्चनसिन्धु, सूर्यप्रसाद शर्मा कृत सर्वार्थकल्पद्रुम ग्रथ उल्लेखनीय है।

देराश्री सग्रह के महत्त्वपूर्ण ग्रथो मे प्रवासकृष्ण, प्रबन्धदीप, संस्कार कौमुदी तथा मठ-सम्प्रदाय धार्मिक साहित्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इसी सग्रह मे महाराजा माधवचरित्र, विजयनाथ काव्यरत्नावली, आभाणशतक, उम्मेदसिह प्रशस्ति, भोलानाथ कृत कृष्णलीला को महत्त्वपूर्ण काव्य कहा जा सकता है। देराश्री सग्रह मे न्यायकुसुमाजलि टीका का त्रिलोचन देव का हस्तलेख अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

उदयपुर सग्रह मे लिपि की दृष्टि से माधवकृत चिकित्सासूत्र (1406 AD) तथा सुश्रुत सहिता (1407 AD) प्राचीनतम ग्रथ है। इनकी तुलना मे देराश्री सग्रह के ग्रंथ अपेक्षाकृत उत्तरवर्त्ती शताब्दियो के है।

उदयपुर सग्रह के हिन्दी-राजस्थानी संग्रह मे खुमाणरासो, पृथ्वीराजरासो, प्रतापरासो, हम्मीररासो, खाप री पीढ़ियाँ तथा विगत ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। देराश्री सग्रह मे याददाश्त-बनेडा ठिकाना, कक्का बत्तीसी, राजसमुद्र के निर्माण की याददाश्त, गुणराज रासो तथा हाडा चौहानो के गोत्राचार जहाँ ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, वहाँ राजस्थानी काव्य की दृष्टि से कृष्णविलास, रमणप्रकाश, रामचरित्र, रघुवीर जस वर्णन तथा दश-कुमार भाषा महत्त्वपूर्ण है। सगीतशास्त्र के ग्रथो मे सवाई सरदारसिह कृत सुरतरग, पुराणो के पद्यानुवादो की दृष्टि से देवकरण पचोली कृत वाराणसी विलास तथा भारतसार चद्रिका महत्त्वपूर्ण हैं। देराश्री सग्रह के लेखकीय हस्ताक्षर की दृष्टि से गोरा बादल पद्मिनी-चरित्र चउपाई की 1545 वि की प्रति प्रतिलिपि की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

उदयपुर सग्रह मे अनेक महत्त्वपूर्ण सचित्र ग्रथ भी विद्यमान हैं। विश्व प्रसिद्ध आर्ष रामायण का एक खण्ड इस सग्रह मे उपलब्ध है। इसी सग्रह का गीतगोविन्द भी मेवाड़ी परम्परा का एक उत्कृष्ट नमूना है, इन दोनों ही ग्रथों को लन्दन के Indian Festival (इण्डियन फेस्टीवल) में प्रदर्शित किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त इस सग्रह में अवतार चरित्र, एकलिग स्वप्न वर्णन, कर्मविपाक, कालाग्निरुद्रोपनिषत्, ग्रहलाघव, त्रियाविनोद, दुर्गासप्तशती, नासि-केतोपाख्यान सचित्र ग्रथ मिले हैं। इसके अलावा गजचिकित्सा और अश्व-चिकित्सा के ऊपर भी कई महत्त्वपूर्ण चित्रित ग्रथ उपलब्ध हैं।

8. राजस्थान पुरातन-ग्रन्थमाला—

हस्तलिखित ग्रंथों के संरक्षण और सूचीकरण के साथ ही दुर्लभ पाण्डु-लिपियो के प्रकाशन के लिए विभाग ने 'राजस्थान पुरातन ग्रथमाला' का प्रारम्भ किया तथा अब तक इसके अन्तर्गत सस्कृत, हिन्दी एव राजस्थानी भाषाओ के अनेकानेक विषयों के 155 ग्रथ प्रकाशित किए हैं। इन विषयों मे वैदिक साहित्य, तन्त्र, सस्कृत महाकाव्य, गीतिकाव्य, छन्दशास्त्र तथा राजस्थानी भक्ति साहित्य एव ऐतिहासिक ख्यातों तथा रासों का साहित्य उल्लेखनीय है।

पं. मधसूदन ओझा कृत महर्षिकुलवैभवम् एवं पथ्यास्वस्तिः का प्रकाशन वैदिक साहित्य की नवीन दृष्टि को विद्वानो के समक्ष प्रस्तुत करता है। वैदिक साहित्य में भागवत धर्म के निगूढ तत्वो को उजागर करने वाला मन्त्रभागवत भी इसी कोटि का उल्लेखनीय प्रकाशन है। तन्त्र-मन्त्र शास्त्रीय ग्रथों में

शांखायन तन्त्र, शिवानंद भट्ट गोस्वामी विरचित सिहसिद्धान्तसिन्धु एव आगमरहस्य तांत्रिक उपासकों के अतिरिक्त स्मार्त्त सम्प्रदायों के विद्वानों के लिए भी आकर्षण का विषय है।

पौराणिक उपाख्यानों पर आधारित चक्रपाणिविजय महाकाव्य कामाभिनन्दन महाकाव्य एव सनत्कुमारचक्रि चरित महाकाव्यों का प्रकाशन जहाँ साहित्यिक अभिरुचि की परम्परा का प्रमाण है वहा आमेर नरेश ईश्वरसिह से सम्बन्धित ईश्वर विलास महाकाव्य जयपुर के इतिहास के लिए, गुजरात के शासक महमूद बेगड़ा की प्रशस्ति में लिखा गया राजविनोद महाकाव्य गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास के लिए तथा रणथम्भोर के चहुआन शासक हम्मीर से सम्बन्धित नयचन्द सूरि का हम्मीर महाकाव्य ऐतिहासिक महाकाव्यों की न्यूनता की पूर्ति करते है, साथ ही तत्कालीन सामाजिक एव आर्थिक इतिहास के स्रोत के रूप मे भी उनका महत्त्व कुछ कम नही है। इसी प्रकार के अन्य प्रकाशनों में दिल्ली के प्राचीन इतिहास पर प्रकाश डालने वाला इन्द्रप्रस्थ प्रबन्ध तथा जयपुर नगर के निर्माण के साक्ष्य के रूप मे राजस्थानी का बुद्धिविलास ही उपादेय है।

गीतगोविन्द से प्रारम्भ हुई गीतिकाव्यों की परम्परा में सोमनाथ कृत कृष्णगीतिः मध्यकाल मे विदेशी भाषाओं के भारतीय भाषाओं पर हुए प्रभाव को अभिव्यक्त करती है, पद्यमुक्तावली, शकरीसगीत तथा सगीत रघुनन्दनम् कुछ इसी प्रकार के गीतिकाव्य है।

प्राकृत व्याकरण पर प्राकृतानन्द, चान्द्र व्याकरण एव छन्दशास्त्रीय ग्रथों मे स्वयभूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, वृत्तमुक्तावली, जहाँ सस्कृत के छन्दों पर प्रकाश डालते हैं, वहाँ प्राकृत एवं अपभ्र श साहित्य में प्रयुक्त छन्दो के लिए वृत्तमौक्तिक का प्रकाशन उल्लेखनीय है। इसी प्रकार के ज्योतिष, रत्नशास्त्र, वास्तुशास्त्र, कोश, नाटक एवं स्तोत्र साहित्य आदि विषयो के दुर्लभ ग्रंथों का भी प्रकाशन किया गया है।

हिन्दी एवं राजस्थानी के प्रकाशित साहित्य मे गोविन्दानन्दघन, राजस्थानी साहित्य संग्रह, जुगलविलास, कवीन्द्रकल्पलता, मीरावृहत्पदावली, राघवदास कृत भक्तमाल, ब्रह्मदास कृत भगतमाल, इत्यादि ग्रथ राजस्थानी के क्रमिक विकास की दृष्टि से भी अध्ययन योग्य हैं।

मध्यकालीन राजस्थान के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास के मूलस्रोत के रूप मे मुहता नैणसी की ख्यात, भूमिप्रबन्ध, लगान एव राजस्व प्रणाली आदि के अध्ययन के लिए मारवाड़ रा परगना री विगत, जायसी के अतिरिक्त पद्मिनी प्रसग पर उपलब्ध होने वाला एकमात्र राजस्थानी काव्य गोराबादल पद्मिणी चउपई, जालौर पर अलाउद्दीन खिलजी के द्वारा किए गए आक्रमण के मुकाबले के ऐतिहासिक प्रमाण के रूप मे कान्हडदे प्रबन्ध, कायमखानियो की उत्पत्ति एव शाखाओ पर विशद् प्रकाश डालने वाला क्यामखां रासो एकमात्र साहित्यिक स्रोत है।

जोधपुर के महाराजा गजसिह (प्रथम) द्वारा हाजीपुर (पटना) के निकट किए युद्ध का वर्णन करने वाला गजगुणरूपकबध, वीरम जी राठौड की प्रशस्ति मे लिखा गया वीरभांण, जोधपुर के इतिहास के लिए कविया करणीदान कृत सूरजप्रकाश, बांकीदास की ख्यात, प्रतापरासो, महेशदास कृत विन्हैरासो, राठौड वंश की विगत एवं राठौडां री वंशावली एव महाराजा मानसिह री ख्यात आदि ग्रथ मध्यकालीन इतिहास के लिए फारसी से इतर मूल स्रोत के रूप में उपयोगी सिद्ध हुए है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् गत लगभग 30 वर्षों की सक्षिप्त अवधि मे लगभग एक लाख से अधिक ग्रंथो का संकलन, उनके सूचीपत्रो के सम्पादन और प्रकाशन के साथ साथ सस्कृत साहित्य, तन्त्र, सगीत, आयुर्वेद, ज्योतिष, इतिहास एव राजस्थानी हिन्दी साहित्य के 155 अज्ञात ग्रथो को सम्पादित कर प्रकाशित करने का श्रेय विभाग के उपलब्धि को नि सशयता प्रमाणित करता है। विश्वविद्यालयो एवं शैक्षणिक सस्थाओ द्वारा उनकी शोध प्रायोजनाओ मे इस विपुल ग्रथ सम्पदा का यदि उत्तरोत्तर अधिक मात्रा मे समावेश किया जावे एव अद्यावधि इतस्तत: प्रकीर्ण ग्रंथ सम्पदा के संरक्षण मे समाज का सहयोग मिलने पर, कहने की आवश्यकता नहीं कि जिन उद्देश्यो से विभाग का प्रारम्भ किया गया उनकी समय सापेक्ष पूर्त्ति की सभावना निकट ही दृश्यमान प्रतीत होती है।

शोध अधिकारी
राजस्थानी प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर

जयपुर का पोथीखाना

श्री गोपाल नारायण बहुरा

जयपुर का पोथीखाना देश के प्रसिद्ध और समृद्ध ग्रथ भण्डारों में गिना जाता है। कारण यह है कि आमेर-जयपुर के कछवाहा राजवश मे समय-समय पर उत्कट विद्या प्रेमी और समर्थ साहित्य-प्रोत्साहक राजा उत्पन्न होते रहे हैं। दसवी शताब्दी मे दौसा, खोह, माँची (रामगढ़) होकर आमेर मे स्थिर होने वाला यह वश पहले ग्वालियर और नरवर में राज्य करता था। ग्वालियर में महिपालनृपति-निर्मापित देवालय के शिलालेख मे इस वश को कच्छपघात अथवा कच्छपारि वश लिखा है। वही महिपाल को 'विद्याविभूषिततनुः' और 'कवीन्द्रकृतमोद' कहकर सम्बोधित किया गया है। आमेर आने के अनन्तर विद्वानो को धन, मान और दान देकर ग्रंथ रचना कराने का प्रथम साक्ष्य हमे कलकत्ता की एशियाटिक रिसर्च सोसायटी के सग्रह में रक्षित 'पृथ्वीराजविजय' काव्य की 10433 सख्याकित त्रुटित प्रति मे मिलता है। इसमे 'पृथ्वीराजरासो' के ख्याति प्राप्त योद्धा पज्जवन के पौत्र और मलैसी के पुत्र बीजलदेव की प्रशस्ति मे यह पद्य प्राप्त होता है—

> विद्वद्भिर्धनदानमानिततया सुप्रीतचित्तैर्भृशं
> बालाना कलयाम्बभूव कलया बोधाय शब्दावलैः।
> ग्रन्थ सुग्रथित विभक्तिगुणितैर्बोध्यैस्समासादिभि
> र्धीमानुद्धतिवर्जितो जितयशा राजा जुगोपावनिम् ॥७५॥

भारमल्ल के पुत्र राजा भगवन्तदास आदि के लिए लिपिकृत कतिपय स्तोत्रादि की प्रतिलिपियाँ भी पोथीखाना मे विद्यमान है। अकवर कालीन राजा मानसिह (प्रथम) का विद्याप्रेम और कवि चारणो को प्रसाद रूप मे दिये हुए दान प्रसिद्ध हैं। निम्न छप्पय मे नामांकित कवियो मे से कितनो ही के वंशज स्वतन्त्रा-पूर्व तक स्वतन्त्रतापूर्वक उन जागीरो का उपभोग कर रहे थे—

दुरसत खेड़ी डोगरी भल सासण भँरांण ।
कोट गंगात कचोळियो मान दियो महराँण ।।
पोळपात हरपाळ प्रथम प्रभुता कर थप्पै ।
दल में दासो नरू सहोड़ धण हेत समप्पै ।।
ईसर किसनो अरघ वड़ी प्रभुता बाधाई ।
भाई डूंगर भणै कीत लखमुखां कहाई ।।
अई मान अनुमान पहो हाथ धनो धन धन हियो ।
सूरज धड़ी क चढतां समोदे छह करोड़ दांतण कियो ।।

राजा मानसिह के लिए ही मोहन कवि रचित 'दमनमञ्जरी नाटिका', त्रिमल्ल भट्ट विरचित 'मानसिंह-प्रतापकल्लोल', हरिनाथ भट्ट कृत काव्यादर्श की 'सम्मार्जनी टीका', विट्ठल पुण्डरीक रचित संगीत शास्त्रीय ग्रंथ रागमञ्जरी आदि सस्कृत रचनाएँ तथा अमृतराइ कृत 'मानचरित रासो' एवं नरोत्तम कवि प्रणीत 'मानचरित काव्य' और लाखा बारहठ का गीत सग्रह प्रभृति भाषा कृतियाँ भी उसी समय संगृहीत हो चुकी थी ।

मानसिह का तीसरा छोटा भाई सूरसिह था । उसका पुत्र चन्द्रसिंह भी बड़ा साहित्य-प्रेमी था । 'पृथ्वीराज रासो' के लघु सस्करण का उद्धार करने का श्रेय उसी को प्राप्त है । इस संस्करण के अन्त में यह पद्य अवलोकनीय है[1]—

प्रथम वेद उद्धरिय बंभ मच्छह तनु किन्नउ ।
दुतिय वीर वाराह धरनि उद्धरि जसु लिन्नउ ।।
कौमारीक भदेस धम्म उद्धरि सुर सख्यिय ।
कूरम सूर नरेस हिन्द हद उद्धरि रख्यिय ।।
रघुनाथ चरित हनुमंत कृत भूप भोज उद्धरिय जिम ।[2]
प्रथिराज सुजस कवि चद कृत चन्द्रसिह उद्धरिय इम ।।
महाराज नृप सूर सुव, कूरम चद उदार ।
रासौ प्रथीय राज कौ, राख्यौ लगि संसार ।।

बीकानेर वाली उक्त प्रति का समय संवत् 1670 वि से पूर्व का माना गया है । पोथीखाना मे भी रासो के अनेक खण्डो की प्रतियाँ उपलब्ध हैं जो 17 वी और 18 वी विक्रमीय शती की लिखी हुई है ।

---

1. अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर, राजस्थानी ग्रं. सं. 63
2. इस कथा के लिये देखिए Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur, p 463. (Published by Maharaja Sawai Man Singh II Museum, Jaipur, 1976)

राजा मानसिह के प्रपौत्र मिर्जा राजा जयसिह के साथ महाकवि बिहारी और कुलपति मिश्र के नाम तो जुडे ही हुए है और इन दोनों दिग्गजो की रचनाओ की समकालीन प्रतिया इस सग्रह की मूल्यवान् धरोहर है। इनके अतिरिक्त नीलकण्ठ की शब्दशोभा व्याकरण, विष्णुपुराण पर रत्नगर्भ भट्टाचार्य की लिखी वैष्णवाकूत चन्द्रिका टीका, पारसी प्रकाश कोष, सिद्धान्तसिन्धु-नित्यानन्द सारणी, वृत्तरत्नाकर की छन्दोमञ्जरी टीका, गोपाल भट्ट कृत जयचम्पू और केशव व्यास रचित छन्द: सिद्धान्तभास्कर आदि अनेक अज्ञात एव स्वल्पज्ञात ग्रन्थो का प्रणयन तथा सग्रह मिर्जा जयसिह के ही समय मे हुआ था। वे स्वय भी हिन्दी व्रजभाषा मे पद्यरचना करते थे।[1]

मिर्जा राजा जयसिह के ज्येष्ठ पुत्र और उत्तराधिकारी राजा रामसिह का आनुवशिक इतिहास लिखने वाले इतना ही महत्त्व आंक कर रह जाते है कि शिवाजी को औरगजेब की कैद से छुडाने मे उनका प्रमुख हाथ था और वे आसाम तथा उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त मे प्रशासक रहे थे। परन्तु उनकी साहित्यिक और विद्याभिरुचि का पक्ष बहुत कम उजागर हुआ है। वे बिहारी, कुलपति मिश्र, हरिजीवन मिश्र और विश्वनाथ चितपावन रानाडे जैसे तत्कालीन शीर्ष विद्वानो और कवियो के शिष्य थे और स्वय सस्कृत तथा हिन्दी में रचना करते थे। सस्कृत मे शब्दमञ्जरी, धातुमञ्जरी और राजोपयोगिनी पूजापद्धति और भाषा मे छवितरग आदि इनकी कृतियाँ इस संग्रह में उपलब्ध है। सच पूछा जाय तो पोथीखाना के वर्तमान विपुल सग्रह का लगभग एक तिहाई भाग ऐसी प्राचीन हस्तप्रतियो से समृद्ध है जिन पर रामसिंह की मुद्रा–'राम' सिंहाकृति और 'स्य' अक्षरो से युक्त है जिससे 'रार्मसिहस्य' पद बनता है। इस मुहर पर सवत् 1718 वि अकित है। इससे विदित होता है कि रार्मसिह जब महाराज-कुमार थे तब से ही वे अपने एव राजकीय पुस्तक सग्रह की देखरेख स्वय करने लगे थे। रामसिह का राज्याभिषेक सवत् 1724 मे हुआ था। उनके पुत्र कृष्णसिह और विष्णुसिह ने अपनी दक्षिण की मुहिमो और आगरा-मथुरा की सूबेदारी काल मे अनेक मूल्यवान् ग्रन्थो का सग्रह और प्रणयन करवाया जो इस महर्घ सग्रह के अग हैं।

---

1. Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur, Introduction pp 40-41.

इस प्रकार जब सवत् 1784 मे अपनी नई राजधानी 'सवाई जयनगर' की रचना और स्थापना के अनन्तर छत्तीस कारखानो के विधान मे प्रमुख 'पोथीखाना' अथवा 'पुस्तकगृह' का समारम्भ किया तब उनके पूर्वजो द्वारा सगृहीत कई हजार हस्तलिखित ग्रथ उनको पहले से ही प्राप्त थे। पोथीखाना की स्थापना के लिए सवाई जयसिह ने सवत् 1761 मे 76, 1768 मे 420 और 1771 मे 336 ग्रथ खरीदे थे, जो सस्कृत, बंगला, फारसी, अग्रेजी और पुर्तगाली भाषाओ मे लिखे ज्ञान विज्ञान के अलभ्य उदाहरण है। इनमें जीच बरजन्दी, जीच उलुगबेगी, जीच खाकानी, शरह चग़मानी, तहरीर अलमजस्ती, लॉ हाइरे की सारणी, स्वय की बनवायी जीच मुहम्मदशाही, अथर्ववेद सहिता, भुशुंडि रामायण और हनुमत्सहिता आदि के नाम उल्लेखनीय है। उन्होने इस कारखाने (विभाग) मे अच्छे अच्छे कवि, पण्डित, सुलेखक और चित्रकार भी नियुक्त किये जो नई रचनाओ, सुलिखित एव सुचित्रित प्रतियो से इस भण्डार की वृद्धि करते रहते थे। इनके अतिरिक्त महाराजा के दरबार और निकट सहयोग मे भी बड़े बड़े विद्वान, पण्डित और कवि बने ही रहते थे जो अपनी रचनाएँ उनको समर्पित करते और वे सब पोथीखाना मे जमा होती थी। इनमे 'जयसिंह कल्पद्रुम' के कर्ता रत्नाकर पौण्डरीक, महान् गणितज्ञ पण्डित जगन्नाथ सम्राट्, अनेक सस्कृत और हिन्दी काव्य ग्रथो के रचयिता कवि कलानिधि श्रीकृष्ण भट्ट, आगरा के राय शिवदास और सूरत्ति मिश्र के नाम चिरस्मरणीय है।

कारखानों की स्थापना के अनन्तर महाराजा सवाई जयसिह ने यह कार्यप्रणाली स्थिर की कि प्रत्येक कारखाने मे एक तोदार (तहवीलदार-वस्तुपाल) और एक मुशरफ (लेखाकार) रहता था। इनके अतिरिक्त पोथीखाना मे चार सरबराकार भी होते थे जो लेखको के लिए पक्की स्याही और चितेरो के लिए विविध टिकाऊ रंग आदि तैयार करते थे। इन सबके ऊपर एक प्रबन्धक होता था जो दारोगा कहलाता था। सब कारखाने कपड़द्वारा के हाकिम (अध्यक्ष) के नियन्त्रण (एहतमाम) मे रहते थे। प्रत्येक कारखाने का वार्षिक जमा खर्च एव वस्तुओ का विवरण तैयार होकर दीवानी हुजूरी के मस्तौफी (हिसाब-एकक) मे भेजा जाता था। ये विवरण सागानेरी पाठो के 11 अगुल लम्बे तथा 7 अगुल चौड़े टुकड़ो पर लिखे जाते थे। इनकी गड्डियाँ रगीन मोळी (सूत के डोरे) से बाँध कर दो समान आकार वाली काठ की पटरियों मे जमा कर रख दी जाती थी। एक नकल दफ्तर मस्तौफ मे भेज दी जाती और एक कारखाने मे रहती थी। इस आकार मे लिखे विवरण 'तोजी:' कहलाते थे जिसका अर्थ 'पूर्ण ब्यौरा'

होता है इन्हो को 'अवारिजा' भी कहते थे। पोथीखाना की सबसे पुरानी तौजी संवत् 1790 की प्राप्त है अर्थात् जयपुर बसने से 6 वर्ष बाद की।

कहना न होगा कि सवाई जयसिह के उत्तरवर्ती सभी राजाओ ने उनके द्वारा सस्थापित कारखानो और उनकी कार्यप्रणाली का विकास ही किया। पोथीखाना के प्रति तो इनका और भी विशेष लगाव रहा और प्रत्येक शासक के समय मे ग्रन्थ सम्पदा बढती रही तथा सुलेखन तथा चारु चित्रण की कलाएँ निरन्तर विकसित होती रही।

सवाई जयसिंह के ज्येष्ठ पुत्र और उत्तराधिकारी सवाई ईश्वरीसिह के समय मे महाभारत के असमिया लिपि मे साँचीपात पर कलात्मक ढग से लिखे छ पर्व प्राप्त हुए। ये पर्व आसाम के राजा रुद्रसिह और शिवसिंह के समय मे (सवत् 1743 तक) लिखे गये थे। अब ये महाराजा सवाई मानसिंह (द्वि) सग्रहालय की कला दीर्घा मे दर्शको के लिए आकर्षण की विशिष्ट वस्तु हैं। तोजियो मे इनका प्रथम उल्लेख सवत् 1802 वि मे मिलता है। इनके अतिरिक्त उनके राज्यकाल मे अनेक उच्चस्तरीय तान्त्रिक ग्रन्थों की रचना हुई। स्वय ईश्वरीसिह सस्कृत और फारसी के ऊँचे विद्वान् थे। नारायणदास कृत सुप्रसिद्ध 'भक्तमाल' का उन्होने सुललित सस्कृत मे पद्यानुवाद किया जिसकी पाण्डुलिपि पोथीखाना की एक अमूल्य निधि है। इसी प्रकार उन्होने कोई एक हजार से अधिक आयुर्वेदिक नुस्खों (प्रयोगो) का सग्रह किया जिनके द्वारा बडी बडी बीमारियो का स्वल्प मूल्य वाली औषधियो से सहज में उपचार हो सकता है। इन नुस्खो की 'जिलाबन्दी' (सम्पादन) उनके भ्रातृज सवाई प्रतापसिंह ने सवत् 1857 वि. मे किया।

हस्तलिखित ग्रन्थ जगत् मे सर्वाधिक मूल्यवान और सर्वोत्कृष्ट कलाकृतियो के रूप मे मूल्याङ्कित है पोथीखाना मे सुरक्षित 'रज्मनामा' और 'शाही रामायण' की दुर्लभ प्रतियाँ। 'रज्मनामा' महाभारत का फारसी अनुवाद है तथा 'शाही रामायण' रामायण का, जो सम्राट् अकबर के लिए उसके दरबार के प्रमुख विद्वान् अबुल फजल के भाई फैज़ी ने किया था। इनका लिपिकार इनायत उल्लाह था तथा देवी मिश्र, शतावधान, मधुसूदन मिश्र और चतुर्भुज भावन आदि पण्डितो का इस अनुवाद को सम्पन्न करने मे पूर्ण योग रहा था। दशवन्त, बसावन, केशू, लाल, मुकुन्द, मुश्किन्, फारूककलमाक्, माधो, जगत, महेश, खेमकरण और तारा आदि चतुर चित्रकारो ने इन प्रतियो को चारु चित्रो मे

सुचित्रित किया जिनके नाम अनेक चित्रो पर दृष्टिगत होते है। ये चित्र इतने भव्य और उत्कृष्ट है कि आज भी मुँह बोलते लगते है। वास्तव में, ये चित्र अनुवाद से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो गये है। आज भी अच्छे अच्छे कलाकार इनको देखते है तो विस्मित रह जाते है।

ये प्रतियाँ दौलताबादी कागज पर लिखी गई हैं और इनका काम सन् 990 हि. (1582 ई) से चालू होकर 1589 ई. मे सम्पन्न हुआ। इन पर जहाँगीर के समय से लेकर शाहआलम के शासनकाल (1759 से 1806 ई) तक की मुहरे अकित है। परन्तु, जयपुर पोथीखाना की तोजियो मे इनका प्रथम इन्दराज (उल्लेख) तोजी सूरतखाना इ. भादवा सुदि 3 सवत् 1810 ला. चैत सुदि 2 संवत् 1813 मे हुआ है अर्थात् 1753 ई और 1756 ई के बीच ये जयपुर मे आ गई थी। यह विवेचनीय हैं। रज्मनामा मे 169 और रामायण मे 176 चित्र है। उक्त तोजी का समय सवाई माधवसिह (प्रथम) का है।

इसके अतिरिक्त अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रथो से भी पोथीखाना समृद्ध हुआ जिनमे अनेक स्थानीय दरबारी कवियो द्वारा एव स्वय महाराजा माधवसिंह (प्र) द्वारा प्रणीत है। इनके ज्येष्ठ पुत्र सवाई पृथ्वीसिंह के समय मे 'गीतापञ्च-रत्न' के दो गुटके सोने और रूपे की स्याहियो से लिखे गये जो अनेक विश्वप्रसिद्ध प्रदर्शनियो मे प्रदर्शित हुए हैं।

महाराजा सवाई प्रतापसिह का समय (1778-1803 ई), यद्यपि आतरिक अशान्ति और युद्धो का रहा परन्तु साहित्य और कला की उन्नति और अभिवृद्धि के लिए वह स्वर्णकाल ही माना जाता है। महाराजा स्वय उच्चकोटि के भक्त कवि थे। वे खड़ी बोली के आद्य प्रयोक्ताओ मे गिने जाते है। उनकी अनेक कृतिया यद्यपि नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से 'व्रजनिधिग्रन्थावली' के रूप मे सन् 1933 ई मे प्रकाशित हो चुकी हैं, फिर भी 13-14 अतिरिक्त कृतियाँ और स्फुट पदो के खरड़े अब भी पोथीखाना मे सुरक्षित हैं।[1] इनके कविमण्डल मे भी अनेक प्रौढ और प्रतिभाशाली विद्वान् कवि थे जिनकी रचनाएँ भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है। सवाई प्रतापसिह और उनके कविमण्डल की उपलब्ध सामग्री पर तीन शोध विद्वान् पीएच.डी. उपाधि प्राप्त कर चुके है और इतने ही आगे शोधरत है।

1. विवरण के लिए देखें, Literary Heritage of the Rulers of Amber and Jaipur, p. 78-79, (Introduction).

इन्ही महाराजा के समय मे पोथीखाना की व्यवस्था और ग्रथो और चित्रो के रख रखाव मे उल्लेखनीय सुधार हुआ। कवियो और पण्डितों की सख्या बढी, चित्रकारो को विशेष प्रश्रय दिया गया। सरबराकारो की सख्या मे भी वृद्धि हुई। अधिकतर ग्रथो के परचा, मिसरू, छीट, मखमल और खारवा तथा चर्म के गत्ते बधवाये गये; साथ ही, खुले पत्रो के ग्रथो को सादा एव ललित चित्रो युक्त काष्ठ-पट्टिकाओ के बीच मे रख कर सुरक्षित किया गया। ग्रथो को सुदृढ बाँध कर रखने के लिए भाँति भाति के रगबिरगे पुष्ट कपड़ो के वेष्टन भी तैयार कराए गये जो वस्त्रकलाविदो के लिए अध्ययन की वस्तु है।

राजा रामसिह, प्रथम (1667-1689 ई.) के अनन्तर सवाई जयसिंह ने तो अनेक प्रकार से पोथीखाना की ग्रथ सम्पदा को बढाया और सुव्यवस्थित किया ही, परन्तु उनके पश्चात् सर्वाधिक ग्रथ एकत्रित करने और सार सम्हाल करने का श्रेय सवाई प्रतापसिह को ही है। रामसिंह के समय मे प्राचीनतम विविधशास्त्रीय ग्रथो का सग्रह हुआ। सवाई जयसिंह ने उक्त प्रकार के ग्रथो के अतिरिक्त नवीन लेखन को भी प्रोत्साहन दिया। उनके समय मे धर्म और ज्योतिप तथा वेदान्त की मीमासा परक नवीन महत्त्वपूर्ण ग्रथो की रचनाएँ हुई। यह साहित्य मुख्यतः सस्कृत बहुल है। परन्तु सवाई प्रतापसिह ने भाषा ग्रथो के सग्रह और नयी रचनाओ पर अत्यधिक जोर दिया। विविध कवियों द्वारा महाभारत के सभी पदो के भाषा पद्यानुवाद, उद्धव-सन्देश विषयक पचीस से भी अधिक पचीसियाँ, लगभग तीन हजार स्फुट पद और शृगार हजारा और वीर हजारा ऐसे सुन्दर सकलन है कि उनके अध्ययन, समीक्षा और प्रस्तुतीकरण से हिन्दी, ब्रजभाषा और राजस्थानी भाषाओ के साहित्य मे शोध के अभिनव आयाम खुल सकते है। पचास से भी अधिक वातो का सग्रह अपने आप मे महत्त्वपूर्ण है।

सवाई जगतसिंह और जयसिंह के समय मे भी निश्चित परम्परा के अनुसार इस कारखाने में कार्य होता रहा, ग्रथो और नवीन रचनाओ की सख्या बढती रही। जगतसिह के समय मे, ब्रजभाषा के महाकवि पद्माकर की कृतियाँ और जयसिंह के समय मे सखाराम पर्वणीकर और नारायण पर्वणीकर की सस्कृत रचनाएँ भी सस्कृत साहित्य की मूल्यवान् निधि है।

मुद्रित पुस्तके एकत्रित करने का शुभारम्भ सवाई जयसिंह के समय मे हो चुका था। उनके द्वारा खरीदी हुई चालीसो पुस्तके ज्योतिष और अन्य

विषयो की प्राप्त है—उनमे प्राचीनतम सन् 1551 ई. मे छपी Pathway to Knowledge और 1557 ई की Ad Astrodum (Astrology) की ज्योतिष पुस्तके विशेष उल्लेखनीय हैं। परन्तु अपने समय मे कोई तीस से भी अधिक संस्कृत और हिन्दी ग्रथो की रचना कराने वाले सवाई रामसिंह द्वितीय (1835-1880 ई.) के समय मे मुद्रित ग्रंथो की उल्लेखनीय वृद्धि हुई। उन्होंने तत्कालीन प्रमुख भारतीय साहित्य की शोध-सस्थाओ के प्रकाशन और सूचीपत्र एकत्र किए। अनेक नाटक और उपन्यास भी उनके संग्रह मे उपलब्ध है।

इसी प्रकार सवाई माधवसिंह द्वितीय ने भी अपने पूर्वजो और विशेषत: पूर्ववर्ती सवाई रामसिंह की समस्त प्रवृत्तियो को चालू रखते हुए पोथीखाना के सभी पक्षो को अधिक समृद्ध बनाया। उनके समय मे प्रमुख भारतीय प्रकाशन सस्थाओ के विशिष्ट प्रकाशन तो प्राप्त किये ही जाते थे, वे सन् 1902 ई मे इगलैण्ड यात्रा से लौटते समय तत्रस्थ पुस्तक विक्रेताओ से भारत सम्बन्धी विशिष्ट पुस्तके साथ लाना न भूले। वे पुस्तकें पोथीखाना मे ही आकर जमा हुई। इन सब बातो के अतिरिक्त उनके समय में प्रकाशन की महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति का भी आरम्भ हुआ जिससे उनके विद्या और कला को चिरस्थायी बनाने के सकल्प का ज्ञान होता है। उनके द्वारा प्रकाशित निम्नलिखित कुछ अमर-गौरवशाली और महर्घ पुस्तके हैं—

1 Memorials of Jeypore Exhibition by T H. Hendley, 1883 A D (4 Volumes)
2 Jaipur Enamels by S Jacob and T H. Hendley. 1886 A.D.
3 Rulers of India and Chiefs of Rajputana by T. H. Hendley, 1897 A D.
4. Jeypore Portfolio of Architectural Details in 12 Vols. by S Jacob, 1898 A D.
5 Asian Carpets (Jaipur Collection) by T. H Hendley, 1905 AD
6 Catalogue of Jaipur Museum by T. H. Hendley, 1893 A D.
7. Notes on Jaipur by H L Showers, 1909 A.D.

इनके अतितिरिक्त बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, 'जर्नल ऑफ इण्डियन आर्ट' और विक्टोरिया एव एल्बर्ट म्यूजियम ऑफ आर्ट, लन्दन को भी उन्होंने

बहुमूल्य सहयोग तथा अनुदान दिये जिनके सूचीपत्र और प्रकाशन पोथीखाना संग्रह के मूल्यवान् अग है ।

विशिष्ट विद्वानो के पुरातन ग्रथ-सग्रहो की सुरक्षा के प्रति भी सवाई माधवसिह (द्वि) पूरे जागरूक थे। सवाई जयसिह के गुरु सुप्रसिद्ध रत्नाकर पौण्डरीक के घराने से कोई 2500 हस्तलिखित प्रतियो के सग्रह को उन्होंने सवत् 1962 वि. मे लाकर पोथीखाना मे सुरक्षित रखवाया जो अक्षुण्ण रूप से यहाँ विद्यमान है। खेद है कि इस महाराजा के ये तथा अन्य उज्ज्वल पक्ष अभी तक अधिक उजागर नही हुए है। कोई शोध विद्वान् इन पर अवश्य ही आकृष्ट होकर प्रकाश डालेगा।

इस प्रकार पीढी दर पीढी बढता हुआ पोथीखाना का सग्रह स्व महाराजा सवाई मानसिह (द्वि.) के समय तक एक विपुल ग्रथागार बन गया जिसमे चौदह हजार से ऊपर हस्तप्रतियाँ और अढाई हजार से अधिक मुद्रित पुस्तकें अछेड पड़ी थी। अधिकाश ग्रथ महाराजा की 'खास मुहर' मे रहते थे। कुछ ग्रन्थ विशिष्ट अतिथियो को दिखाने के लिए बाहर सजा दिये जाते थे और कुछ बहुत प्राचीन अथवा त्रुटित ग्रन्थ कारखाने मे प्रतिलिपि करने एव पाठशोधन के लिए लेखको और पण्डितो को दिए जाते थे। यही दैनन्दिन कार्य इस विभाग मे होता रहता था। ग्रन्थ बाहर न निकालने तथा बाहरी लोगो को न दिखाने का कारण यह था कि इससे कई प्रकार की उलझने उत्पन्न होने की आशका रहती थी। मुगलो के समय मे तो यहाँ के राजा जहाँ जहाँ मुहीम पर जाते वहाँ से कलात्मक वस्तुएँ और दुर्लभ्य ग्रन्थ आदि एकत्र कर लाते थे परन्तु अग्रेजो के समय जो बड़े अधिकारी आते वे तोहफे के रूप में वस्तुएँ पसन्द करते थे और उनको मना करना कठिन होता था। आमेर-जयपुर के राजाओ मे यह एक विशेप गुण रहा कि समय पडने पर वे अधिक से अधिक मूल्यवान् वस्तु दे देते थे परन्तु अपनी ग्रन्थ-सम्पदा को तो सदा छाती से लगाये ही रहे। सवाई रामसिह और माधवसिह के समय मे कितने ही ग्रन्थानुरागी बडे बड़े अग्रेज अधिकारियो ने ग्रन्थ प्राप्ति के लिए प्रयत्न किये परन्तु 'खास मुहर' के नाम पर अवसर टाल दिये गये। महाराजा मानसिह (द्वि) आधुनिक शिक्षा प्राप्त, देश-विदेशो मे घूमे हुए और प्रबुद्ध शासक थे। उन्होने इस सग्रह को सर्वजनोपयोगी बनाने की बात सोची। सन् 1945-46 ई मे उन्होने मद्रास विश्वविद्यालय के सस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ. सी कुनहन् राजा को पोथीखाना के ग्रन्थो की सूचियाँ बनाने को आमन्त्रित किया; वे आये भी परन्तु यह प्रयास सफल नही हुआ।

राजस्थान बना तब विलीनीकरण के समय सवाई मानसिह ने जो कुछ देना था वह सभी दे दिया परन्तु रखने की वस्तुग्रों ग्रौर विभागो के प्रसग मे विशेष ग्राग्रह करके पोथीखाना ग्रौर इसके ग्रन्थो को निजी सम्पत्ति मे रखा। यही नही, जब 1959 में उन्होने 'महाराज जयपुर सग्रहालय' का गठन किया तब भी सग्रहालय को वे ही ग्रथ दिये जो पहले से प्रदर्शित करने के लिए बाहर निकाले हुए थे। इनकी सख्या केवल 93 थी। 'खास मुहर' यथावत् रही।

सन् 1968-69 मे सूचियाँ बनाने का पुन: उपक्रम ग्रारम्भ हुग्रा ग्रौर उन्होने यह मन्तव्य प्रकट किया कि पहले सभी ग्रन्थो की सूचियाँ बन जावे ग्रौर फिर महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो को सुसम्पादित रूप मे सूचियो के साथ प्रकाशित किया जावे। ग्रन्थमाला का नाम 'सवाई जयसिह स्मृति ग्रन्थमाला' रखा जावे। परन्तु, दुर्देवशात् 1970 मे वे स्वर्गवासी हो गये। सन् 1971 मे वर्तमान महाराजा भवानीसिंह ने यह संग्रह 'महाराजा जयपुर म्यूजियम' का नाम 'महाराजा सवाई मानसिह द्वितीय म्यूजियम' रखकर इसको दे दिया। स्वर्गीय महाराजा की इच्छा का ग्रादर करते हुए सग्रहालय द्वारा ग्रथो की सूचियो ग्रौर ग्रन्थो का प्रकाशन कार्य चल रहा है। उक्त सग्रह प्राप्त होने से पूर्व सग्रहालय ने भी ग्रपने बजट से दो सौ ग्रधिक ग्रथो की खरीद की थी। इस प्रकार ग्रब संग्रहालय के ग्रथ सग्रह विभाग मे चौदह हजार के लगभग ग्रथ हैं जिनमे सायरग भाष्य सहित चारों वेद सहिताएँ, उपनिषद्, ब्राह्मण, स्मृतियां, धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराण, वेदान्त, न्याय, योग, मीमासा, तन्त्र, मन्त्र, भक्ति, काव्य, नाटक, चम्पू, व्याकरण, कोश, छन्द.शास्त्र, शिल्पशास्त्र, ग्रर्थशास्त्र, रत्नशास्त्र, राज-नीतिशास्त्र ग्रौर ज्योतिष ग्रादि सभी विषयो के महत्त्वपूर्ण ग्रथ सगृहीत है। भाषा ग्रन्थो मे हिन्दी ग्रौर राजस्थानी के ग्रनेक मानकग्रन्थो की प्राचीन प्रतियाँ भी सग्रह मे हैं। सस्कृत ग्रंथो मे सर्वाधिक प्राचीन प्रति सिंहतिलक सूरि कृत भुवनदीपक वृत्ति संवत् 1326 की लिखी है। इसी प्रकार विद्यानन्द व्याकरण की प्रति संवत् 1441 की है। हिन्दी ग्रौर राजस्थानी मे भी रामचरित मानस, महाभारत ग्रौर विविध पुराणों के भाषानुवाद, ग्राईन-ए-ग्रकबरी का हिन्दी ग्रनुवाद, कृष्ण-रुक्मिणी वेलि, पृथ्वीराज रासो, मानचरित ग्रौर सूरदास के पद ग्रादि 16 वी एवं 17 वी शती की प्रतियाँ उल्लेख्य हैं।

प्रकाशन के प्रसंग मे 1971 मे ग्रब तक निम्न सूचियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं—

(1) Catalogue of Manuscripts ın the Maharaja of Jaıpur Museum, 1971; इसमे पोथीखाना से आरम्भ मे प्रदर्शन हेतु दिए गए अचित्र सचित्र 93 ग्रथो और 272 सग्रहालय द्वारा क्रीत ग्रन्थो की सविवरण सोद्धरण सूची है।

(2) Lıterary Herıtage of the Rulers of Amber and Jaıpur, 1977, इसमे खास मुहर के लगभग 8000 ग्रथो की सूची है जिसमे प्रमुख प्रतियो के उद्धरण, उन पर शोधात्मक टिप्पणियाँ और आकर्षक एव सूचनात्मक पुष्पिकाओ की फोटो प्रतिकृतियाँ भी दी गई है।

(3) Catalogue of Dharmashastıa Manuscrıpts, 1984, इसमे 714 धर्मशास्त्रीय ग्रन्थो की सविवरण सोद्धरण सूची है।

(4) रामविलास काव्यम्, 1978; राजा रामसिंह (प्रथम) के गुरु विश्वनाथ चित्तपावन रानाडे रचित इस सस्कृत काव्य मे सवाई जयसिह द्वारा सम्पन्न वाजपेय यज्ञ का आँखो देखा वर्णन है।

(5) सवाई जयसिंह चरित, इसमें समकालीन भाषा कवि आत्माराम कृत सवाई जयसिह की जीवनी और कार्यकलापो का प्रत्यक्ष वर्णन है।

(6) प्रताप प्रकाश, 1983; कवि कृष्णदत्त समकालीन कवि द्वारा सवाई प्रतापसिह के दैनिक जीवन और तूगा युद्ध का प्रत्यक्ष वर्णन किया गया है।

(7) 'पद सूरदासजी का'—यह महाकवि सूरदास के जीवनकाल (सवत् 1639 वि) मे लिखी प्रति का यथावत् फोटो प्रकाशन है।

इनके अतिरिक्त (1) स्तोत्र ग्रन्थो की सूची, (2) अमृतराइ कृत 'मानचरित रासो', (3) नरोत्तम कवि कृत 'मानचरित काव्य' (4) 'गीत गोविन्द' प्रतियो की सविवरण सचित्र सूची, (5) सचित्र रहलो और पटरियो की सूची और (6) जयपुर एव आसपास के क्षेत्रो के मानचित्रो की सोदाहरण सूची भी प्रकाशन की तैयारी मे है। वस्त्रो और पोशाकों की एक सूची प्रकाशित हो चुकी है।

ग्रथो को अनुक्रम से बस्तो मे अशिथिल बन्धनो मे वेष्टित करके स्टील की आलमारियो मे रखा जाता है। प्रत्येक ग्रन्थ पर तेजाव रहित सागानेरी

कागज लपेटा जाता है। सभी आलमारियाँ एक सुदृढ कक्ष (Strong-room) मे रहती है। इच्छुक शोधार्थियो के लिए ट्रस्ट के अध्यक्ष अथवा निदेशक की अनुमति से वाछित ग्रन्थ पूर्व-आवेदन पर निकाल कर उपलब्ध करा दिये जाते है। फोटो-कॉपी अथवा जीरोक्स की व्यवस्था अभी तक नही है। विद्वान् शोध कक्ष मे बैठ कर टिप्पणियाँ आदि ले सकते है। अपने किए हुए कार्य की प्रतिलिपि ग्रन्थागार मे जमा कराने का नियम है। यदि पुस्तको मे उद्धरण दिए जावे तो उन पुस्तको की प्रति भी सन्दर्भ पुस्तकालय के लिए लेखक द्वारा देय होती है।

सन्दर्भ पुस्तकालय के लिए प्रति वर्ष चुनी हुई पुस्तके खरीदी जाती है जिनकी सख्या अब तक 8000 हो चुकी है। ग्रन्थो और सन्दर्भ पुस्तको की परिग्रहण पञ्जिकाएँ (accession registers) रखे जाते है जिनमें पुस्तको और ग्रथो का आवश्यक विवरण अकित होता है। इनको आरम्भिक सविवरण सूची ही कहा जा सकता है।

आगन्तुक शोध विद्वानो का विवरण उन्ही की लिपि मे एक अलग रजिस्टर मे रखा जाता है जिसके अवलोकन से विदित होगा कि प्रति वर्ष 100 से 125 तक देशीय एव विदेशी विद्वान् विविध विषयो पर अपने शोध कार्यो मे लाभान्वित होते है।

अध्यक्ष
पोथीखाना, सिटी पैलेस, जयपुर

राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी का का ग्रंथागार जोधपुर

विक्रमसिंह गून्दोज

स्थिति—

राजस्थानी शोध सस्थान जोधपुर रेल्वे स्टेशन से 6 मील उत्तर-पश्चिम दिशा मे चौपासनी विद्यालय के परिसर मे स्थित है। चौपासनी विद्यालय पश्चिमी राजस्थान की एक महत्त्वपूर्ण शिक्षण सस्था है जिसकी स्थापना सन् 1912 मे जोधपुर के तत्कालीन रीजेण्ट महाराजा सर प्रतापसिंह ने की थी। इसी विद्यालय के आहते में राजस्थानी शोध सस्थान का ग्रथागार स्थित है इससे 1 कि मी दूर चौपासनी गाव बसा हुआ है यहाँ तक शहर से सिटी बस की व्यवस्था उपलब्ध है।

स्थापना—

राजस्थानी शोध सस्थान की स्थापना 22 अगस्त सन् 1955 को चौपासनी शिक्षा समिति द्वारा की गयी। इसकी स्थापना मे चौपासनी शिक्षा समिति के तत्कालीन अध्यक्ष श्री भैरूसिह खेजडला तथा सचिव श्री विजयसिह सिरियारी का प्रमुख योगदान रहा। प्रारम्भ से ही सस्थान के सचालन का कार्यभार श्री नारायणसिंह भाटी को सौंपा गया। तब से लेकर आज तक वे ही इस सस्थान के निदेशक का पदभार सभाले हुए है। तीन दशको के अथक श्रम और सुनिश्चित योजनाबद्ध कार्य सम्पादन की बदौलत यह सस्थान इस क्षेत्र का एक विशिष्ट सस्थान है जो राजस्थान ही नही देश मे भी अपना स्थान रखता है। राजस्थानी भाषा साहित्य व मध्यकालीन भारतीय इतिहास मे पी.एच.डी. व डी लिट् की उपाधियो हेतु जोधपुर विश्वविद्यालय की ओर से मान्यता प्राप्त शोध केन्द्र है।

ग्रथागार—

सस्थान के पोथीखाने मे लगभग 17,000 हस्तलिखित ग्रथो का वृहत् सग्रह है जिसमे कोई एक लाख के लगभग छोटी बडी कृतियाँ होगी। यह सग्रह पुराने ठिकानो, मन्दिरो, मठो, उपाश्रयो, विद्वानो, चारण, भाटो व कबाडियो आदि के पास से प्राप्त हुआ तथा इस दिशा मे सतत प्रयत्नशील रहने के कारण लम्बे अन्तराल में इतना विस्तृत स्वरूप प्राप्त कर सका। पोथीखाने मे सगृहीत अधिकाश ग्रथ 15 वी शताब्दी से लेकर 19 वी शताब्दी तक के लिपिबद्ध किये हुये है जिसमे लगभग 5500 ग्रंथ सस्कृत (मूल सस्कृत व राजस्थानी टीका से युक्त दोनो मिलाकर) के है तथा शेप अन्य प्राकृत, ब्रज, हिन्दी तथा राजस्थानी भाषा मे लिखे हुये है। राजस्थानी की कृतिया इस सग्रह में अधिक है तथा जैन विषयक सामग्री का बाहुल्य है। जैनागम के मूल ग्रथों के अतिरिक्त अनेक टीकाएँ, बालवबोध, टब्बा, ढाले, सिज्झाये, रास, स्तवन, स्त्रोत, चोढालिये, सिलोके, वार्तिक आदि कृतियों मे जैन विषयक पुष्कल सामग्री सकलित है। सस्कृत के कुछ महत्वपूर्ण ग्रथो (विशेपकर ज्योतिप, आध्यात्म और धार्मिक) के अतिरिक्त उनकी टीकाएँ भी संगृहीत है। धार्मिक ग्रथो मे भागवत, पुराण, गीता, व्रत कथाएँ, मास महात्तम इत्यादि ग्रथ एवं उनकी राजस्थानी हिन्दी टीकाएँ भी उपलब्ध है।

सन्त साहित्य के अन्तर्गत विभिन्न सम्प्रदायो व पथीय साहित्य की कृतिया सन्तो की वाणियाँ, भजन, पद, दोहे एव परचिये इत्यादि भी बडी सख्या मे सगृहीत है। एक ही गुटके मे विभिन्न सन्तो की रचनाएँ प्राय: मिलती है जिनमे उनके उपदेश और ईशभक्ति का सदेश सन्निहित है। सत साहित्य में अवतार चरित्र नरहरिदास कृत (49), भक्तमाल पूरणदास कृत (988), सतवाणी सग्रह (7172, 8633) आदि भी द्रष्टव्य है।

चारण साहित्य के प्राचीन गीत, दोहे, छप्पय, नीसाणी, वचनिका, वेलि, झमाल आदि भी बडी सख्या मे सस्थान के ग्रथागार मे सुरक्षित है। इनमे डिगल गीतों का सग्रह सबसे प्रमुख और उल्लेख योग्य कहा जा सकता है। फुटकर डिगल गीतो के अतिरिक्त बहुत सी कृतिया केवल डिंगल गीतो के सग्रह की ही हैं जिनमे ग्रथाक—840, 996, 8234, 12218, 12289, 12290, 13496, 14025, 14027 द्रष्टव्य है। राजा महाराजाओ, ऐतिहासिक वीर पुरुषों, दानवीरो, जुझारो और व्यक्ति विशेष पर लिखे गीतो की बहुतायत है। राजस्थानी गद्य मे वाते, ख्याते, वचनिका, पीढियां, पट्टावली, वशावली, रुक्के,

परवाने, दवावेत, टीका, अनुवाद आदि अनेक ज्ञात अज्ञात ग्रथो मे जहाँ एक ओर राजस्थानी गद्य को प्राय· सारी प्राचीन विधाएँ देखने को मिलती है वही उनमे ऐतिहासिक और साहित्यक महत्व की सामग्री भी निहित है जिनका अन्वेषण और अध्ययन तत्कालीन परिस्थितियो और प्रसगो को भलीभाति समझने मे सहायक सिद्ध होता है ।

राजस्थानी साहित्य शास्त्र की छन्द, अलकार व रस सम्बन्धी अनेक कृतिया भी इस ग्रथागार मे उपलब्ध है जिनमे कवि मछाराम की स्वलिखित रघुनाथ रूपक की प्रति उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद सम्बन्धी स्फुट ग्रथ तथा अमृतसागर की राजस्थानी भाषा वचनिका की प्रतिया भी सगृहीत है। ज्योतिष, शकुन, शालिहोत्र (अश्वचिकित्सा) सम्बन्धी ग्रथो की अनेक प्रतिया यहाँ के सग्रहालय मे सुरक्षित है ।

इसके अतिरिक्त राजस्थानी लोककथाएँ, प्रेमगाथाएँ, मुहावरे (ओखाणा), ख्याल, शृगारिक गीत व दोहे, प्रेमपत्री के दोहे, बारहमासा, सात वार व पन्द्रह तिथ के दोहो के साथ साथ तन्त्र मन्त्र सम्बन्धी अनेक ग्रथ यहाँ सगृहीत है जिनसे यहाँ के सामाजिक जीवन को तथा लोक जीवन मे व्याप्त उनकी धारणाओ व विश्वासो को जाना जा सकता है। राजस्थानी लोक साहित्य बडा समृद्ध और महत्वपूर्ण है किन्तु बिखरी हुई अवस्था मे पडा है उसके प्रकाशन तथा समुचित विश्लेषण की आवश्यकता है। इस दिशा मे कार्य करने वाले शोधार्थियो को ऐसे ही स्फुट ग्रथो से फुटकर व बिखरी हुई अवस्था मे जो सामग्री है उसका सकलन सचयन करना होगा ।

राग रागिनियो से सम्बन्धित भी यहाँ अनेक ग्रथ उपलब्ध है जिनमे पारम्परिक एव पूर्व मे विकसित रागो के अतिरिक्त स्थानीय राग रागिनियो का निदर्शन भी हुआ है। इस प्रकार के राग रागिनी पद सग्रह की यहाँ करीव 20-25 प्रतियाँ सुरक्षित है जिनमे विभिन्न रागो से सम्वन्धित सामग्री निहित है ।

इसके अतिरिक्त सग्रहालय के सग्रह मे कुछ चित्रित ग्रथ भी है जिनमे राजस्थानी ख्याल, कल्पसूत्र, ढोला मारू री चौपाई, गीता महातम, एकादशी की कथा आदि प्रमुख है ।

शाहपुरा रेकार्ड—

सस्थान के पोथीखाने में भू. पू. शाहपुरा (मेवाड) स्टेट का रेकार्ड भी महत्वपूर्ण सग्रह है। शाहपुरा स्टेट का रेकार्ड श्रीमान शाहपुरा दरबार सुदर्शन देवसिह जी ने सस्थान को भेंट स्वरूप प्रदान किया था और आज वह इस ग्रन्थागार मे ही सुरक्षित है जिसका उपयोग शोधार्थी करते है। इस रेकार्ढ मे शाहपुरा स्टेट की Annual Administration Reports, विभिन्न अवसरो पर विभिन्न लोगो को लिखे गये पत्र, रूक्के परवाने, जागीर के पट्टो आदि ऐतिहासिक महत्व के दस्तावेजो की प्रतियाँ (नकले), विभिन्न ब्यौरो की वहियाँ तथा शाहपुरा राज्य के ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक और सास्कृतिक जीवन को उद्घाटित करने वाली आधारभूत प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध हैं। यह पूरा रेकार्ड 52 बस्तो मे सुरक्षित है तथा प्रत्येक बस्ते मे कितनी फाइले तथा प्रत्येक ग्रथ मे क्या सामग्री सगृहीत है इससी सूची बना ली गयी है।

प्राचीनतम ग्रथ—

राजस्थानी शोध सस्थान के ग्रथालय मे सबसे पुराना ग्रन्थ 'लोकनालि सूत्र' है। इस ग्रन्थ का केवल एक पत्र ही है जिसके एक ओर लोकनालि सूत्र तथा दूसरी ओर विचार गाथा लिपिबद्ध है। जैन विषयक इस ग्रन्थ की भाषा प्राकृत और राजस्थानी मिश्रित है। यह ग्रन्थ सवत् 1347 का लिखा हुआ है। ग्रथ के अन्त लिपिकर्ता या लेखक का नामोल्लेख नही है किन्तु लिपिकाल और लिपि स्थान का उल्लेख इस प्रकार किया गया है—

> "इति लोकनालि सूत्रं संपूर्णं ।। संवत् १३४७ वर्षे लिखितं बुर्हानपुर ।। लेख पाठकयोः सुभं भवतु कल्याणमस्तु ।।"

सस्थान के ग्रन्थागार मे ऐतिहासिक महत्व की सामग्री भी बहुत अधिक मात्रा मे सगृहीत है। ऐतिहासिक साहित्य के साथ ही साथ ऐतिहासिक ख्याते यहाँ उपलब्ध है उनमे विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ सकलित हैं। ये सारी ख्याते और ख्यातो के प्रसग, टिप्पण, घटनाएँ, वंशावलिया, विविध सूचनाएँ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारियो से युक्त हैं। इन ख्यातो मे अधिकाश ख्याते जोधपुर राज्य और यहाँ के जागीरदारो से सम्बन्धित है। इसके अतिरिक्त दूसरी ख्यातें भी उपब्ध हैं किन्तु जोधपुर के शासको की ख्यातो का विस्तार अधिक है तथा उसकी कई प्रतिया भी उपलब्ध हैं। इन सारी ख्यातो की भाषा राजस्थानी है।

सस्थान में उपलब्ध कतिपय महत्वपूर्ण ख्यातों व ग्रन्थो का संक्षेप मे उल्लेख करना यहाँ समीचीन होगा—

(1) ग्रन्थाक 64—

इस ख्यात मे जोधपुर के महाराजा अभयसिह से लेकर महाराजा मानसिंह तक का विवरण दिया गया है। इसका लिपिकाल वि. स. 1854 है तथा इसके कुल 156 पत्र है। इस ग्रन्थ मे अन्य विवरणो के अलावा जोधपुर राज्य की डावी जीमणी मिसल की विगत तथा राठौड़ो की खापे दी गयी है वह भी उल्लेख योग्य है।

(2) ग्रन्थाक 231—

इस ग्रन्थ मे बातो के रूप मे ऐतिहासिक विवरण दिया गया है तथा कुछ बाते तो ऐतिहासिक नायको को लेकर लिखी गई है। इस ग्रन्थ मे ऐतिहासिक प्रसग, घटनाएँ व प्रवाद तो पुराने भी उल्लेखित है परन्तु इसका लिपिकाल 1794 वि स. है। इसी ग्रन्थ मे 'सोजत रै मडल री बात' दी गई है इसमें विशेष उल्लेख योग्य बात यह है कि तत्कालीन सोजत कस्बे का नक्शा दिया गया है जिसका पेटर्न वर्तमान नक्शो से बिल्कुल अलग और अपने ही ढग का है। सोजत कसबे के चारो ओर स्थित गावो का उल्लेख भी इसमे किया गया है।

(3) ग्रन्थाक 298—

महाराजा मानसिह और महाराजा भीमसिह के काल के रूक्के परवानो की नकले इसमे सगृहीत है लगभग 48 पृष्ठो मे यह सामग्री सकलित है जिसका लिपिकाल 1863 है।

(4) ग्रथाक 8190—

इस ग्रन्थ मे मारवाड़ के जागीरदारो का सक्षेप मे विवरण दिया गया है। जागीरदारो के जागीर के गावो के साथ साथ उनकी वशावली भी दी गयी है। इसके पश्चात् मारवाड़ के सीमावर्ती जागीरदारो के हमलो का हाल दिया गया है। राव जोधा से लेकर राजाधिराज बखतसिह तक की विगत भी इसमे दी गयी है जो ऐतिहासिक महत्व की है। पृष्ठ 208 पर जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिह द्वितीय के मातमपोसी का हाल दिया गया है। इसी ग्रथ मे महाराजा तखतसिह की मातमपोसी का हाल तथा उनके वसीयतनामे की नकल दी गई है।

(5) ग्रन्थाक 10610—

इस वहीनुमा राठौडो की ख्यात मे वि. न 1860 मे वि स. 1910 तक के जोधपुर राज्य का विवरण मिलता है। अधिकाश विवरण महाराजा मानसिंह से सम्बन्धित है। इसका लिपि काल वि. स 1900 है। ग्रन्थाक 1069 भी महाराजा मानसिंह के राज्यकाल की ख्यात है जिसका लिपि काल वि स. 1929 है।

(6) ग्रन्थाक 10611—

इस ख्यात मे महाराजा मानसिंह तथा महाराजा तखतसिह से सम्बन्धित विवरण दिया गया है। इस वही के पिछले भाग मे लगभग 35 पृष्ठो मे परवानो और रूक्को की नकले दी गयी है। ये सारे पत्र ऐतिहासिक महत्व के है। अधिकाश पत्र जोधपुर के महाराजाओ द्वारा लिखे गये है जो उदयपुर, बून्दी, सिरोही इत्यादि विभिन्न राज्यो के राजाओ तथा जोधपुर के सामन्तो को लिखे गये हैं। पत्रो मे महाराजा अभयसिह द्वारा लिखवाये गये पत्रो की सख्या सबसे अधिक है।

(7) ग्रन्थाक 10613—

इस ग्रन्थ मे विविध फुटकर बातो के साथ साथ सिंध की ख्यात, भुटत(?) की ख्यात, जोधपुर नरेशो की वंशावली, देसां विलायता की ख्यात तथा बात परगने जोधपुर री आदि कृतियां सम्मिलित है। बात परगने जोधपुर री मे जोधपुर के सभी परगनो का विवरण मिलने की वजाय मंडोर की स्थापना से लेकर जोधपुर के निर्माण काल तक की बात तथा जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिह प्रथम तक की विगत ख्यातनुमा दी गयी है। महाराजा जसवन्तसिह प्रथम तथा उससे पूर्व जोधपुर के जितने राठौड़ शासक हुये उनसे सम्बन्धित प्रसगो की जानकारी के लिए यह ग्रंथ उपयोगी है। प्रत्येक महाराजा के जन्म, राज्याभिषेक, भाई बन्ध, रानियाँ, पासवाने, सन्तान आदि पारिवारिक और कौटुम्बिक जानकारी के अतिरिक्त उनके द्वारा किये गये युद्धाभियानो का विवरण भी दिया गया है।

(8) जैनियो की वंशावली—

ग्रन्थाक 12767 से 12770 तक चार भागो मे जैनियों की विस्तृत वशावली दी गयी है जिसमे जैनियों की शाखाओ, उपशाखाओ का विशद वर्णन तथा विभिन्न स्थानो पर उनके वसने का हाल दिया गया है। इस वशावली के

अन्तर्गत जैनो के गच्छो (खरतरगच्छ आदि) की जो पट्टावलियाँ दी गयी है वे बडे महत्व की है। इनके अध्ययन से तत्कालीन विशेषताओं से शोधार्थी परिचित हो सकते है। इन चारो भागो मे लगभग 650 पत्रो (1300 पृष्ठो) मे यह विस्तृत सामग्री सगृहीत है।

(9) महाराजा अभयसिंह जी री राड रा कवित्त--

ग्रन्थाक 12772 मे महाराजा अभयसिह के अहमदाबाद युद्ध के प्रसग में लिखे गये 166 कवित्त है। बखता खिडिया महाराजा अभयसिह का समकालीन ही नही उनका आश्रित भी था तथा अहमदाबाद युद्ध मे उसने स्वय ने भाग लिया था। इस युद्ध का प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण उसका विवरण अधिक विश्वसनीय कहा जा सकता है। अभयसिह के अहमदाबाद युद्ध सम्बन्धी दो राजस्थानी प्रबन्ध काव्य—सूरजप्रकास (कविया करणीदान कृत) तथा राज रूपक (रतनू वीरभाण कृत) प्रकाशित हो चुके है परन्तु इसी प्रसग के बखता खिडिया के इन कवित्तो का अपना महत्व है।

(10) बीकानेर राज्य की ख्यात (ग्रथाक 13497)—

इसमे बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह, जोरावरसिंह, गजसिह, सूरतसिंह तथा रतनसिंह तक की विगत दी गयी है।

(11) कछवाहो की ख्यात (ग्रथाक 13498)—

इस ग्रन्थ मे कछवाहों की वशावली, उनकी ख्यात, प्रवाडे एव उनसे सम्बन्धित कवित्त दोहे आदि के साथ महाराजा रामसिंह तक का वर्णन इसमे दिया गया है।

(12) विविध राजवशो की ख्यात (ग्रन्थाक 13499)—

इस ग्रन्थ मे भाटी, कछवाहा, जाडेचा, सोढा, साखला, चहुवाण, सीसोदिया, हाडा, देवडा, सोनगरा, खीची, सोलकी तथा भायलो की ख्यात इसमे दी गयी हैं। विभिन्न वशो के सम्बन्ध मे दी गयी यह सामग्री ऐतिहासिक महत्व की है तथा उस काल के सामाजिक परिवेश को समझने में भी सहायक सिद्ध हो सकती है।

(13) पटियाला के जाटों की ख्यात (ग्रन्थाक 13500)—

इस ग्रन्थ का नामकरण पटियाला के जाटो की ख्यात किया गया है किन्तु प्रारम्भ के 2 पृष्ठो के अतिरिक्त पूरे ग्रथ मे उनसे सम्बन्धित और कोई

सामग्री नही दी गयी है । इस ग्रन्थ मे राठौडो की ख्यात, पुष्करणा ब्राह्मणो की उत्पति की विगत, परगने जालोर की जूनी विगत, भीनमाल, डीडवाना, मेडता और सीवाने परगने का सक्षिप्त हाल दिया गया है । सांचोर परगने की तथा उसके गावो की विगत विस्तार से दी गयी है । प्रमुख नगरो, व बसाने वाले का नाम तथा सवत् की सूची पृ. 170 पर संकलित है । इसके अतिरिक्त खीचियो व पवारो की ख्यात के कुछ टिप्पण भी दिये गये है जो सक्षिप्त विवरण होने के बावजूद भी महत्वपूर्ण तथ्यो से युक्त है ।

(14) राजस्थान के राजवशों की पीढियाँ (ग्रंथाक 13501)—

इस ग्रन्थ मे राजस्थान के राजपूतो की वशावली की विगत के साथ-साथ विशेषकर यहाँ के राजा महाराजाओ तथा महत्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा किये गये युद्धाभियानो आदि पर टिप्पण भी दिये गये है । पूरी ख्यात मे ऐसे ही फुटकर सक्षिप्त और सटीक तथा ऐतिहासिक घटनाओ से सम्बन्धित टिप्पण देखने को मिलते है जो तत्कालीन तथा सदर्भित इतिहास लेखन मे बडे उपयोगी सिद्ध हो सकते है ।

(15) राजपूतो री विगत (ग्रन्थांक 13502)—

इसमे जोधपुर के शासकों की ही विगत है । इसी ग्रथ मे जोधपुर राज्य मे जिन लोगो को परधानगी प्राप्त हुई उन सारे मुसायबो की विगत सवत् सहित दी गयी है साथ ही जिनको दीवानगी ईनायत हुई तथा वगसी पद ईनायत हुये उनकी भी सूची दी गयी है । इसके अतिरिक्त कुछ फुटकर ऐतिहासिक प्रसग भी दिये गये हैं ।

(16) ग्रन्थांक 13504—

इसमे राठौडों की ख्यात से सम्बन्धित कुछ स्फुट पत्र है साथ ही राठौड़ों की खापो (उपशाखाओं) जैसे—सिधल, धाधल, गोगादे, देवराजोत, महेचा, कोटड़िया इत्यादि की खांपवार वशावली दी गयी है । उदावतो की खाप के साथ गाववार वशावली दी गयी है । यहाँ के पट्टेदारो (जागीरदारो) का विवरण भी फुटकर रूप मे वर्णित है ।

(17) रीति किरियावर री वही (ग्रन्थांक 13506)—

इस वही मे जोधपुर राज्य के रीत किरियावरों (राजघराने के रीति रिवाज और दस्तूरो) का उल्लेख हैं । जोधपुर राजघराने के विभिन्न अवसरो

पर होने वाले दस्तूर जैसे—दस्तूर जनाना वगैरा रौ, सालग्रह रौ दस्तूर, चामुण्डा जी री थापना रौ दस्तूर, तीवार होळी दीवाळी वगैरा रौ दस्तूर, दस्तूर दीवाळी, दस्तूर दसरावौ, दस्तूर सिरदार जोधपुर आवे तरै, किले मुसद्दी जावे तीरो, पीटी पागुरा रौ दस्तूर, उदैपुर राणा जी आवै ती सामै पधारण रौ दस्तूर, कवर तथा बाईजी जलमै तरै अमल गळावण रौ दस्तूर आदि का विवरण दिया गया है। ये प्रसग रोचक होने के साथ ही साथ उस युग के राजवर्गीय जीवन को उद्घाटित करते है। इसके अतिरिक्त इस बही मे अन्य दूसरी भी कई महत्वपूर्ण जानकारियाँ जैसे—कौनसे महाराजा ने कहाँ शादी की, बाईजी सूरजकवर के विवाह और मायरे का वर्णन, कवराणी जी अपने पीहर गये उसका मुहूर्त्त, राजलोक के कुरब कायदो तथा डोले आये उनकी विगत इत्यादि भी मिलती हैं। यहाँ के जलाशयो व इमारतों के निर्माण की तथा नागौर के कमठो की विगत भी इसमे स्फुट रूप से दी गयी है।

(18) ग्रन्थाक 13507—

मारवाड के राठौड शासको का स्फुट वर्णन इसमे प्रारम्भ से लेकर राव अमरसिह तक दिया गया है। साथ ही मुगल सम्राट अकबर, शाहजहाँ, औरगजेब आदि सम्बन्धित स्फुट हाल भी इसमे दिया है। मारवाड के राठौड़ो के हाल के पश्चात् फुटकर बाते लिखी हुयी है तथा अन्त मे कछवाहो, हाडों की वशावली एव भाटियों की स्फुट ख्यात इसमे दी गई है।

(19) चैनजी वणसूर री ख्यात (ग्रथाक 14268)—

चैनजी वणसूर कृत इस ख्यात मे सीवाना परगने की विगत विस्तार के साथ दी गयी है। प्रारम्भ मे सीवाना परगने के गावो तथा उसके पट्टेदारो का उल्लेख हुआ है तथा इसके बाद मे सीवाने परगने की गाववार जमाबन्दी (जमा-वार) दी गयी है जिसमे गाव के उपभोक्ता का नाम, रेख, रकवा आदि उल्लेखित हैं। इसके अतिरिक्त पचभदरा के खानियो की सूची, साचोर परगने तथा जालोर परगने के गावो की विगत दी गयी है। जालोर के गावो की विगत पटी अनुसार दी गयी है। अर्थात् क्षेत्र विशेष मे जिस जाति विशेष का बाहुल्य या आधिपत्य रहा उस क्रम मे गावो की विगत दी गयी है जिसमे—पटी दयावटी रा गाव, पटी राठौड वटी, चहुवांणा री पटी इत्यादि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त इस ख्यात मे ऐसे गाव जो सूने व वीरान हो चुके उनका, खालसे के गांवो का, पट्टे के गांवो का तथा सासण में दिये हुए गावो अर्थात् चारणों को दान मे

दिये गये गावो की सूची भी दर्शायी गयी है। परगना जालोर की खापवार पट्टो की विगत भी इसमे दी गयी है इसके पश्चात् सोजत परगने की विगत भी दी गयी है जिसमे सोजत कसबे के घरो की (जाति अनुसार) विगत भी दी गयी है। ख्यात के अन्त मे परबतसर, नागौर इत्यादि परगनो की सक्षिप्त विगत दी गयी है।

(20) शाहपुरा की ख्यात (ग्रथाक 16659)—

इस ख्यात मे शाहपुरा (मेवाड) राज्य का इतिहास लिखा हुआ है। शाहपुरा के सस्थापक महाराजा श्री सूरजमल जी से लेकर महाराजा श्री उम्मेदसिंह जी तक की विगत विस्तार के साथ इसमे दी गयी है। कुल 480 पृष्ठो की इस ख्यात मे शाहपुरा राज्य से सम्बन्धित जो सामग्री संकलित है वह ऐतिहासिक महत्व तथा बहुत ही महत्वपूर्ण कही जा सकती है।

इस प्रकार यहाँ कुछ ऐतिहासिक महत्व के ग्रथो की ओर ही सकेत किया गया है किन्तु इस ग्रथागार मे जैसा कि पूर्व मे भी कहा जा चुका है विभिन्न विषयो से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सामग्री सगृहीत हैं विशेषकर जिसमे जैन साहित्य, सत साहित्य, भक्ति साहित्य, राजस्थानो साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद, तन्त्र मन्त्र, शकुन और शालिहोत्र सम्बन्धी ग्रथो की अधिकता हैं। विविध विषयो की सामग्री का इतना बड़ा संग्रह होने के कारण यह ग्रथालय राजस्थान ही नही अपितु भारत के ग्रथागारो मे अपना स्थान रखता है।

इस ग्रथागार के सारे हस्तलिखित ग्रथो को स्टील की अलमारियो में व्यवस्थित करके रखा गया है तथा उनकी सुरक्षा का भी समुचित प्रवन्ध किया गया है। इन ग्रथो की विस्तृत सूची बनी हुयी है जिसको देखकर शोधार्थी अपने इच्छित ग्रंथ को आसानी से खोज सकता है। चार भाग केटलाग (सूचीपत्र) के भी प्रकाशित हो चुके हैं आगे भी केटलागिग (सूचीकरण) का कार्य चल रहा है। शोधार्थियो को यहाँ हर सम्भव मदद दी जाती है। ग्रथो की लिपि इत्यादि पढ़ने मे यहाँ के अधिकारीगण उनकी सहायता करते हैं तथा विषय से सम्बन्धित उनकी समस्याओं का उचित निराकरण करने को सदैव तत्पर रहते हैं। ग्रथागार के उपयोग के लिए शोधार्थियो को पूर्व अनुमति लेकर प्रतिलिपि करने की सुविधा है। महत्वपूर्ण ग्रंथो का माइक्रोफिल्मिग करवाने की भी योजना विचाराधीन है।

अब तक इस ग्रथागार का उपयोग देश विदेश के करीब 250 शोध विद्वानो तथा शोधार्थियो द्वारा किया गया है जिसमे डॉ. ओमानन्द सारस्वत, डॉ. रामप्रसाद व्यास, डॉ. आनन्दप्रसाद दीक्षित, डॉ. मोतीलाल मेनारिया, डॉ. देवीलाल पालीवाल, डॉ केशवचन्द्र सिन्हा, डॉ आलमशाह खान, डॉ प्रकाश आतुर, डॉ कृष्णा दिवाकर, प्रो ब्रजलाल एम सावलिया, डॉ मन्जीतसिह आलूवालिया आदि प्रमुख है। विदेश से आने वाले शोधार्थियो मे मिस डोरी एम. क्लिग (U S. A), डॉ स्टेर्न हेनरी (पेरिस), डॉ. कालीचरण बहल (शिकागो), थामस ए टिम्बरी (हारवर्ड वि वि), नार्मन पी जिगलर (U. S A), विशाखा एन. देसाई (मिशिगन वि वि), रुपर्ट स्नेल (लन्दन), जे. एस हावली (वाशिगटन), जान क्लेडर (कनाडा), जीन लुईस (न्यूयार्क), पीटर स्टूर्म (प जर्मनी), करीन स्कोमर (केलीफोर्निया) आदि के नाम गिनाये जा सकते है जिन्होने विगत मे इस ग्रथागार का उपयोग किया। इसके अतिरिक्त समय समय पर देश विदेश के विशिष्ट व्यक्तियो ने इस ग्रन्थागार का अवलोकन कर इसकी गतिविधियो की सराहना की।

ग्रन्थागार के अतिरिक्त इस सस्थान की और भी कई गतिविधियाँ है। जिनमे सर्वप्रथम है 'परम्परा' नामक शोध पत्रिका (त्रैमासिक) का प्रकाशन। इसके सम्पादक सस्थान के निदेशक डॉ नारायणसिह भाटी है। इस शोध पत्रिका की सबसे बडी विशेषता यह है कि इसका प्रत्येक अक विशेषाक के रूप मे प्रकाशित होता है तथा अपनी स्तरीय सामग्री के कारण शोध जगत मे इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इस पत्रिका मे राजस्थान के साहित्य, इतिहास, लोक साहित्य तथा सस्कृति सम्बन्धी सामग्री सुसम्पादित करके प्रकाशित की जाती है। इस पत्रिका के लिए जहाँ अन्य साधनो से सामग्री जुटायी जाती है वहाँ सस्थान मे सगृहीत ग्रथो का भी उपयोग किया जाता है। अब तक इस पत्रिका के 72 भाग प्रकाशित हो चुके है जिनमे सस्थान मे सुरक्षित कई कृतियाँ प्रकाशित की गयी है।

सस्थान समय समय पर राजस्थानी साहित्य, इतिहास, कला और सस्कृति के अधिकारी विद्वानो के भाषण का आयोजन भी करता है। इनके ये महत्वपूर्ण भाषण यहाँ से प्रकाशित भी किये जाते है। इस भाषणमाला मे अब तक डॉ.

फतसिंह, डॉ दशरथ शर्मा, श्री ए. पी. व्यास, डॉ कालीचरण वहल, डॉ. रघुवीरसिंह सीतामऊ, डॉ मनोहर शर्मा, श्री गोपालनारायण वहुरा और श्री अगरचन्द नाहटा आदि के भाषण आयोजित किये गये। इसके अतिरिक्त सस्थान की ओर से विभिन्न सम्मेलन व गोष्ठियो का आयोजन भी किया जाता है। राजस्थान हिस्ट्री काँग्रेस, दर्शन काँग्रेस, राजस्थानी साहित्य सम्मेलन, राजस्थानी साहित्य अकादमी आदि की वैठकें तथा सन् 1979 में राजस्थान हिस्ट्री काँग्रेस का 12 वा अधिवेशन संस्थान द्वारा आयोजित किया गया। भारतीय इतिहास अनुसधान परिषद के तत्वावधान मे राजस्थान सम्बन्धी ऐतिहासिक ग्रन्थो के विस्तृत सर्वेक्षण का कार्य भी इस सस्थान के निदेशक डॉ नारायणसिंह भाटी के निर्देशन मे सम्पन्न हुआ। परम्परा के अतिरिक्त विशिष्ट ग्रंथो का प्रकाशन भी इस सस्थान द्वारा किया जाता है जिसके अन्तर्गत अव तक छोटे वडे कोई 23 ग्रन्थ प्रकाशित किये जा चुके है।

सस्थान के ग्रन्थालय मे प्राचीन चित्रों (पेण्टिग) का भी एक संग्रह है। राजपूत शैली के लगभग 300 चित्रों के इस संग्रह में वारहमासा, ऐतिहासिक पुरुषो, भगवान के अवतारो, राग-रागिनियो, शिकार, विवाह व अन्य उत्सवो, ढोला मारू, लैला मजनू आदि प्रेम गाथाओ के नायक नायिकाओ आदि के चित्र सगृहीत है जिसमे मीरांवाई और प्रसिद्ध वीर भक्त जयमल जी मेड़तिया का चारभुजा की पूजा करते हुओ का चित्र विशेष उल्लेखनीय है।

सस्थान का अपना एक पुस्तकालय भी है जिसमे मुद्रित पुस्तकें सगृहीत हैं। पुस्तकालय की पुस्तको की संख्या तो अधिक नही है किन्तु इसमें प्राचीन अनुपलव्ध तथा महत्वपूर्ण सन्दर्भित ग्रथो का सग्रह है जो शोधार्थियो के लिए वहुत ही उपयोगी कहा जा सकता है क्योंकि अन्यत्र सुलभ न होने वाली कई दुर्लभ पुस्तकें भी यहाँ उपलव्ध है।

शोध छात्रो को यहाँ अपेक्षित सहयोग व निर्देशन भी प्राप्त होता है। वाहर से आने वाले शोधार्थियो के लिए आवासीय सुविधा का भी प्रावधान है। पत्राचार से जानकारी चाहने वाले शोधार्थियो को भी यथा सम्भव जानकारी

दी जाती है। इस प्रकार जितना बन पडे उतना सहयोग शोधार्थी को यहाँ देने का प्रयास किया जाता है तथा यहाँ के निदेशक व अन्य कर्मचारी एक मिशन की भावना से कार्य करते है। उनकी इसी निष्ठा और लगन के परिणाम स्वरूप यह सस्थान अपने अति अल्प साधनो के बावजूद भी महत्वपूर्ण प्रगति करने मे सफल हो सका तथा भविष्य मे भी इस दिशा मे सतत सचेष्ट और प्रयत्नशील है।

शोध सहायक
राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी,
जोधपुर

सम्यक् ज्ञान भण्डार : रावटी

सुशील कुमार मूथा

कुछ वर्षों पूर्व (लगभग 6-7 वर्ष) रावटी मे जैन विद्वान् जौहरीमल पारीख ने जोधपुर तथा आसपास के गावो मे इधर-उधर बिखरे हस्तलिखित ग्रन्थों को एक स्थान पर एकत्रित किया और एक भण्डार की स्थापना की जिसका नाम 'सम्यक् ज्ञान भण्डार' है। जैन सस्था का नाम 'सेवा मन्दिर' है। समय के साथ इस सस्था की अनेक शाखाएँ उनके कार्यो के अनुरूप बनाई गई और सस्था का नाम 'जिन दर्शन प्रतिष्ठान' अप्रेल 1981 मे रखा गया।

जिन दर्शन प्रतिष्ठान के सम्यक् ज्ञान भण्डार 'सेवा मन्दिर', रावटी मे अब तक पाँच ज्ञान भण्डारो की लगभग दो हजार (2000) हस्तलिखित ग्रथ आ चुके हैं।

(1) श्री मुनि सुव्रतस्वामी मन्दिर ज्ञान भण्डार—क्षेत्रपाल चबूतरा, जोधपुर (श्री सम्पतराज भसाली) 296 ग्रन्थ

(2) श्री यशसूरि व श्री केशरगणि ज्ञान भण्डार श्री महावीर स्वामी मन्दिर जूनी मण्डी, जोधपुर। पूज्यश्री जयानन्दजी महाराज साहिब की आज्ञा खरतरगच्छ समुदाय अध्यक्ष महोदय 825 ग्रन्थ

(3) श्री रत्नप्रभा ज्ञान भण्डार, जैन मन्दिर श्री ओसियाँ तीर्थ (श्री मिलापचन्द जी ढड्ढा) 589 ग्रन्थ

(4) तिवरी मन्दिर ज्ञान भण्डार (श्री गुमानमल जी पारख) 16 ग्रथ

(5) श्री जहारमल जी गुरा साहिब का भण्डार सेवान्ची गेट, जोधपुर स्व देवेन्द्रमुनि जी 119 ग्रथ

कुल ग्रन्थ एक हजार आठ सौ पैतालीस (1845) इस भण्डार मे स्थित है। जिनका सूचीकरण का कार्य सम्पन्न हो चुका है। इन ग्रथो के सूचीकरण के समय मैने स्वयम् सहायक शोध कर्त्ता के रूप मे कार्य किया है।

इन ग्रन्थो के अलावा कुछ फुटकर (अलग-अलग) पन्ने भी कुछ बण्डलो मे स्थित है जिनमे स्तवन, सझाय, मन्त्र-तन्त्र, योग, ज्योतिष, साधु नियम विषयक सामग्री है।

इस भण्डार मे स्थित हस्तलिखित ग्रथो को इस प्रकार वर्गीकृत किया गया है।

भाग 1 जैन आगम
भाग 2 जैन तात्विक व औपदेशिक
भाग 3 जैन भक्ति व क्रिया
भाग 4 इतिहास व वृतान्त
भाग 5 जैनेत्तर धार्मिक ग्रथ
भाग 6 व्याकरण भाषा साहित्य आदि
भाग 7 विविध

सम्यक् ज्ञान भण्डार के बहुत से ग्रथो मे लेखन सवत् नही दिया गया है। भण्डार मे प्राप्त ग्रन्थो मे निम्नलिखित भाषाएँ है—प्राचीन अपभ्र श, सस्कृत, मारवाडी, गुजराती, प्राकृत, हिन्दी तथा डिगल।

ग्रन्थ मूल, टीका, टब्बार्थ, गद्य-पद्य के रूप मे है।

कई प्रतियो मे शास्त्र वर्णित ग्रन्थाग सख्या दी गई है जो उस प्रति मे उपलब्ध ग्रन्थाग्र सख्या से मेल नही खाती है। एक ही परिमाण और एक ही समान पत्रो की सख्या वाले एक ही विषय पर एक ही ग्रथ की दो अलग अलग प्रतियो मे ग्रथाग्र सख्या भिन्न दी गई है।

ग्रन्थो के कुल अक्षरो की सख्या को बत्तीस (32) से भाग देने पर आने वाला भजनफल ग्रथाग कहलाता है। (प्राचीन अनुष्टुप छन्द अक्षर का परिणाम)

सम्यक् ज्ञान भण्डार मे स्थित कुछ ग्रथो के नाम—

आचाराङ्ग सूत्र, सूत्रकृताङ्ग, ठाणग, समवायाङ्ग, भगवती विपाक सूत्र, कल्पसूत्र, महानिशिथ सूत्र, कालिकाचार्य कथा, अर्थ सित्तरी, अध्यात्मकल्पद्रुम,

अहिंसा प्रकरण, कपूर प्रकरण, ऋषिमण्डल, कर्म 158 प्रकृति, उपदेश तरगिणी, अक्षय तृतीया व्याख्यान, ज्ञान पचमी कथा, योग विधि, योग अनुष्ठान ।

इतिहास से सम्बन्धित ग्रन्थो के नाम—

अभय कुमार चरित्र (चन्द्रतिलक), अनाथी मुनि सधि (खेममुनि स 1745) डिगल मे, अंजना सुन्दरी रास पउमचरिय (विमलसूरि स. 1502) प्राकृत मे, वस्तुपाल चरित्र, विक्रम चरित्र (स 1490), भंसालियो की वशावली, अष्टाध्यायी, धातु पाठ, पाणिनी व्याकरण शिक्षा, कुमार सम्भव, किरातार्जुन (भारवि), अष्टलक्ष्मी (समयसुन्दर), चंपावत भाटियो री झमाल (डि पद्द), मेघदूत, रघुवश, भतृहरिशतक त्रय (भृतहरि स. 1641) तथा हास्यादि कथाएँ (राजशेखर) ।

सम्यक् ज्ञान भण्डार मे सबसे पुराना ग्रथ (प्राचीन) (अब तक) हेमचन्द्राचार्य कृत योगशास्त्र टीका (स्वपक्ष टीका) है यह सस्कृत भाषा मे है तथा सवन् 1465 मे पुण्यप्रतसूरि (लेखक) द्वारा लिखी गई है इसका स्वरूप गद्य है तथा कुल पत्रो की सख्या 402 है । (इसका क्रमांक भाग 2 मे दस (10) है । परन्तु यह क्रमांक स्थाई नही रहेगा क्योकि सूची पत्र छपते समय क्रमांक भागो के अनुसार न होकर सभी ग्रथ एक ही क्रमाक से लगातार होगे ।)

सबसे नया (अर्वाचीन) ग्रथ स्तवन सग्रह है यह गयवर मुनि द्वारा स. 1972 मे लिखा गया है । यह ग्रथ डिंगल पद्य के रूप मे है इसमे कुल 24 स्तवन है तथा कुल पत्रो की सख्या 25 हैं ।

महत्त्व—

सम्यक् ज्ञान भण्डार सेवा मन्दिर, रावटी के अधीन जोधपुर सम्भाग तथा दूसरे दूरस्थ प्रदेशो मे स्थित बिखरे हस्तलिखित ग्रथों को सुरक्षित तथा सूचीकरण का कार्य करने की एक अच्छी योजना बनाई गई है । इस योजना के तहत जैसलमेर के तपागच्छ, लोकागच्छ, यति श्री डू गरजी तथा थारूशाह के भण्डारो के ग्रंथो का सूचीकरण किया गया है तथा हाल ही मे बालोतरा मे एक बडे भण्डार के हस्तलिखित ग्रन्थो का सूचीकरण का कार्य चल रहा है । परन्तु जौहरीमल जी की अस्वस्थता के कारण यह कार्य अभी पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं हुआ है । आशा है उनका स्वास्थ्य ठीक होने के पश्चात् यह कार्य पूर्ण किया जायेगा ।

इनके द्वारा जोधपुर नगर मे स्थित निम्नलिखित जैन भण्डारो का उपरोक्त के अलावा भी सूचीकरण किया गया है। जिनकी कुल सख्या लगभग 14000 (चौदह हजार) है।

(1) कुन्थुनाथजी का मन्दिर, सिन्धियो का मौहल्ला, जोधपुर।
(2) केसरीयानाथ का ज्ञान भण्डार, मोती चौक, जोधपुर।
(3) शान्तिनाथ का मन्दिर, कोलरी, नवचौकिया, जोधपुर।
(4) जैन ज्ञान भण्डार, निम्बाज की हवेली, कपड़ा बाजार, जोधपुर।

रिसर्च स्कॉलर
राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी,
जोधपुर

प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर का ग्रंथ संग्रह

डॉ० मनमोहन स्वरूप माथुर

प्राचीन साहित्य, सस्कृति, इतिहास, कला, धर्म, दर्शन, भाषा, पुरातत्त्व आदि की दृष्टि से भारत भर मे राजस्थान राज्य का ऐतिहासिक महत्त्व रहा है। इस राज्य मे पग-पग पर हमें हमारी प्राचीन सास्कृतिक सम्पदा देखने को मिलती है, जिनका भारतीय इतिहास मे विशिष्ट स्थान है।

विगत कुछ वर्षो से कतिपय सस्कृति-प्रेमियो के प्रयत्नो से इनके सग्रहण एव सुरक्षा के लिए सरकारी और निजी प्रयास कार्यरत हैं। किन्तु हमारी संस्कृति की व्यापकता के समक्ष वर्तमान मे किये जा रहे ये प्रयास नगण्य प्राय: है। वैज्ञानिक साधनो का भी अभाव खटकता है। इन्ही अभावो को लक्ष्य मे रखकर विद्या प्रचारिणी सभा, भूपाल नोबलस् कॉलेज, उदयपुर ने प्रताप शोध प्रतिष्ठान नामक शोध सस्थान की स्थापना 1970-71 ई. मे की। प्रतिष्ठान का सतत् प्रयास यही रहा कि साहित्य, सस्कृति, इतिहास, कला, धर्म, दर्शन, भाषा, पुरातत्त्व आदि के इस राजस्थली पर बिखरे मोतियो को संगृहीत कर उन्हे सरक्षित किया जाय तथा इनके आधार पर राष्ट्रीय दृष्टि से इतिहास की एक ऐसी समृद्ध रचना की जाय, जिसका महत्त्व सर्वांगीण इतिहास स्तर पर बने।

अपने कथित उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रतिष्ठान ने निम्नलिखित योजनाएँ आरम्भ की थी—1. सग्रहालय 2. शोध-पुस्तकालय 3. प्राचीन ग्रंथो का सम्पादन 4 इतिहास, पुरातत्त्व आदि का अनुशीलन 5. अनुसन्धान कार्य का विकास 6 अनुसन्धान कार्य का प्रकाशन और 7. शोध-पत्रिका का प्रकाशन।

इन योजनाओ मे से अधिकाश योजनाएँ अपनी पूर्ण सफलता में कार्यरत है। राजस्थान के मेवाड अञ्चल की अतीत समृद्धि को सरक्षित करने एव उसे प्रकाश मे लाने का बीडा कर्नल टॉड ने उठाया था। अत: सग्रहालय एव शोध पुस्तकालय कर्नल टॉड के नाम से सचालित है। प्रताप शोध प्रतिष्ठान के इस सग्रहालय मे मेवाड़-मारवाड़ से सम्बन्धित महान् विभूतियो और विभिन्न राग रागिनियो से सम्बन्धित लगभग सौ तैल चित्र और पैंटिग्स सगृहीत है, पैंटिग्स किशनगढी कलम से सम्बन्धित है। 13 वी शताब्दी के तीन ताम्र पत्र भी इस सग्रह मे अपना महत्त्व रखते हैं। इसमें से अधिकाश सामग्री को प्रतिष्ठान ने भूपाल नोबल्स कॉलेज सस्थान के भूतपूर्व व्यवस्थापक स्व. ठाकुर गुमानसिंह राठौड़, रूपा हेली से प्राप्त किया।

शोध पुस्तकालय मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अब अप्राप्य लगभग 250 पुस्तके एव 150 हस्तलिखित ग्रन्थ सुरक्षित हैं। हस्तलिखित ग्रन्थो के सग्रह मे जैन कवियो का गुटका, सगत रासौ एव रामायण की प्रतियाँ विशेष महत्त्व रखती है।

पूर्व उल्लिखित विषयो से सम्बन्धित प्राचीन एव महत्त्वपूर्ण विषयो से सम्बन्धित रचनाओ की शोध, सम्पादन एव प्रकाशन की कड़ी मे सगत रासौ का सम्पादन एव प्रकाशन हो चुका है। मेवाड के इतिहास से सम्बन्धित अन्य महत्त्वपूर्ण सामग्री के तीन अन्य प्रकाशन है—झाला मान शतक, जन नायक प्रताप एव प्रताप द पैट्रोयट (अग्रेजी)।

मेवाड और राजस्थान की साहित्यिक और सास्कृतिक परम्परा के सरक्षण हेतु प्रताप शोध प्रतिष्ठान एक शोध पत्रिका का प्रकाशन 'मज्झमिका' नाम से करता है। अभी तक इसके तीन महत्त्वपूर्ण और सगृहणीय अक प्रकाशित हो चुके है।

राजस्थानी विभाग,
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, शोध केन्द्र, जोधपुर का ग्रंथागार

श्री सुखसिंह भाटी

प्राचीन काल से ही राजा लोग निरन्तर युद्धों मे व्यस्त रहे हैं। उनका घर घोड़ो की पीठ पर होता था, हर समय एक स्थान से दूसरे स्थान पर पड़ाव होता था और जान हथेली पर लेकर स्वाधीनता के लिए निरन्तर दुश्मनो से मुठभेड़ किया करते थे। इतना कठिन एव अनियमित जीवन विताने के उपरान्त भी इन्होने कला, साहित्य व संगीत को विशेष प्रोत्साहन दिया। इस दिशा में अपने समय मे इन्होने जो रुचि दिखाई वह निश्चय ही प्रशसनीय है। उनके द्वारा निर्मित भव्य भवन, अनेक महान कवियो, कलाकारों को सरक्षरग देना और साहित्य के भण्डार की श्रीवृद्धि करना वर्तमान को एक चुनौती है।

ऐसे ही साहित्य कला एव सगीत को प्रोत्साहन देने वालो मे मारवाड़ के राजाओ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहाँ के महाराजाओं मे महाराज मानसिह (ई. सन् 1803-1843) अत्यन्त ही विद्वान, कवि एव गुणी थे। इनमे शक्ति एवं सरस्वती का मरिग काचन सहयोग देखने को मिलता है, ये साहित्यकारो एव कलाकारो के आश्रयदाता थे, इनके दरवार मे अनेक साहित्यकार रहते थे जिनमे वाकीदास का महत्वपूर्ण स्थान है। डिंगल साहित्य की सवसे अधिक रचनाएँ महाराजा मानसिंह के समय मे हुई। इन्ही महाराजा ने अपने पूर्वजो का साहित्य व अपने स्वय के राज्यकाल मे रचित रचनाओ के भण्डार को सुरक्षित कर 2 जनवरी 1805 मे एक पुस्तकालय का रूप दिया जिसका नामकरण 'पुस्तक प्रकाश' किया गया।

प. विश्वेश्वरनाथ रेऊ के समय मे 'पुस्तक प्रकाश' को 'सुमेर पब्लिक पुस्तकालय' मे स्थानान्तरित कर दिया गया था। रेऊजी के वाद गे रियासतो के

विलीनोकरण के समय इस सग्रह को उम्मेद भवन पैलेस मे अनुसन्धान कर्ताओं के लिए खोल दिया गया था।

सन् 1977 मे महाराजा गजसिह जी ने, इस अमूल्य धरोहर को 'मेहरान-गढ म्यूजियम' मे अनुसन्धान कर्ताओ की सुविधाओ सहित, एक अलग भवन मे डॉ नारायणसिंह भाटी के निर्देशन मे स्थापित करा दिया है तथा इसका नाम 'महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, शोध केन्द्र' रखा गया है क्योंकि महाराजा मानसिह का इसके निर्माण मे सबसे अधिक योगदान रहा है।

जोधपुर राज्य मे साहित्य की परम्परा ईसा की 14 वी शताब्दी से ही है, राव वीरम (सन् 1374-1783) के समय मे 'ढाढी बहादुर' का 'वीरमायण' काव्य ग्रथ तैयार हुआ जिसमे मारवाड के 'राव वीरम' और उनके पुत्र 'गोगादेव' की वीरता का वर्णन बहुत सुन्दर ढग से किया गया।

राव मालदेव के शासनकाल मे चारण आसानन्द उनका कृपापात्र था, उनकी डिगल मे रचित 'उमादे भटियाणी री कविता' अपनी विशेषता रखती है। सवाई राजा सूरसिह के राज्य काल मे कवि माधोदास ने 'राम रासो' ग्रन्थ की रचना की जो एक महत्वपूर्ण ग्रथ है।

राजा गजसिह (प्रथम) के समय मे अनेक ग्रन्थो की रचना की गयी थी जिनमे 'हेम कवि' का डिगल भाषा मे 'गुणभाषाचित्र', कवि केसवदास का 'गजगुणरूपक', हरिदास बनावत कृत 'राजा गजसिह जी री कविता' एव 'राव अमरसिघ गजसिघोत रा रूपक' उल्लेखनीय है।

महाराजा जसवन्तसिंह (प्रथम) (सन् 1638-78) विद्वानो के आश्रयदाता होने के साथ ही स्वय भी बड़े विद्वान थे, इनके लिखे ग्रथ 'भाषा भूषण',[1] 'आनन्द विलास', 'अनुभव प्रकाश', 'अपरोक्षसिन्दान्त', 'सिद्धान्तबोध', 'सिद्धान्त-सार' व 'चन्द्रप्रबोघ' है।[2]

---

1 'भाषाभूषण' ग्रन्थ नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

2 'आनन्द विलास', 'अनुभव प्रकाश', 'सिद्धान्तबोध', 'अपरोक्षसिद्धान्त', 'सिद्धान्तसार' जोधपुर दरबार की आज्ञा से रेऊजी ने 'वेदान्तपचक' नाम से गवर्नमेट प्रेस, जोधपुर से प्रकाशित करवा दिया था।

महाराजा जसवन्तसिह के दीवान मुहता नणसी की लिखी ख्यात 'मु हणोत नैणसी री ख्यात' राजस्थान की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक रचना है ।[1]

महाराजा अजीतसिह (सन् 1707-24) का काफी समय युद्ध मे बीता था। ये साहित्य, भाषा और काव्य के वडे विद्वान होने के साथ वीर पुरुष थे। इनके समय मे कई विद्वानो ने ग्रन्थो की रचना कीजिसमे भट्ट जगजीवन कृत 'अजीतोदय महाकाव्य'[2] और दीक्षित वालकृष्ण रचित 'अजीत चरित्र' प्रमुख है ।

महाराजा अभयसिह के समय भट्ट जगजीवन का ही 'अभयोदय' (सस्कृत) व कविया करणीदान का 'सूरज प्रकास' (काव्य)[3] और चारण विरभाण का वनाया 'राजरूपक' डिंगल भाषा मे है । इन्ही के समय मे चारण कवि पृथ्वीराज ने 'अभय विलास' नामक ग्रन्थ काव्य मे लिखा था ।

महाराजा वखतसिह के समय मे देव स्तुति एव भजन लिखे हुए है एवं महाराजा भीमसिह के समय कवि कर्ण का लिखा 'अलकार समुच्चय' ग्रन्थ लिखा गया था ।

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश मे अनेक विषयो पर सस्कृत के लगभग तीन हजार ग्रथ है । इनमे से कुछ उत्कृष्ट ग्रन्थ अन्यत्र दुर्लभ है, वे निम्न हैं—

(1) अजीत चरित्रम्—यह एक ऐतिहासिक महाकाव्य है, इसके रचियता महाकवि वालकृष्ण दीक्षित है। जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिह (प्रथम) (ई सन् 1638-78) के सुपुत्र महाराजा अजीतसिह (ई सन् 1707-24) के उज्ज्वल चरित्र का इस महाकाव्य मे विशद वर्णन किया गया है । इसमे 10 सर्ग हैं । यद्यपि काव्य के अन्त मे इसके रचनाकाल का उल्लेख नही है, तथापि ग्रन्थ के आरम्भ के श्लोको से कवि का महाराजा अजीतसिह के समकालीन होना सिद्ध हो जाता है ।

---

1 'मुहता नैणसी री ख्यात' श्री बद्रीप्रसाद साकरीया के सम्पादन मे राज प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा चार भागो मे प्रकाशित हो चुकी है एव 'मारवाड रा परगनो री विगत' डॉ नारायणसिह भाटी के सम्पादन मे तीन भागो मे राज प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा प्रकाशित की गयी है ।

2. 'अजीतोदय महाकाव्य' श्री नित्यानन्द जी द्वारा सम्पादित महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश मे 1980 मे प्रकाशित हुआ है जो मूल रूप मे सस्कृत मे है ।

3 'सूरज प्रकास' राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा प्रकाशित हुआ है ।

महाराजा अजीतसिंह महान योद्धा थे इसके साथ ही राजनीति मे भी बहुत कुशल थे। कवि ने इस महाकाव्य मे स्थान स्थान पर इनके प्रभावशाली शब्द-चित्र प्रस्तुत किये हैं। अन्ति पक्ति इस प्रकार है—

> "इति श्री दीक्षित बालकृष्ण कृतौ मयाराजा अजीत चरित्रे महाकाव्ये अज दुर्ग नागपुर जय दिल्लीपति संधि-राज्याभिषेक कवि सूक्तिरचन नाम दशमः सर्गः ॥"

(2) व्रतार्क—यह ग्रन्थ धर्मशास्त्र का है। इसमे 296 पत्र है। इसका रचियता प शकर भट्ट है। इनके पिता का नाम प. नीलकण्ठ था। प. शकर भट्ट अपने विषय का महान विद्वान है। इस ग्रन्थ मे लेखक ने वर्ष भर में प्रचलित मुख्य व्रतों का सागोपाग वर्णन किया है। व्रत की विधि, पूजा और उसके सम्बन्ध में कथा आदि का सविस्तार उल्लेख किया है। धर्म शास्त्र के स्थान स्थान पर प्रमाण दिये है। पुराणो से अनेक कथाएँ उद्धृत की गई हैं। अन्त मे ग्रथ मे वर्णित व्रतो की अनुक्रमणिका भी दी गई है। आरम्भ मे भगवान सूर्य की स्तुति की गई है। अन्त में दी गई पुष्पिका से प्रतीत होता है कि लेखक मीमांसा शास्त्र का भी महान विद्वान था। इस ग्रन्थ का लिपिकाल विक्रम सवत् 1878 भाद्र वद शुक्का 2 मगलवार है।

(3) राज्याभिषेक पद्धति—इसके लेखक प. चक्रपाणि मिश्र है। इस ग्रन्थ मे राजाओं के राज्याभिषेक की विधि विस्तारपूर्वक दी गयी है। यह विधि वेद मूलक है। विद्वान लेखक ने आरम्भ मे ही साम-विधान से इसके सम्बन्ध मे विस्तृत उद्धरण दिया है। अनेक स्थानों पर विद्वानो के द्वारा कराये गये राजाओं के राज्याभिषेक उत्सव देख कर और अनेक शास्त्रो का अवलोकन कर इस महान ग्रन्थ की रचना की है। अन्तिम श्लोक मे लेखक ने अपना परिचय भी दिया है। वह मथुरा का निवासी था। इस ग्रथ का लिपिकाल वि स. 1676 चैत्र वदि 2 है। जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंह (प्रथम) के राज्यकाल मे जोधपुर मे इस ग्रथ की प्रतिलिपि की गई।

(4) आयुर्वेद महोदधि—इस ग्रथ के रचयिता प सूषेण वैद्य है। आयुर्वेद का यह अनुपम ग्रथ है। इस ग्रन्थ मे फल, क्षीर, दधि, तैल आदि को अनेक वर्गों में विभक्त किया है। इनके सेवन की विधि भी है। साथ ही पथ्य-अपथ्य का भी वर्णन है। हरीतकी (हरड़) के अनेक गुणो का उल्लेख किया है। वात, कफ के रोगो को दूर करने वाली, जठराग्नि को उद्दीपन करने वाली और पाचन

शक्ति को बढाने वाली औषध एवं विधिएँ दी गयी है। इस ग्रन्थ का लिपिकाल वि. स 1788 श्रावण कृष्णा 6 सोमवार है।

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश मे सस्कृत के अलावा राजस्थानी एव हिन्दी के लगभग दो हजार हस्तलिखित ग्रन्थ हैं इनमे काव्य, कोश, ज्योतिष, नीति, नाथ साहित्य, योग, वार्ता, शालिहोत्र व सगीत विषय पर अनेक दुर्लभ ग्रथ है इनमे से निम्नलिखित महत्वपूर्ण ग्रथ है।

राजरूपक—

इस ग्रथ मे जोधपुर नरेश महाराजा अजीतसिह के सुपुत्र महाराजा अभयसिंह की यशोगाथा का वर्णन है। महाराजा अभयसिह एक महान राजनीतिज्ञ और वीर योद्धा थे। उन्होने अनेक युद्धो मे शत्रुओ के दात खट्टे कर विजयलक्ष्मी को वरण किया था। इस ग्रथ के लेखक श्री रतनू वीरभाण है। इनकी कविता बड़ी ओजस्विनी है। युद्ध के शब्द चित्र इतने सजीव है कि पढ कर या सुन कर तुरन्त हृदय मे वीर रस का सचार हो जाता है। लेखक महाराजा अभयसिंह के समकालीन प्रतीत होता है।

अवतारचरित—

इस ग्रथ मे भगवान विष्णु के प्रमुख 24 अवतारो का सविस्तार वर्णन किया गया है। भगवान राम की कथा रामायण से और भगवान श्रीकृष्ण की कथा भागवत के अनुसार है। इसकी भाषा हिन्दी है। इस विशालकाय ग्रन्थ के लेखक श्री नरहरदास बारहठ है। इस ग्रथ की रचना विक्रम संवत् 1733 में राजस्थान के प्रसिद्ध तीर्थ पुष्कर मे की गई। इसका उल्लेख कवि ने 'अवतार चरित्र' के अन्त मे किया है। जोधपुर नरेश महाराजा जसवन्तसिह (द्वितीय) के राज्यकाल मे यह ग्रन्थ लिखा गया है।

सगीतसार—

यह ग्रंथ सगीत के सम्बन्ध मे है। संगीत तीन भागो मे विभक्त किया गया है।

"नृत्य गीत च वाद्य च त्रयं संगीतमुच्यते"

प्रस्तुत ग्रथ मे नृत्य, गीत और वाद्य तीनो का वर्णन है। वास्तव मे यह अनेक ग्रंथों का सार है। आरम्भ मे इसका नाम 'सगीत दर्पण' दिया है। इसके लेखक श्री हरिवल्लभ है। इसके अन्त मे लेखक ने लिखा है—

"हरिवल्लभ भाषा रच्यो सब संगीत को सार ।
तामें संपूरण भयो नृत्यविचारू अपार ।।"

इस ग्रंथ का लिपिकाल वि. स. 1735 है ।

भाषा भूषण—

मारवाड़ के अधिपति वीर शिरोमणि महाराजा जसवन्तसिह (प्रथम) तलवार के धनी थे, किन्तु साथ ही साहित्य शास्त्र मे भी इनका महत्वपूर्ण स्थान है । संस्कृत साहित्य शास्त्र मे जो स्थान पीयूषवर्षी जयदेव के 'चन्द्रलोक' का है वही प्राचीन हिन्दी के साहित्य शास्त्र मे इनके 'भाषा भूषण' का है । इस ग्रथ मे नायक नायिका का भेद तथा अलंकारो का विशेष रूप से वर्णन है । इस पर श्री हरिचरण दास की विस्तृत टीका है । टीका के अनेक उदाहरण दिये गये है । अन्त मे टीकाकार ने लिखा है—

"संवत् अठारह सौ बितै तापर चौतीस जात ।
टीका कीनी पूस दिन गुरू दसमी अवदास ।।"

इस ग्रन्थ का लिपिकाल सवत् 1900 मिती जेठ सुद 13 गुरूवार है । लिपिकर्ता थानवी अमरदान है । यह ग्रन्थ जोधपुर मे लिखा गया है ।

महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश ग्रन्थालय मे सबसे प्राचीन ग्रथ सस्कृत के हैं ।

'मैत्रायणीयोपनिषद' (ग्रन्थाक सख्या 243)—यह ग्रन्थ उपनिषद विषयक है । इसका लिपिकाल विक्रम सवत् 1496 है । यह ग्रन्थ स्वर सहित है । इसकी पत्र सख्या 33 हैं ।

'लघुस्तव:' (ग्रथाक सख्या 3017)—यह ग्रन्थ स्तोत्र विषयक है । इसका लिपिकाल वि स. 1397 है । यह ग्रन्थ टीका सहित है । टीकाकार श्री सोम-तिलक सूरि है । अन्त मे टीकाकार के वश का वर्णन है ।

मानसिंह पुस्तक प्रकाश ग्रथालय मे हस्तलिखित ग्रन्थो के अतिरिक्त अनेक विषयो पर पाँच हजार से अधिक बहियाँ भी हैं । इनमे 'जनना ड्योढी री जमा खर्च री बहियाँ', 'विवाह री बहियाँ', 'कपड़ो रे कोठार री बहिया' व 'जवाहर खाना व टकसाल री बहियाँ प्रमुख हैं । ये बहियाँ मेहरानगढ म्यूजियम ट्रस्ट के मैनेजिंग ट्रस्टी महाराजा गजसिंह जी साहब ने भेंट की है । ये बहियाँ महाराजा अजीतसिंह के समय से महाराजा सरदारसिंह के समय तक की हैं ।

'जनाना ड्योढी री जमा खर्च री वहियाँ' में जनाना ड्योढी मे दैनिक, माहवारी व वार्षिक होने वाले खर्चे का विस्तृत वर्णन किया गया है जिसमें उस समय के सामाजिक व आर्थिक जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इन वहियाँ मे शोधार्थियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण सामग्री है। इसमे राज्य की ओर से महारानियों आदि के खर्चे के रूप मे गाव के पट्टे दिये जाते थे उनकी आय-व्यय का विस्तृत वर्णन किया गया है।

'विवाह री वहियाँ' मे उस समय के रीति रिवाजो, दस्तूर का सागोपाग वर्णन किया गया है तथा प्रत्येक सस्कार का भी वर्णन किया गया है। जैसे — सगाई व टीका दस्तूर, व्याह, देवताओ की जात, अभीट का होना, चूड़ा, पचमासी, अगरणी, जन्म उत्सव, होली पर ढू ढ, भवर-कवरजी का पहले पहल मुजरा करवाना, जडुला उतारना, सितला माताजी के तुछमान होने पर दस्तूर आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त राज परिवार के किसी सदस्य के देवलोक (मृत्यु) होने पर अनेक प्रकार के होने वाले क्रिया विधानो का भी वर्णन किया गया है।

'कपड़ो रे कोठार री वहियाँ' मे राज्य परिवार व राज्य को सेना आदि के लिए जो कपड़े मगाये जाते थे। उन कपडो की किस्म, कहाँ सेमगाये जाते थे उस स्थान का नाम, कपड़ो का मूल्य, नाप आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। इन कपडों मे जरी आदि का काम व दर्जियो की सिलाई व इनकी हाजरियाँ आदि का भी वर्णन किया गया है। विवाह शादी के उत्सवो पर जो कपडे भेजे जाते थे उनका पूरा-पूरा विवरण दिया गया है। राज्य परिवार की ओर से अपने सेवको, मन्दिर के पुजारी व अन्य लोगो को दिये जाने वाले कपड़ो का भी विस्तृत वर्णन मिलता है।

ग्रन्थालय मे 'विहाव री वहियाँ' मे वही न. 833 सबसे पुरानी है जो वि. स 1776 की है जिनमे महाराजा अजीतसिंह की पुत्री सूरजकंवर के विवाह का वर्णन है जिनका विवाह आमेर नरेश सवाई जयसिंह के साथ हुआ था। इस वही मे उस समय के रीति-रिवाजो का सागोपांग वर्णन है। विवाह मुहूर्त का गुड़ राज परिवार के अलावा राजपूतों की विभिन्न खापो व ब्राह्मणों को और दर्जियों, नाईयों आदि को भी बाँटने का विस्तृत वर्णन किया गया है। विनायकजी की पूजा, बनोला, तोरण वन्दना, फेरा, देवस्थानो पर जात देना,

दहेज का देना, कपड़ो के कोठार से कपड़ा आभूषण देना आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

इसके अतिरिक्त 'जवाहर खाना' की बही न. एक जो वि. स. 1777 की है तथा महाराजा अजीतसिह के समय की है। उस काल में कपड़ो के कोठार में जरी के काम का विस्तृत वर्णन है एवं उनकी खरीद का वर्णन है।

उस समय मे प्रचलित विभिन्न वस्त्रों व कपड़ो पर जरी के काम की जानकारी तो मिलती ही है साथ ही साथ राजघराने के रीति-रिवाजो एव विभिन्न अवसरो पर दिये जाने वाले वस्त्रो, प्रसिद्ध स्थानों के कपड़ों, कपड़े रखने वाले दुकानदारो, कपड़ो को रगने वाले रगरेजों, कोर-गोटा लगाने वाले कारीगरों, कपडे का मूल्य, नाप, कपड़ों को खरीदने के लिये प्रचलित मुद्रा आदि के सम्बन्ध मे भी जानकारी मिलती है।

इसमे कई प्रकार के कपड़ो[1] व पाघो[2] का विस्तृत वर्णन मिलता है। पाघे राजघराने के रीति-रिवाज के अनुसार विभिन्न अवसरो पर राजघराने से सम्बन्वित लोगो को बधवाई जाती थी या विवाह के अवसरो पर पाघे बधवाई जाती थी।

'विहाव री बहियो' मे एक बही अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है जिसके बही न. 832 है। जो वि. स 1907 व ई. सन् 1850 की है। इस बही मे जोधपुर के महाराजा तखतसिह का विवाह जामनगर (गुजरात) के जाम साहब की पुत्री से होने की विगत है। जोधपुर महाराजा स्वय विवाह हेतु वहाँ नही गये तथा अपने एक खाण्डे (एक प्रकार की तलवार) को विवाह हेतु भेजा। इस बही मे बारातियो का नाम सहित विवरण है। खाण्डे का दुल्हे की तरह जामनगर मे स्वागत किया गया था। उक्त खाण्डे के साथ जामनगर की राजकुमारी ने तीन (भांवरे) फेरे खाये थे। चौथा फेरा जोधपुर महाराजा तखतसिह जी ने 'काकाणी' नामक गाव मे खाया था। प्रस्तुत बही में उस समय के रीति-रिवाज का सागोपांग वर्णन किया गया है।

---

1. कीमखाप, पोतीया, दुपट्टा, वाला चुन्दडी, आसावारी, कीरमची, घाघरा, काचली, चोली, जामा, सरेजन, वागा कुरता आदि।
2. पाघ मुकनी, पाघ पट्टी, पाघ सफेद मुकनी, पाघ लाल, पाघ मुलमुल, पाघ कसुमल, पाघ कोमली, पाघ छीट, पाघ लठेरी, पाघ जरी, पाघ वादलाई आदि।

ग्रन्थागार के बहियो में कई बहियाँ ऐसी है जिसमे उस समय के कमठों का विस्तार पूर्वक विवरण दिया गया। उस समय के मजदूरों के नाम, दैनिक मज़दूरी, पत्थर, लकड़ी, चूना आदि के मूल्यो आदि का भी ज्ञान होता है। ऐसी ही एक बही नं. 823 है। जिसमे जोधपुर के महाराजा तखतसिंह ने किले मे 'तखत विलास' नामक एक महल का निर्माण करवाया था उसका विवरण है। वि स. 1915 (ई. सन् 1858) मे नाजर हरकरण की देखरेख मे यह यह कमठा हुआ था। इस बही मे पत्थर की खान के मजदूर एव कारीगरों के नाम, चवालियो के नाम, चूना की खरीद एवं स्थानो के नाम एव दैनिक मजदूरी एव माहवारी मजदूरी का वर्णन है। इसके अतिरिक्त महल मे लकड़ी का काम करने वाले सुथारो आदि के नाम, लकड़ी खरीदने का स्थान एवं मूल्य का भी विस्तृत वर्णन दिया गया है। इस महल में लकडी की छत बनवाने के लिए जिन कारीगरो को काम दिया गया है उनके नामो की सूची एव मजदूरी का भी वर्णन है। इस महल मे रगो के कारीगरो, रग मंगाने के स्थान, रग के नाम आदि का वर्णन किया गया है।

'कमठो री वही' मे एक वही महाराजा तखतसिंह के समय की है जिसमे उनकी राणावत रानी द्वारा गोल नामक स्थान पर एक नया भवन बनवाने का उल्लेख है। इससे प्रतीत होता है कि रानियाँ भी स्थापत्य कला तथा भवन निर्माण में रुचि रखती थी।

वही वि. सं. 1917 की है। जिसमें कमठे का अच्छा उल्लेख है। कमठे मे काम करने वाले मजदूरों, पानी लाने वाले मजदूर की मजदूरी, कमठो के उपयोग मे लिये जाने वाले पत्थर, चूना, ककड़, मूरड़ आदि सामग्री के मूल्यो के बारे में पर्याप्त जानकारी दी गयी है।

'जनाना ढ्योढी री जमा खरच री वहियो' में रानियों के दैनिक व माह-वारी जमा खर्च का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। राज्य की ओर से प्रत्येक रानी को आय हेतु गाव दिये जाते थे। जो एक से अधिक गांव होते थे। उस गांव की पैदावार (कृषि) का कुछ हिस्सा हासल (कर) के रूप मे रानियों के हिसाब में जमा होता था। उसी जमा राशि से उनका दैनिक खर्च चलता था। उनके दैनिक खर्च मे ईनायत करना, देवस्थान में मन्दिर बनवाना, बावड़ी बनवाना, पुजारियों को भेंट देना आदि प्रमुख था। ऐसी ही एक वही नं. 271 है, जो वि. सं. 1905 की महाराजा मानसिह के समय की है। उनकी रानी

भटियाणी जो कि जैसलमेर की राजकुमारी थी, उनको महाराजा ने जोधपुर के तीन गांव आणन्दपुर, पादुबड़ी व मु डवा गांव दिया था।

इस बही में प्रत्येक गाव के लोगो के नाम एव हासल (कर) की मात्रा एव दिन आदि का वर्णन किया गया है। इस तरह इसमें एक माह की आय व खर्च का विगतवार वर्णन है।

'जनाना ड्योढी की बही' न 272—

प्रस्तुत बही वि. स. 1889 की है, इसमें रोजाना का जमा खर्च (आय-व्यय) का विस्तृत विवरण दिया गया है। ड्योढी की रानियो के नाम, परगने के गावों से आने वाली आय के अतिरिक्त ड्योढी के सेवको आदि को दैनिक व माहवारी वेतन दिये जाने का उल्लेख भी इस बही में किया गया है।

'कपड़ों के कोठार' की बही न. एक जो महाराजा विजयसिह के शासन काल की है। वि. स. 1843 की है। बही के प्रारम्भ मे हरीप्रबोधनी एकादशी पर राजघराने की ओर से कपड़े किये गये उसका विस्तृत विवरण किया है। इसके अतिरिक्त कई प्रकार के कपडो की खरीद का विवरण है।

वही न. 14 महाराजा मानसिंह के शासनकाल (वि. स. 1865) की है। इसमे महाराज कुमार छतरसिह के लिये कपड़ो की खरीद का विवरण है एव इनकी सगाई पर आने वाले कपडो का विस्तृत विवरण दिया गया है। कपड़ो की खरीद के साथ इनकी सिलाई एवं दर्जियो के दैनिक वेतन आदि का वर्णन भी दिया गया है जो उस समय की आर्थिक स्थिति को दर्शाता है।

इस प्रकार उपरोक्त बहियों मे इतिहास के शोधार्थियो के लिये महत्वपूर्ण सामग्री सगृहीत है जिसके शोध खोज की आवश्यकता है।

प्रकाशन :—

(1) अजितोदय महाकाव्यम्—

अजितोदय महाकाव्यम् कविवर श्री जगजीवन भट्ट द्वारा रचा गया, स्वर्गीय प. श्री नित्यानन्द दाधीच द्वारा सम्पादित किया गया है। श्री उम्मेद

प्राच्य विद्या ग्रथमाला के अन्तर्गत छपकर तैयार हुआ है। ग्रथमाला के सम्पादक डॉ. नारायणसिंह भाटी है। अजितोदय महाकाव्यम् का प्रकाशन 1980 मे हुआ था।

इतिहासीक दृष्टि से यह ग्रथ बहुत ही महत्वपूर्ण है। जिसमें वि. सं. 1730 से 1781 तक की सम्पूर्ण घटनाओ का विस्तृत वर्णन किया गया है।

श्री जगजीवन भट्ट द्वारा रचित यह ग्रथ संस्कृत की उच्च कोटि की कृति होने के साथ उस समय के राजस्थान विशेषकर मारवाड की सामाजिक और सांस्कृतिक विशेषताओं को भी उद्घाटित करती है।

(2) हिन्दी-राजस्थानी ग्रथों का सूचीपत्र—

श्री उम्मेद प्राच्य विद्या ग्रथमाला के अन्तर्गत छप कर तैयार किया गया हिन्दी-राजस्थानी ग्रन्थो का सूची पत्र इस ग्रन्थालय का दूसरा प्रकाशन है। इसका सकलयिकर्ता पं कालुराम व्यास है।

(3) पाबू-प्रकाश—

इस ग्रन्थालय का तीसरा प्रकाशन 'श्री गजसिंह राजस्थानी ग्रन्थमाला' के अन्तर्गत मदाकवि मोड़जी आशिया का लिखा 'पाबू-प्रकाश' है। जिसके सम्पादक डॉ नारायणसिंह भाटी है।

राजस्थान मे राठौड़ो के मूल पूरूष 'राव सीहा' थे जो मारवाड मे आये थे। उनके पुत्र 'राव आसथान' ने पाली पर राज्य कायम किया था। इसके पश्चात् खेड पर भी अधिकार कर लिया और उसके पुत्र गद्दी पर बैठने के पश्चात् अपने राज्य का विस्तार कर अपने पुत्र धांधल को कोलुगढ का राज्य दिया। धाधल का पुत्र पाबू राठौड़ हुआ था जो इस पुस्तक का नायक हैं तथा जिसकी गणना यहाँ के लोक देवताओं में होती है।

प्रस्तुत पुस्तक पाबू प्रकाश में 14 वी शताब्दी के सामाजिक राजनैतिक जीवन एवं राजपूतो की वचनवद्धता पर प्रकाश डाला गया है।

भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद नई दिल्ली की ओर से इस ग्रथालय मे सस्कृत के ग्रन्थो का सूचीपत्र बनाया जा रहा है जो अभी प्रेस मे है। अति शीघ्र छपकर तैयार हो जायेगा।

ग्रन्थालय की महत्वपूर्ण बहियो के विस्तृत सूचीकरण का कार्य भी I. C. H R के प्रोजेक्ट के तहत प्रारम्भ किया गया है और यह कार्य प्रगति पर है। इससे शोधार्थियो को बहियो में निहित महत्वपूर्ण प्रसगो, सामग्री आदि के बारे मे जानकारी करने मे सुविधा होगी।

सर्वेयर
महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश,
फोर्ट, जोधपुर

राजस्थान विद्यापीठ साहित्य संस्थान - उदयपुर का ग्रंथ संग्रहालय

डॉ० देवीलाल पालीवाल

सन् 1941 ईस्वी मे उदयपुर मे सम्पन्न राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर साहित्य इतिहास व सस्कृति से सम्बन्धित हस्तलिखित एव पुरातात्विक सामग्री के सकलन एव शोध खोज के कार्य को व्यापक रूप देने के लिए प. जनार्दन राय नागर ने साहित्य सस्थान राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर की स्थापना की। तव से लेकर अब तक अपने लक्ष्य की ओर सतत अग्रसर इस सस्थान ने देश विदेश के शोधार्थियो के उपयोग हेतु महत्वपूर्ण सन्दर्भ पुस्तकालय एव सग्रहालय वना लिया है।

पुस्तकालय मे इतिहास, सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, राजस्थानी, दर्शन, वैद्यक विषयक महत्वपूर्ण एव अनुपलब्ध तेरह हजार पुस्तके एव पाच हजार हस्तलिखित ग्रथ हैं।

पुस्तकालय एव सग्रहालय मे शोध सामग्री निम्न विन्दुओ के आधार पर सगृहीत की गई—

1. प्राचीन हस्तलिखित ग्रथ
2 प्राचीन डिंगल काव्य
3. राजस्थानी लोक साहित्य
4 भीली लोक साहित्य
5 ऐतिहासिक रुक्के, पट्टे परवाने, पत्र एवं दस्तावेज

शोध सामग्री मनीषीगणो के घरो, मन्दिरो, मठो, निजी सग्रहालयो, तत्कालीन जागीरदारो एव पुरोहितो से प्राप्त की गई। शोव सामग्री के

अतिरिक्त राजस्थान के कोने-कोने से सग्रहालयों मे उपलब्ध शोधोपयोगी सामग्री भी सस्थान के कार्यकर्ताओ ने नकल कर पुस्तकालय मे सगृहीत की। जिसमे नीति, भक्ति, धर्म, शौर्य इत्यादि विषयो से सम्बन्धित प्राचीन डिंगल भाषा की लगभग दस हजार रचनाओ का सग्रह है। राजस्थानी इतिहास साहित्य एवं सस्कृति की दृष्टि से यह सग्रह मूल्यवान है। इसके अतिरिक्त राजस्थानी बातो, कहावतो एव गीतो की नकलों का भी महत्वपूर्ण सग्रह है। शोध पुस्तकालय को विषय-वस्तु की दृष्टि से सम्पन्न करने मे निम्न महानुभावों का अपूर्व सहयोग एव समर्पण रहा है—

सर्वश्री गौरी शकर हीराचन्द ओझा, नाथूलाल व्यास, शिवरती महाराज, शिवदानसिह जी, रतनलाल अताणी, रावत विजयसिह जी - विजयपुरा, भगवतीलाल भट्ट, जोधसिह जी मेहता, कविराजा मोहनसिह, डॉक्टर रविशकर, उदयसिह मेहता, प. जनार्दनराय नागर, डॉ मोतीलाल मेनारिया, राव इन्दरसिंह चौधरी, पद्मनाथ ढोलकिया, राजकोट आदि।

सस्थान मे सेवारत स्व. कविराजा मोहनसिंह, मोतीलाल मेनारिया, डॉ पुरुषोतम मेनारिया, मोहनलाल शास्त्री, सूरजलाल शर्मा, सौभाग्यसिंह शेखावत, डॉ. देवीलाल पालीवाल, उमाशकर शुक्ल, भगवतीलाल सचेती आदि ने सस्थान के सग्रह को समृद्ध बनाने में अनवरत प्रयत्न किया है।

पुस्तकालय मे हस्तलिखित ग्रथो का सग्रहालय :—

सस्कृत के हस्तलिखित ग्रथ—

सस्थान पुस्तकालय मे पन्द्रहवी शताब्दी से लेकर बीसवी शताब्दी तक के सस्कृत ग्रथ है। ये ग्रथ आगम, वैधक, ज्योतिष, व्याकरण, कोष, काव्य, कथा, छन्दशास्त्र, नाटक, अलकार, स्तोत्र, नीति, वेदान्त, पुराण, धर्म, इतिहास, कामशास्त्र, भक्ति, न्याय, प्रहेलिका प्रहसन, वास्तुशास्त्र, शिल्पशास्त्र, रत्नपरीक्षा आदि विषयो से सम्बन्धित है।

आगम शास्त्र के कतिपय विशिष्ठ ग्रथो का विद्वानो में बहुत अधिक समादर हुआ है। इस प्रकार के ग्रथ अब तक दक्षिण भारत के तिरूपति बालाजी, श्री रगम आदि तीर्थों मे उन प्रदेशों की लिपियो मे ही पाये जाते थे किन्तु मेवाड जैसी वीर भूमि मे इन ग्रंथो का देवनागरी लिपि मे पाया जाना यहाँ पांचरात्र, पाशुपत एव सिद्धान्त शैवागम के व्यापक प्रभाव को प्रमाणित

करता है। इनमें से कुछ ग्रथ अभी दक्षिण भारतीय लिपियो मे भी प्रकाशित नही हुए है।

यहाँ उपलब्ध आगमशास्त्रीय ग्रथो मे सबसे प्राचीन नृसिहाख्य प्रणीत, विष्णु भक्ति चन्द्रोदय की मातृका है। इसका लिपिकाल वि. स. 1407 है। प्रारम्भ के कुछ पृष्ठ इसमे नही है। तन्त्र व भक्ति से सम्बन्धित इस ग्रन्थ का प्रसिद्ध वैयाकरण भट्टोजि दीक्षित ने अपने ग्रन्थ मे 'तन्त्राधिकारी निर्णय' मे भी उल्लेख किया है। देवपूजा से सम्बन्धित 'वेखानस सहिता' दूसरा महत्वपूर्ण ग्रथ है। वेखानस पद्धति से दक्षिण मे तिरूपति बालाजी के मन्दिर में भगवान वेंकटेश्वर की पूजा अर्चना होती है। देवनागरी लिपि के इस ग्रन्थ मे कुल सात पत्र व 22 पटल है। एक उल्लेखनीय ग्रन्थ नारायण कठ के पुत्र रामकठ भट्ट विरचित मतग परमेश्वर की 'मतगवृति' (विद्यापाद) शीर्षक सम्पूर्ण मातृका है। तन्त्र विषयक इस अप्रकाशित ग्रथ का लिपिकाल वि स, 1853 है तथा इसमे 5800 श्लोक है। इसकी प्रतिलिपि त्रिपाठी नाथूराम ने महाराजा अर्जुनसिंह के पढने के लिए की थी। सिद्धान्त शैवो के अठारह पद्धतिकारो मे प्रसिद्ध विद्वानो, विद्वान त्रिलोचन शिवाचार्य की 'सिद्धान्त सारावली' नामक एक अपूर्ण मातृका भी यहाँ उपलब्ध है। इसी तरह वैष्णवागम की 'जयाख्य सहिता' की देवनागरी लिपि की मातृका भी यहाँ विद्यमान है। अन्य प्रमुख आगमो मे सात्वत सहिता, नारदीय सहिता, विश्वामित्र सहिता, सूक्ष्मागम, अजितागम पाच रात्रात्पति, कामिगागम, कारणागम आदि भी देवनागरी लिपि मे लिपिबद्ध यहाँ पर सगृहीत है। जैनागमो मे 'दशवैकालिक' की आठ प्रतियाँ भी यहाँ है। इनमे से विक्रम सवत् 1643, 1666 एव 1759 की प्रतियाँ महत्वपूर्ण है। अन्य जैनागमो मे नन्दी सूत्र, कल्पसूत्र एव वृहत्कल्पसूत्र की एकाधिक प्रतियाँ है।

इतिहास से सम्बन्धित सस्कृत हस्तलिखित ग्रथो मे राजसिंह, प्रभोवर्णनम्, अमरनृपकाव्य रत्नम, गोस्वामीकुल यशोवर्णनम्, एकलिंग महात्यम्, राज-प्रशस्तिः, फतहप्रकाश प्रशस्ति आदि महत्वपूर्ण है। 'राजसिह प्रभोवर्णनम्' महाराणा राजसिंह (वि. स 1709-1737) के वश वर्णन का लालभट्ट प्रणीत सौ श्लोको का ऐतिहासिक काव्य है। प हरिदेव सूरि के पुत्र मगल का बनाया हुआ 'अमरनृपकाव्यरत्नम' चार सर्गो का है। यह महाराणा जयसिह के पुत्र महाराणा अमरसिह से सम्बन्धित है। ग्रथ समाप्ति के समय इसमे कवि ने अपना परिचय भी दिया है। 'एकलिंग महात्यम्' मे एकलिंग जी के प्रकट होने तथा महाराणा कुम्भा तक के मेवाड़ के इतिहास का वर्णन है। रणछोड़

भट्ट विरचित 'राजप्रशस्ति:' राजसमन्द पर 25 शिलाओ पर उत्कीर्ण ऐतिहासिक महाकाव्य है। इसकी छापे यहाँ सग्रहालय मे विद्यमान है। सस्थान से इसका सम्पादन भी हो चुका है। कृष्ण भक्त गोस्वामी कुल का सात पत्रो में सक्षिप्त वर्णन गोस्वामीकुल यशोवर्णनम् काव्य ग्रन्थ मे है। फतह प्रकाश प्रशस्ति कविवर करणीदान प्रणीत है, किन्तु अपूर्ण है।

व्याकरण व छन्दशास्त्र के कुछ प्रसिद्ध ग्रन्थ भी यहाँ पर है। प्रसिद्ध वैयाकरण भट्टोजिदीक्षत कृत 'प्रौढ मनोरमा' के तिउन्त काण्ड पर एव उतरार्द्ध भाग की दो प्रतिया है। केदार भट्ट विरचित छन्दशास्त्र के उल्लेखनीय ग्रन्थ 'वृत रत्नाकर' की वि स 1886 की एक प्रति है, यह प्रति मूल के साथ-साथ हरि भास्कर कृत वृतरत्नाकर सेतू टीका सहित है। वररूचि के 'प्राकृत प्रकाश' की वि. सं 1655 की एक प्रति भामह कृत मनोरम वृति सहित है।

आयुर्वेद एव ज्योतिष से सम्बन्धित अधिकाश ग्रथो पर अभी विद्वद समाज का अनुसन्धानपरक दृष्टिकोण केन्द्रित नही हुआ है। यहाँ दोनो विषयो से सम्बन्धित अनेक ग्रथ है, जिनको आधार बना कर शार्गधर, सुश्रुत, माधव, चन्द्र, वोपदेव, विदग्ध वैद्य, अग्निवेश, त्रिमल्ल, वीरसिह, महेन्द्रमौगिक, लोलिम्बराज, नित्यनाथ सिद्ध, श्रीकण्ठ पण्डित आदि प्रसिद्ध आयुर्वेदिय पण्डितों व काशीनाथ, सुमति हर्ष पद्म प्रभसूरि, भास्कराचार्य, श्रीमती भट्ट आदि ज्योतिषाचार्यो के अनेक हस्तलिखित ग्रन्थो के मूलपाठ एव टीकाओ को पाठान्तर सहित तैयार किया जा सकता है। आयुर्वेद के एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ नारायण विलास का इन दिनो सस्थान मे सम्पादन कार्य चल रहा है। सस्कृत के अन्य प्रसिद्ध हस्तलिखित ग्रन्थ जिनका परिचय ऊपर स्थानाभाव के कारण नही दिया जा सका है, निम्नलिखित है—

ग्रन्थ का नाम	प्रणेता	विषय	लिपिकाल या रचनाकाल
गौतमस्मृति	गौतम	धर्म	वि. स 1651
धर्मितावच्छेदकता प्रत्यासति.	हरिराम भट्टाचार्य	न्याय	,, 1747
पञ्चसायकम	कविशेखर	कामशास्त्र	,, 1670
किरातार्जुनीयम	भारवि	काव्य	,, 1717
गुरूगीता स्तोत्रम	व्यास	पुराण	शक स 1704

वास्तुशास्त्रम	विज्ञाचार्य	वास्तुशास्त्र	वि. स	1791
माधवनिदाम्	माधव	वैद्यक	,,	1780
हृदयदीपकम्	वौपदेव	वैद्यक	,,	1705
योगरत्नसमुच्चय	चन्द्रट	वैद्यक	,,	1744
द्रव्यावली	महेन्द्र मोगिक	वैद्यक	,,	1717
योगशतकम्	विदग्ध वैद्य	वैद्यक	,,	1717
रसरत्नाकर	नित्यनाथ सिद्ध	वैद्यक	,,	1755
शीघ्रबोध:	काशीनाथ	ज्योतिष	,,	1864
गणककुमुदकौमुदी	सुमति हर्ष	ज्योतिष	,,	1864
भुवनदीपकम्	पदमप्रभसूरि	,,	,,	1864
करणकुतूहलम्	भास्कराचार्य	,,	,,	1864
ज्योतिषरत्नमाला	श्रीपतिभट्ट	,,	,,	1800
पुष्करमाहात्यम्	व्यास	पुराण	,,	1562
अमरकोश:	अमरसिंह	कोष	,,	1651
भागवतम्	व्यास	पुराण	,,	1777
अष्टाध्यायी	पाणिनी	व्याकरण	,,	1764
राघवपाण्डदीयम्	कविराज	काव्य	,,	1692

उपर्युक्त ग्रन्थो के अलावा वल्लभ सम्प्रदाय के सस्थापक श्री मद्वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय के 50 से अधिक तथा जगद्गुरु श्री शंकराचार्य एव प्रसिद्ध सन्त श्री विठ्लेश्वर के भी अनेक ग्रन्थ धर्म भक्ति, स्त्रोत, वेदान्त आदि से सम्बन्धित है। जगन्नाथदास विरचित 'मुक्ति चिन्तामणी' शीर्षक भक्ति से सम्बन्धित एक ताड़पत्रीय ग्रथ भी यहाँ पर विद्यमान है।

हिन्दी-राजस्थानी के हस्तलिखित ग्रन्थ—

सस्कृत हस्तलिखित ग्रन्थो की तरह यहाँ के हिन्दी-राजस्थानी के हस्तलिखित ग्रन्थो का भी विशेष महत्व है। विविध रूपात्मक कार्य समस्त ग्रंथ इतिहास, साहित्य, गीत, वार्ता, पुराण, सन्त, साहित्य, स्तोत्र, कथा, वैद्यक, ज्ञानोपदेश, अलकार, अध्यात्म, जीवनचरित्र, पाकशास्त्र, संगीत, राजनीति, छन्दशास्त्र, वेदान्त, नीति आदि विषयो से सम्बन्धित हैं। इसमे भी रीति साहित्य व इतिहास विषयक ग्रथो की प्रचुरता हैं।

रीति साहित्य से सम्बन्धित यहाँ चालीस से ऊपर विविध प्रकार के ग्रन्थ हैं। उनमे से अधिकाश ग्रन्थ रस, अलकार व नायक-नायिका भेद व छन्द आदि से सम्बन्धित है तो कुछ ग्रथ 'बिहारी सतसई' की केशव कृत 'रसिक प्रिया' व कविप्रिया की तथा महाराजा जसवन्तसिंह कृत 'भाषा भूषण' की टीकाओ से सम्बन्धित हैं। सूरति मिश्र हरिचरण दास व कविराय बख्तावर के रीति सम्बन्धी ग्रथो की एकाधिक प्रतिया यहाँ उपलब्ध हैं, जिनका देश के विभिन्न भागो से विद्वानो ने आकर विशद् अध्ययन किया है।

कविराज बख्तावर क्रमशः महाराणा स्वरूपसिंह, शम्भूसिंह, सज्जनसिंह एव फतहसिंह के आश्रित एव कृपापात्र कवि रहे है। इनके लिखे हुए स्वरूप प्रकाश, महाराणा सम्भूसिंह जी री भमाल, महाराणा सम्भूसिंह जी री बेत, महाराणा सज्जनसिंह जी री भमाल, सज्जनसिंह प्रकास, महाराणा फतहसिंह का रूपक तथा फतह प्रकास नामक ग्रथ समसामयिक होने के कारण विशेष उल्लेखनीय है। दिलेराम चौबे, कृष्ण भट्ट देवर्षि, दन्तकवि शिवराम, ग्वालकवि, बलभद्र, मनराखन, बुद्धसिंह, प्रतापसिंह आदि अब तक रीति साहित्य की दृष्टि से अज्ञात कवियो की रचनाएँ भी यहाँ पर है। कृष्ण भट्ट देवर्षि कृत शृगार रस माधुरी रीति साहित्य की एक महत्वपूर्ण कृति है जिस पर विद्वानो ने यहाँ आकर काभ भी किया है। चन्दबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' की एकाधिक प्रतियाँ यहाँ विद्यमान है, जिसमे ग्रन्थाक 281 वाली प्रति अति महत्वपूर्ण है। इसमे कुल 273 पत्र व 64 प्रस्ताव हैं तथा इसका लिपिकर्ता श्वेताम्बर जसराज है। रासो की विभिन्न सग्रहालयो से प्राप्त एकाधिक फोटो प्रतियाँ भी यहाँ सगृहीत की गई है।

हिन्दू धर्म के चौबीस अवतारो की कथा को आधार बनाकर नरहरिदास बारहठ द्वारा लिखे गए 'अवतार चरित्र' नामक महाकाव्य की दो प्रतियाँ (ग्रन्थ स. 56 व 59) यहाँ के सग्रहालय मे विद्यमान है। इसमे कुल 16861 अनुष्टव छन्द हैं। यह अभी अप्रकाशित है। महाराणा जवानसिंह द्वारा विरचित पदो का हस्तलिखित सग्रह भी यहाँ पर है, जिसको सम्पादित कर 'व्रजराज काव्य माधुरी' के नाम से पुस्तकाकार मे सस्थान द्वारा प्रकाशित किया गया है। चतुर्भुजदास प्रणीत 'मधुमालती' राजस्थानी प्रेमाख्यान परम्परा की एक उत्कृष्ट कृति है। इसकी दो प्रतियाँ ग्रथ स. 66 व 303 यहाँ पर उपलव्ध ग्रन्थ सख्या 66 पर अकित प्रति मूल काव्य के साथ साथ घटनानुसार चित्रो से सज्जित भी है। डिंगल गीतो का विशाल सग्रह इस सग्रहालय की एक अन्य

विशेषता है। लगभग दस हजार डिंगल गीतों में से 5227 गीतों को वर्ग एव मात्रानुक्रम से जमा कर एक विस्तृत सूचनात्मक अनुक्रमणिका के रूप मे व्यवस्थित कर दिया गया है, जो शोध पत्रिका मे परिशिष्ट रूप में क्रमशः प्रकाशित भी हुआ है। ये डिंगल गीत युद्ध, शस्त्रास्त्र, वीरो के युद्ध, कौशल, स्वामी भक्ति, देश रक्षा, पशु पक्षी, अध्यात्म, भक्ति एव साहित्य आदि से सम्बन्धित है। इन गीतों के सग्रह से एक बहुत बड़ी बात यह हुई है कि लगभग 100 नये चारण व चारणेतर कवि प्रकाश मे आये है—

हिन्दी राजस्थानी के अन्य महत्वपूर्ण ग्रथ निम्नलिखित हैं—

ग्रंथ का नाम	प्रणेता	विषय	लिपि या रचनाकाल
जोरावर प्रकाश	सूरति मिश्र	रीति साहित्य	वि स 1919
रसग्राहक चन्द्रिका	,,	,,	,, 1862
रस रत्न	,,	,,	,, 1927
काव्य सिद्धान्त	,,	,,	,, 1913
अलंकार चन्द्रिका	हरिचरणदास	,,	,, 1930
सभा प्रकास	,,	,,	,, 1917
भाषा भूषण टीका	,,	,,	,, 1910
बिहारी सतसई की टीका	,,	,,	,, —
सिंगार बोध	दिलेराम चौबे	,,	,, 1835
श्रृंगार रस माधुरी	कृष्णभट्ट देवर्षि	,,	,, 1795
रसोत्पति	कविराव बख्तावर	,,	,, —
तखतविलास	शिवराम	,,	,, 1932
रसिकानन्द	ग्वालकवि	,,	,, 1927
सिखनख	बलभद्र	,,	,, 1942
छन्दोनिधिपिंगल	मनराखन	,,	,, 1936
षोडसक्रम	कविराव बख्तावर	,,	,, 1936
व्यग्यार्थ कौमुदी	प्रतापसिंह	,,	,, —
सज्जनविलास	दन्तकवि	,,	, —
नेह तरंग	बुधसिह	,,	,, 1923
अपरोक्ष सिद्धान्त	म. जसवन्तसिंह	अध्यात्म	,, 1730

गोगापैडी	ग्रासाजी बारहठ	ग्रध्यात्म	वि स	1907
ग्रध्यात्म धमाल	बनारसीदास	ज्ञानोपदेश	,,	1825
भैचितामणी	लालदास	,,	,,	—
बाहुविलास	राजसिह	काव्य	,,	—
वृन्दसतसई	वृन्द	काव्य	,,	1904
कविताकल्पतरू	नान्हूराम	ग्रलकार	,,	1940
पाण्डवयशेन्दु चन्द्रिका	स्वरूपदास	काव्य	,,	1917
रघुनाथ रूपक	मछाराम	छन्दशास्त्र	,,	1892

इतिहास विषयक हस्तलिखित ग्रथ—

इतिहास से सम्बन्धित कतिपय प्रसिद्ध ग्रथों की हस्तलिखित प्रतियाँ राजस्थान मे ग्रन्यत्र कही नही पाई जाती हैं। सुरताण गुण वर्णन, राणा-रासो, दीपग कुल प्रकास तथा कविराज बख्तावर विरचित ग्रनेक ग्रथ उनमे प्रमुख है। सुरतांण गुण वर्णन मे मेवाड के महाराणा जयसिंह व उनके कु वर ग्रमरसिंह के मध्य पैदा हुए वैमनष्य तथा महाराणा ग्रमरसिह द्वितीय व ग्रौरगजेब के मध्य हुए समझौते मे ठिकाना बेदला के तत्कालीन राव सुरताणसिह के सहयोग एव कार्यो का वर्णन है। 138 पत्रो के इस ग्रप्रकाशित ग्रथ को पत्ताजी ग्राशिया ने वि. स. 1772 मे रचा था। दयाराम प्रणीत 'राणा रासो' की ग्रब तक एक मात्र प्रति प्राप्त हुई है जो यहाँ सग्रहालय मे सुरक्षित है। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर मे उपलब्ध प्रति भी इसी प्रति से की गई नकल है। इसमे मेवाड के महाराणाग्रों का ग्रारम्भ से लेकर महाराणा कर्णसिह (वि स 1676-84) तक का वर्णन है। ग्रन्थ की पुष्पिका में इसका निर्माणकाल वि. स. 1675 दिया गया है जो विवादास्पद है। इस ऐतिहासिक महत्व के ग्रन्थ का साहित्य सस्थान से सम्पादन हो चुका है। 'दीपगकुल प्रकास' कमजी दधवाड़िया द्वारा लिखित है, किन्तु इसका ग्रन्तिम भाग त्रुटित है। इसमे सरदारगढ के डोडिया कुल का वर्णन है। किशना ग्राढा कृत 'भीमविलास' की प्रतियाँ यद्यपि ग्रन्यत्र भी उपलब्ध होती है किन्तु पाठ सम्पादन की दृष्टि से यहाँ की दोनो प्रतियाँ (ग्रन्थाक 123 व 186) का विशेष महत्व हैं। इसमे महाराणा भीमसिह का जीवन वृतान्त है। ग्रंथ समसामयिक होने के कारण ऐतिहासिक दृष्टि से महत्व का है।

मेवाड के राजाओ की राणियो और कु वरो का हाल शीर्षक ग्रन्थ बड़वा देवीदान की ख्यात की नकल है। इसमे महाराणा हमीरसिंह प्रथम से महाराणा फतहसिंह तक के महाराणाओ राणियो व उनके कु वरो के नाम दिए है। यह ग्रथ सस्थान से सम्पादित हो चुका है। 'मेवाड का परगणा को विवरो' महाराणा भीमसिह के आदेश से लिखी गई एक बही है। जिसमे कुल 17 जीर्ण शीर्ण पत्र है। इसका लिपिकाल वि. स. 1860 है। सिसोदिया की ख्यात मुहणोत नैणसी के ख्यात की नकल है। इसमे कुल 65 पत्र है जिसमे सिसोदिया कुल व बू दी के हाडाओ का वर्णन है।

इतिहास के अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ निम्नलिखित है—

ग्रन्थ का नाम	प्रणेता	विषय	लिपि या रचनाकाल
1 राठोड़ वश री शाखा	करणीदान कविया	इतिहास	1909 वि सं.
2. सूरज प्रकास	,,	ऐतिहासिककाव्य	1864 ,,
3. वचनिका राठौड रतन सिंह जी री महेस-दासोत की	जग्गा खिड़िया	इतिहास	1823 ,,
4 अजीतसिघजी की दवावेत	द्वारकादास	इतिहास	1868 ,,
5. विडदसिणगार	करणीदान	ऐतिहासिककाव्य	1864 ,,
6 वांकीदास ग्रंथावली	वांकीदास	इतिहास	1927 ,,
7. कूर्मवश यश प्रकाश	गोपालदान कविया	ऐतिहासिककाव्य	1992 ,,

पुस्तकालय—

पुस्तकालय मे लगभग 13,000 छपी हुई पुस्तकें है। इतिहास विषयक महत्वपूर्ण एव अन्यत्र अनुपलब्ध पुस्तकें भी पुस्तकालय मे है—

1. Catalogue of Persian books and manuscripts
—Ashraf Alı - Calcutta, 1980.
2. Catalogue of Arabian books
—Samsul-L-Ulam, 1899
3. History of India, Vol I, II and IIIrd
—H. G. Keene, London, Whallen and Co., 1983.

4. History of India,
Elphistone; London John Murry,
Alhemarle Street, 1899.

5. Cassell's Illustrated
History of India, Vol I, II and III
James Grant, London Cassell and Co, 1880.

6 Indica
Bombay, St. Xavier's College,
London, Cassell and Co, 1953

7 रासमाला, अनु. रणछोड भाई उदयराम गुजराती, 1869.

8. Narrative of a Journey through the upper
provinces of India, Vol. I to IIIrd.
—A Hamilton; London, John Murray, Alhemarle, 1826.

9. Maratha war in 1803
Aut East India Co., 1804.

10. Rise and Expansion of the British Dominion in India.
—Alfred Lyall, London, John Murray, 1804

11 Despatches of Marquiss
Welleselly,
Ed. Sidney J. Owen
Oxford, At Clarendon Press, 1861.

12. Nana Sahib Peshwa,
Anand Swaroop Misra,
Information Deptt, Lucknow, 1925.

13 भारत के देशी राज्य, सुख सम्पति राय भण्डारी,
राज्य मण्डल बुक पब्लिशिग, इन्दौरा, 1927.

इसी प्रकार हिन्दी राजस्थानी मे लोक साहित्य, सत साहित्य, चारण साहित्य, जैन साहित्य, कवि एव अब तक प्रकाशित शब्दकोष उपलब्ध है ।

सस्कृत मे वेद-पुराण, ज्योतिष एव आयुर्वेद विषयक महत्वपूर्ण पुस्तको का सग्रह है ।

पत्रिकाएँ—

पुस्तको के अतिरिक्त पुस्तकालय मे सम्मेलन पत्रिका (प्रयाग) नागरी प्रचारिणी पत्रिका (वाराणसी), परिषद् पत्रिका (पटना), भारतीय साहित्य (आगरा), मरुभारती (पिलानी), वरदा (बिसाउ), राजस्थान भारती (बीकानेर), परम्परा (चौपासनी, जोधपुर), कल्याण (गोरखपुर), रसवन्ती (लखनऊ), साहित्य सन्देश (आगरा-2), विश्वज्योति (होशियारपुर), भारतीय विद्या भवन (बम्बई), अनेकान्त (दिल्ली) Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute (Poona), Journal of the Deccan College Research Institute (Poona), Vishweranand Indological Journal (Hoshiarpur—Punjab), Numanismatic Journal (Varanasi-5), Journal of the Gujarat Research Society, Journal of Rajasthan Institute of Historical Reseaich, Jaipur आदि महत्वपूर्ण शोध पत्रिकाएँ आती है तथा इनकी पुरानी फाईल भी शोधार्थियो के लिए उपलब्ध है।

शोधार्थी—

पुस्तकालय मे देश विदेश के शोधार्थी निरन्तर यहाँ आते रहते हैं उनको यहाँ उनके विषय से सम्बन्धित शोध सामग्री उपलब्ध करवाने, हस्तलिखित ग्रन्थो की फोटो प्रति करवाने एवं आवश्यक निर्देशन देकर सभी प्रकार का सहयोग किया जाता है। अब तक यहाँ विदेशों से आस्ट्रेलिया, जर्मनी, इग्लैण्ड, फ्रास, आस्ट्रिया, इटली, रूस, कनाडा, अमेरिका एवं जापान आदि देशो से आए विद्वान शोधार्थी पुस्तकालय से लाभान्वित हो चुके हैं। उदयपुर विश्वविद्यालय, राजस्थान के विश्वविद्यालयो तथा भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयो एव शोध संस्थानो के शोधकर्मी संस्थान के पुस्तकालय की सामग्री का उपयोग करते रहे हैं।

अभिलेखीय सामग्री—

संस्थान पुस्तकालय का महत्वपूर्ण भाग संग्रहालय है जहाँ पुरातात्विक महत्व की सामग्री सगृहीत है। जिसमे मूर्तिया, ताम्रपत्र, सिक्के एवं शिलालेख है। मूर्तियों मे कुबेर (10 वी सदी), शिव परिवार (13 वी-14 वी शती), सूर्य एवं विष्णु (वि. सं. 1316) की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं।

शिलालेखो की लिपि कुटिल एवं देवनागरी में है। भाषा देशी एवं सस्कृत है। इनमे अनेक का कुटिल लिपि का शिलालेख (12 वी शती) कडिया का महाराणा मोकल सम्बन्धी लेख (वि. स. 15 वी सदी) एव आबेरी बावडी का शिलालेख (15 वी शती) आदि महत्वपूर्ण है।

ताम्रपत्रो की छापे एव कुछ मूल ताम्रपत्र भी है जो मेवाड़ के इतिहास पर प्रकाश डालते है। इनमे महाराणा उदयसिह (1597 वि स.) महाराणा रायमल (1552 वि. स.), महाराणा अमरसिह का 1672 एव महाराणा जयसिह (वि. स. 1742) महत्वपूर्ण है।

निदेशक
राजस्थान विद्यापीठ, साहित्य संस्थान,
उदयपुर (राज०)

अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर का परिचय

डॉ० घनश्याम देवड़ा

'राव जैतसी रो छन्द' के रचियता बीठू सूजा ने 16 वी शताब्दी के बीकानेर सभाग का विवरण देते हुए उचित ही लिखा है कि रेतीले समुद्र से घिरे हुए इस स्थल का जीवन नीरस व सूखा नही है बल्कि कला व कलाकारो, साहित्य व साहित्यकारों एव विद्वानों व वीर पुरुषों की चमत्कारी गतिविधियो से सजीव हो उठा है।[1] बीठू सूजा का यह कथन उसके बाद आने वाली शताब्दियो के लिए भी उतना ही नही बल्कि उससे भी अधिक प्रभावशाली अर्थ रखता है। इसकी पुष्टि परवर्ती लेखको की कलम है, जो अनूप सस्कृत पुस्तकालय मे अपने सम्पूर्ण प्रमाणो सहित आज भी सुरक्षित है। यह पुस्तकालय न केवल अतीत की सरसता का संग्रह है बल्कि ऐतिहासिकता का स्मारक है।

बीकानेर नगर के उत्तरी छोर पर स्थित भव्य लालगढ महल मे लाल व सफेद पत्थरो के मध्य झूलती हुई विशाल कमरो की शृंखला में उसके दक्षिणी किनारे पर मुसज्जित अनूप संस्कृत पुस्तकालय अपनी विशिष्ट स्थिति बनाये रखने मे तल्लीन है। उसे इस बात का हर्ष है कि महल मे लाल पत्थरो पर किया गया उत्कृष्ट उत्कीर्ण कार्य उसको चुनौती नही देता बल्कि उसे कलात्मक पृष्ठभूमि प्रदान करने के लिए लालायित है। ताकि पुस्तकालय मे उसका उपासक एक क्षण के विश्राम में भी अपनी सुरुचि न खो बैठे।

इस पुस्तकालय का परिचय देना सरल नही है। यह स्थल तो एक ऐसा पावन तीर्थ-स्थल है जहाँ उपासक अपनी उपासना के बल पर ही ज्ञान की अनुपम, अनुष्ठित व अविचलित गहराइयो मे नित दिन नये अनुभव का आश्रय पाकर उसके दीर्घ, शान्त व गम्भीर वातावरण में प्रवेश करता जाता है। प्रत्येक शोधवेत्ता का अनुभव उसकी निजी सम्पति है, जिसे अन्य कोई आसानी

से माप नही सकता। फिर भी प्रस्तुत लेख मे इस बात का यत्न किया गया है कि इसकी रूपरेखा तो समझाई जा सके।

वैसे इस पुस्तकालय का नाम भ्रम पैदा करने वाला है। जैसाकि इसके नाम से इगित होता है, यह पुस्तकालय मात्र सस्कृत भाषा मे रचित ग्रन्थों को सगृहीत करने वाला नही है। इस पुस्तकालय में सस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी व राजस्थानी भाषा मे लिखे ग्रथ भी है। इस संग्रह की विलक्षणता यह है कि यह अपने स्वरूप मे धार्मिक भी है और लौकिक भी। सस्कृति के समस्त अध्याय इसमे सिमट गये है। वे सब परस्पर सयुक्त होकर मानव के उच्च विचारो का प्रतिलेखन प्रस्तुत करते है। निःसन्देह यह सग्रह मात्र दर्शन की गहरी उलझनो को ही प्रस्तुत नही करता है बल्कि उसकी सरलता, व्यापकता एव सामान्य क्रियाकलापो की व्याख्या को भी अपना क्षेत्र बनाता है। यद्यपि इसकी अधिकाश रचनाएँ एक क्षेत्र विशेष को ही अपना आधार चुनती है परन्तु वे क्षेत्रीय सीमाओ की कुण्ठाओ मे फसकर इतिहास व संस्कृति की व्याख्या को सकीर्ण नही बनाती है बल्कि भारतीय सस्कृति की व्यापकता को पहचानते हुए बालू रेत के बारीक कणो मे भी उसे ढूंढ पाने मे सफल होती है। अरावली के उच्च शिखरो की चोटी से उसका शखनाद सुनायी पड़ता है। उनमे बतलाया गया है कि उसकी महिमा से कोई क्षेत्र अछूता नही बचा है, बल्कि स्थानीय मान्यताओ से घुलकर और निखरा है। यह पुस्तकालय मानव-इतिहास की गहरी रूपरेखा प्रस्तुत करता है। साथ मे गहरे अन्तःकरण का माप भी समझा जाता है। सभी विषय तो समेट लिये है, इसने। भूगोल, दर्शन, नीतिशास्त्र, इतिहास, ज्योतिष, राजनीति, सगीत, कला आदि-आदि। एक शोधार्थी चाहे इस सग्रह के बल पर इतिहास मे स्थिरता व परिवर्तन के मध्य निरन्तर चल रहे सघर्ष की बारीकियो को न पकड़ पाता हो पर दो विभिन्न परिस्थितियो का अध्ययन कर उनके मध्य तुलना तो कर ही सकता है।

सामान्यतः इस प्रसिद्ध पुस्तकालय का सम्बन्ध बीकानेर के दसवे नरेश विद्यानुरागी व साहित्यप्रेमी महाराजा अनूपसिह (1669-98 ई) के साथ जोड़ा गया है। यह प्रसिद्ध है कि इस पुस्तकालय का निर्माण उन्ही की रुचि के फ़लस्वरूप सम्भव हुआ है। पुस्तकालय का नाम भी उन्ही के नाम पर रखा गया है, ताकि उनकी इस क्षेत्र मे दी गयी विलक्षण सेवाएँ सदैव स्मृति पटल पर बनी रहे। परन्तु पुस्तकालय मे महाराजा अनूपसिह से पूर्वकाल की उपलब्ध बहुसंख्यक पाण्डुलिपियों को देखकर एवं पूर्व शासको की साहित्यिक अभिरुचि

को समझकर ऐसा प्रतीत नही होता कि इस पुस्तकालय के निर्माण मे किसी एक व्यक्ति विशेष का ही योगदान रहा हो। यहाँ तक कि राजा रायसिह (1574-1612 ई.) के काल से पूर्व भी यहाँ साहित्यिक गतिविधियाँ प्रशसनीय ढग से प्रचलित रही थी। बीठू सूजा कृत 'राव जैतसी रो छन्द' से स्पष्ट विदित होता है कि राव जैतसी के शासनकाल में (1526-42 ई) श्री विक्रमपुर (बीकानेर) के दरबार मे साहित्यकारो को ससम्मान प्रश्रय प्राप्त था।[2] बीकानेर का छठा नरेश राजा रायसिह तो अनेक अर्थो में इस जागलदेश का दानवीर कर्ण एव अकबर था। जिस भांति मुगल सम्राट अकबर ने साम्राज्य मे विभिन्न प्रशासनिक सस्थाओ का निर्माण करके प्रगति का वातावरण उत्पन्न किया उसी प्रकार राजा रायसिह ने जागलदेश मे राठौड़ प्रशासन को प्रथम बार दृढ व सगठित किया[3] एव कलाकारों-साहित्यकारो को प्रोत्साहन देकर एक प्रबुद्ध वातावरण उत्पन्न किया। राजा स्वयं भी एक अच्छा कवि व लेखक था। उन्होने जहाँ अन्य ग्रथों के निर्माण मे उदार व प्रोत्साहन प्रदान करने वाला हाथ आगे बढ़ाया वही 'ज्योतिष रत्नाकर' एवं 'रायसिह महोत्सव' की रचना कर संग्रहालय के निर्माण की प्रवृति को आगे बढ़ाया। नि सन्देह उनके काल मे ग्रन्थों को सुरक्षित रखने की रुचि जागृत हुई थी एव पुस्तकालय का निर्माण रहा होगा, अन्यथा उनके काल की रचनाएँ राज्य के विभागों के पास सुरक्षित नही मिलती। उनका प्रसिद्ध दीवान कर्मचन्द्र बच्छावत भी इसी प्रवृति का था। उसके सरक्षण मे ही जयसोम ने 'कर्मचन्द्र वशोकीर्तनकम् काव्यम्' की रचना की थी। इस काल की एक अन्य प्रसिद्ध रचना 'दलपत विलास' है। जो कि राजस्थानी भाषा मे इतिहास की दृष्टि से प्राचीन व महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। रायसिंह के पुत्र उसकी परछाइयों को भी छू नहीं सके। हा, राव सूरसिह के पुत्र राव कर्णसिह के काल मे बीकानेर सम्भाग मे साहित्यिक गतिविधियाँ फिर उभरी व राजकीय पुस्तकालय का अभिन्न अग बनी। राव कर्णसिंह (1631-69 ई) का शासनकाल वैसे तो राजनैतिक उथल-पुथल में फसा रहा, पर यह शासक साहित्य व साहित्यकारो के लिए सदैव समय निकालता रहा। पुस्तकालय की अमर प्रतियाँ, 'साहित्य कल्पद्रुम', 'कर्णभूषण', 'कर्णावतस' आदि उसके युग की भेट रही। सस्कृत भाषा मे रचनाओ का बाहुल्य था। मुगल सम्राट शाहजहाँ भी इस भाषा को सरक्षण देने में जब सक्रिय था,[4] तो उसके हिन्दू मनसबदार भला उससे आगे बढ़ने मे क्यूं हिचकिचाते। आलमगीर पातशाह पुरातनवादी था, पर अपनी सीमाओ का। उसका ध्यान धार्मिक साहित्य था न कि लौकिक।

बल्कि लौकिक विषयों के तो वह विरुद्ध था । केन्द्रीय सत्ता की इस बेरूखी ने अप्रत्यक्ष रूप से स्थानीय दरबारो के सम्मानित व्यक्तियो को प्रश्रय देने का अवसर प्रदान किया । बीकानेर ने इसमे अत्यधिक रुचि प्रकट् की । संयोग से बीकानेर के नये शासक महाराजा अनूपसिंह (1669-98 ई.) मे एक ऐसा नेतृत्व भी दृष्टिगत हुआ जो साहित्य को उच्च सम्मान देकर प्रकृति की उदारता के सम्मुख नतमस्तक होने के लिये सदैव तत्पर था । उनकी अभिरुचि व उद्देश्य के प्रति एकाग्रता ने पुराने बिखरे राजकीय पुस्तकालय को एकरूपता प्रदान की एव नये ग्रन्थों की सिरजना से व प्राचीन बिखरे हुए ग्रथों के सग्रह के प्रयासो से उसे वृहत स्वरूप प्रदान करके आधुनिक अनूप सस्कृत पुस्तकालय की नीव डाली । परवर्ती प्रशासकों ने अगर इस पुस्तकालय का नाम इस विद्यानुरागी शासक के नाम से जोडा है तो उसकी सच्ची सेवाओ के प्रति श्रद्धास्पद समर्पित भावनाएँ ही व्यक्त की है ।

औरंगजेब के काल मे राजनैतिक व सास्कृतिक सम्बन्धों के समन्वय मे टूटन आनी प्रारम्भ हो गयी थी । महाराजा अनूपसिह उन अमीरो मे से थे, जो राजनैतिक व सास्कृतिक स्तर पर अलग-अलग ढग से समझौता करके अपना कल्याण समझने लगे थे । महाराजा का अधिकांश समय मुगलो की दक्षिणी नीति को सफल बनाने मे ही बीता । पर दक्षिण के अपने लम्बे प्रवास में उन्होने इस बात पर सदैव दृष्टि रखी कि जहाँ कही से भी पुरानी पाण्डुलिपि प्राप्त हो जाये, उसे हर कीमत पर हस्तगत कर लिया जाये ।[5] यही कारण है कि पुस्तकालय मे सस्कृत ग्रन्थो के साथ दक्षिणी भाषाओ के ग्रथ भी मिलते हैं । कुछ ग्रथ बगाली मे भी हैं । महाराजा के इन प्रयासो से बहुत सी मूल्यवान् साहित्यिक सामग्री सुरक्षित रह गयी अन्यथा औरगजेब के अन्तिम पच्चीस वर्षो मे दक्षिण भारत तो एक सैनिक शिविर बन चुका था तथा युद्ध व लूटपाट मे इन सास्कृतिक निधियो का विनाश से बच पाना कठिन था । महाराजा का पाण्डुलिपि संग्रह करने मे ध्यान भारत के सभी खण्डो मे बटा हुआ था ।

राजस्थान के क्षेत्र से भी अनेक ग्रथो को हस्तगत कर सगृहीत करवाया । मेवाड के महाराणा कुम्भकर्ण (कुम्भा) के बनाये हुए संगीत-ग्रथों का सम्पूर्ण सग्रह इसी कारण पुस्तकालय मे उपलब्ध है । श्री ओझा ने उचित ही लिखा है कि इस दृष्टि से महाराजा का नाम सदैव अमर रहेगा । महाराजा ने भारत के प्रसिद्ध संगीत वेत्ताओ को बीकानेर आकर बसने का निमन्त्रण दिया जिसके फलस्वरूप साहित्य व पुस्तकालय दोनो समृद्ध हुए । शाहजहाँ कालीन

भारत के प्रसिद्ध सगीताचार्य जनार्दन भट्ट का पुत्र भाव भट्ट महाराजा के सरक्षण में बीकानेर मे रहा था ।[6]

अनूपसिह ने पुस्तकालय को समृद्ध करने के लिए सस्कृत भाषा मे अनेक विषयो पर रचनाएँ करवाई । उनमे 'काम प्रबोध' व 'श्राद्ध प्रयोग चिन्तामणी' मुख्य है । प्रसन्नता की बात है कि महाराजा ने उसी रुचि के साथ राजस्थानी गद्य व पद्य दोनो मे रचनाओ को पूर्ण राजकीय सरक्षण प्रदान किया । इस दृष्टि से उनका दीवान नाजर आनन्दराम भी अपने स्वामी से पीछे नही रहा । उसने स्वय राजस्थानी मे अनेक रचनाएँ रची ।

अब पुस्तकालय पूरी तरह से स्थापित हो चुका था । 18 वी शताब्दी की विषम राजनैतिक परिस्थितियो ने भी इस पर विपरीत प्रभाव नही डाला । यद्यपि शासक पडौसी राज्यो व सामन्तो के साथ सघर्ष मे बुरी तरह उलझे हुए थे, फिर भी कुछ शासको ने इस क्षेत्र मे पूरी रुचि दिखाई । चू कि अब भारत के अन्य खण्डो से सम्पर्क लगभग टूट चुका था, अत: स्थानीय साहित्य को ही प्रवल प्रश्रय मिला । राजस्थान की राजनीति, राजपूतो की शौर्य परम्पराएँ एव उनका इतिहास ही साहित्य के मूल बिन्दु बन गये । सस्कृत साहित्य की तुलना मे राजस्थानी भाषा मे अधिक ग्रथों का निर्माण हुआ । पुस्तकालय मे उपलब्ध अधिकाश राजस्थानी भाषा के ग्रथ इसी काल के है । महाराजा गजसिह (1745-87 ई.) का काल इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है । महाराजा स्वय एक कवि थे एव खूव भजन बनाते थे । इस काल मे, बल्कि महाराजा जोरावरसिह के काल (1736-45 ई.) से ही बीकानेर मे ख्यात रचनाओ का बहुत जोर रहा । 'दयालदास री ख्यात' से पूर्व सभी इसी श्रेणी की रचनाएँ महाराजा जोरावरसिह, गजसिह व सूरतसिह के काल की हैं ।

'बीकानेर रै राठोड़ा री ख्यात महाराजा सुजाणसिघजी सूं गजसिघजी तांई' इस दृष्टि से बहुत उल्लेखनीय है । बीकानेर के दीवान मोहता परिवार का योगदान भी इस क्षेत्र मे महत्वपूर्ण है ।[7] नैणसी की प्रसिद्ध ख्यात भी इस काल मे पुस्तकालय का अग बनी व उसकी प्रतियाँ तैयार करवायी गयी ।[8] राजस्थान का 'वात' साहित्य भी खूब विकसित हुआ । अधिकाश 'वात' रचनाएँ भी इसी काल की हैं, जो व्यक्ति विशेष से लेकर स्थिति विशेष का ऐतिहासिक सन्दर्भ मे महत्वपूर्ण ज्ञान प्रदान करती है । राजस्थानी भाषा मे रचनाओ का आकर्षण इस स्तर तक बढा कि मुगल 'फरमानो' का भी राजस्थानी

मे अनुवाद करवाया गया। आईने अकबरी के एक भाग का अनुवाद भी अत्यन्त महत्वपूर्ण देन है। 19 वी शताब्दी में यह परम्परा कुछ धीमी पड़ी। यद्यपि साहित्यिक रचनाएँ होती रही, लेकिन सग्रहालय कपडे के बस्तो में बन्द होता चला गया। इस पुस्तकालय की जानकारी सीमित व्यक्तियो तक ही रह गयी। कर्नल टॉड को इस पुस्तकालय की कोई जानकारी नही थी, अन्यथा वह बीकानेर जरूर चला आता। कर्नल टॉड ने महाराजा सूरतसिह को ऐतिहासिक सामग्री से सम्बन्धित जो पत्र लिखा था एव महाराजा ने जो उत्तर भेजा था, उनमे इस पुस्तकालय की कोई चर्चा नही है।[9] अगर टॉड को इस पुस्तकालय की सामग्री उपलब्ध हो जाती तो नैणसी की ख्यात के साथ बीकानेर की महत्वपूर्ण ख्यातें उसके हाथ लग जाती व उसके राजस्थान के इतिहास को अनेक विसगतियो से बचाया जा सकता था। लेकिन इस अभाव का एक प्रत्यक्ष परिणाम यह निकला कि बीकानेर के शासको ने टॉड द्वारा बीकानेर इतिहास को दूसरा दर्जा दिये जाने के विरोध मे सिढायच दयालदास द्वारा बीकानेर के राठौड़ो का इतिहास उनके गौरव को पुन: स्थापित करने के लिए लिखाया। दयालदास ने इसके अतिरिक्त 'देशदर्पण' एव 'आर्याख्यान कल्पद्रुम' की महत्वपूर्ण रचनाएँ की। इन सब कार्यों के लिए उसने निश्चित रूप से पुस्तकालय का प्रयोग किया होगा, यद्यपि इस तथ्य की ओर वह इगित नही करता है। पर दयालदास की रचनाएँ पुस्तकालय की मूल्यवान वस्तुएँ बन गयी। ऐसा प्रतीत होता है कि पाउलेट ने भी 'गजेटियर ऑफ बीकानेर' लिखते समय इस पुस्तकालय के कुछ बन्द बस्तो को प्रयोग के लिए खुलवाया होगा। इसमे तो सन्देह नही कि उन्होने 'दयालदास री ख्यात' का खुलकर प्रयोग किया था।[10] वैसे पाउलेट के समय से ही पुस्तकालय की उपयोगिता की चर्चा पुन: जोर पकड़ने लगी थी। धीरे-धीरे इस बात की आवश्यकता समझी जाने लगी थी कि इसे आधुनिक रूप दिया जाये और उस उद्देश्य के लिये कम से कम महत्वपूर्ण ग्रथो की सूची तो तैयार की जाये। मुंशी देवीप्रसाद व गोरीशकर हीराचन्द ओझा अन्य इतिहासकार है, जिन्होने इस पुस्तकालय का पूरा उपयोग अपनी रचनाओ के लिये किया।

1874 ई मे श्री हरिशचन्द्र शास्त्री ने पहली वार विशिष्ट ग्रथो की सूची बनायी जिसे 1880 ई मे डॉ. राजेन्द्र लाल मित्र ने भारत सरकार की ओर से प्रकाशित किया। महाराजा गगासिह के काल मे पुस्तकालय का महत्व और उभर कर सामने आया। उन्होने भी कुछ ख्यातो की प्रतिलिपियां तैयार

करवाई । पर इस पुस्तकालय के महत्व को सर्वप्रथम सवसे अधिक उजागर करने वाला विद्वान एक विदेशी था—टैसीटोरी । यह इटालियन राजस्थानी भाषा का बहुत प्रेमी था । उसने इस पुस्तकालय का पूर्ण अन्वेषण किया व उनमे से राजस्थानी के 25 गद्य ग्रन्थ व 32 पद्य ग्रन्थो का व्यौरा तैयार करके रायल एशियाटिक सोसाइटी, बगाल के तत्वावधान मे 1918 ई. मे प्रकाशित करवाया । इतना ही नही, इस विद्वान ने राजस्थानी भाषा के तीन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक एव साहित्यिक ग्रन्थ—'कृष्ण रुकमणी री वेलि', 'राव जैतसी रो छ्द' व 'राव रतन महेसदासोत री वचनिका' का सम्पादन करके उक्त-सोसाइटी से प्रकाशित कराया । इन कार्यों से शोध जगत मे पुस्तकालय का नाम प्रचलित होने लगा । इस अवस्था को समझकर एव पुस्तकालय के अनोखे महत्व को भांपकर महाराजा गगासिह ने तत्कालीन राज्य के शिक्षा निदेशक डॉ. रामसिंह व प्रो. नरोत्तमदासजी स्वामी को इसका दायित्व सौपा व पुस्तकालय को शोध विद्वानो के लिए खोल दिया । पर पुस्तकालय के सही प्रयोग के लिये एक सूची का उपलब्ध होना आवश्यक था । इस कार्य को प्राथमिकता देते हुए मद्रास विश्वविद्यालय मे संस्कृत के प्रोफेसर डॉ. सी. कुन्हन राजा को परामर्श के लिए वीकानेर वुलाया । उन्ही की सलाह पर इसी विश्वविद्यालय के शोधवेत्ता के. माधवकृष्ण शर्मा को पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त किया गया और विधिवत ढग से ग्रन्थो की सूची वननी प्रारम्भ हुई । 1944 ई मे सूचीपत्र का प्रथम भाग प्रकाशित हुआ । इस सूचीपत्र की यह विशेषता रही कि पुस्तकालय के ग्रथो को पहले भाषा के आधार पर विभक्त कर फिर एक-एक भाषा की सूची मे ग्रथो को विषय अनुसार विभाजित किया । फिर उसी क्रमानुसार उन्हे (ग्रन्थो) को पुस्तकालय मे रखवा दिया । आज तक भी यही व्यवस्था चल रही है । इस वीच हस्तलिखित ग्रन्थो की सूची प्रकाशित होती रही । 1947 ई. मे राजस्थानी भाषा का सूचीपत्र प्रकाशित हुआ था ।

इसके अतिरिक्त दुर्लभ ग्रथो के प्रकाशन की योजना भी वनाई गई । 'गगा प्राच्य ग्रथमाला' के अन्तर्गत सस्कृत भाषा में लिखे गये दुर्लभ ग्रथो का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया । इसके लिये 'मदन रत्न प्रदीप', 'टोडरानन्द अवतार सौरण्य', 'जगद्विजय छंद', 'मुद्राराक्षस पूर्व कथानक', 'सगीतराज' व 'अनूपसिंह गुणावतार' चुने गये व प्रकाशित हुए । राजस्थानी व हिन्दी भाषा मे लिखे गये ग्रन्थो के प्रकाशन की व्यवस्था के लिये 'सादूल प्राच्य ग्रन्थ माला' योजना प्रारम्भ की गयी । जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से राजस्थानी के 'गीत मजरी',

'वीर गीत', 'दयालदास री ख्यात' (एक भाग) व हिन्दी मे 'जसवन्त उद्योत' ग्रथ प्रकाशित हुए। 1948 ई. तक 10 ग्रथ व सात ग्रथों के सूचीपत्र प्रकाशित कर दिये गये। शोधार्थी की सुविधा के लिये सूचीपत्र को मुख्य रूप से सस्कृत, राजस्थानी व हिन्दी तीन भागो मे बाट दिया गया।

इस पुस्तकालय मे प्रकाशित व अप्रकाशित सूची के अनुसार 9521 ग्रन्थ संस्कृत भाषा मे, 554 ग्रन्थ हिन्दी भाषा मे एव 359 ग्रथ राजस्थानी भापा मे है। इसके अतिरिक्त 830 ग्रथ जैन शास्त्र के है। इस प्रकार कुल ग्रन्थो की सख्या 11,264 है, जिनमे राजस्थानी व हिन्दी भाषा के ग्रथो की पूरी सूची प्रकाशित हो चुकी है परन्तु सस्कृत भाषा के ग्रथों मे केवल 6682 ग्रन्थो को ही प्रकाशित सूची मे लिया गया है। इसके अतिरिक्त सस्कृत का ही एक कार्य बगाली लिपि मे है, राजा भोज कृत सरस्वती कण्ठाभरणम्। यह एक अलकार शास्त्र है। कन्नड़ लिपि मे भोजपत्र पर लिखित एक रचना भी उपलब्ध होती है। 'श्री दुर्गा सप्तशती सम्पूर्ण' केवल एक पृष्ठ पर छपी हुई है, इस पुस्तकालय का एक अन्य आकर्षण है।

सस्कृत भाषा के ग्रंथ—

सस्कृत ग्रथो मे वेद, सहिता, ब्राह्मण, उपनिषद, वेदान्त, श्रौत, गृह्य, महाभारत, रामायण, पुराण, स्मृति आधार, कालनिर्णय, आन्हिक कर्म विपाक, कुण्ड विधान, तीर्थ, दान माहात्मय, व्रत, शाति, श्राद्ध, सन्यास, निबन्ध, प्रकीर्णक, महाकाव्य, लघुकाव्य, नाटक, चपू, सुभाषित, प्राकृत काव्य, सगीत, अलकार, नीति, कामशास्त्र, आयुर्वेद, ज्योतिष, कोष, छद, व्याकरण, साख्य, न्याय, वैशेषिक, मीमासा, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शैव वैष्णव, यत्र-मंत्र-तत्र शास्त्र आदि के ग्रन्थ हैं।

प्राचीनतम ग्रथो मे धनजय कृत 'राघव-पाण्डवीय' है जो वि स. 1380 ई. का लिपिबद्ध है। यह सस्कृत मे भारत के प्रसिद्ध महाकाव्यो मे एक गिना जाता है और जो व्याकरण व अलकार के अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस ग्रथ के प्रत्येक श्लोक के दो अर्थ निकलते है, उनमें एक साथ श्री राम व पाण्डवो के जीवन व उनके क्रियाकलापो का विवरण प्राप्त होता है। दूसरा प्राचीनतम प्रसिद्ध ग्रन्थ श्री हर्ष कृत 'नैपधीय चरित्र' है, जो सस्कृत के पाच महाकाव्यो मे एक गिना जाता है। इसका रचनाकाल वि. स. 1413 है। यह ग्रथ काव्य का श्रेष्ठ उदाहरण है, जिसमे मुख्य रूप से नल दमयन्ती का वर्णन

है। इसके अतिरिक्त प्राचीन ग्रन्थों मे विष्णु शर्मा कृत 'पचतन्त्र' है, जो कि वि स. 1429 का लिपिबद्ध है। अन्य वि. स. 1430 की रचना 'जन्मपत्री पद्धति' हैं। संस्कृत भाषा के विशिष्ट ग्रथो मे स्वर्ण रजताक्षर युक्त बेल बूटेदार 'राधा कवत्त', 'समुद्र सगम' आदि है। 'समुद्र सगम' मुगल सम्राट शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह के विशेष संरक्षण से उत्पन्न रचना है। जिसकी रचना मुगलो की नयी राजधानी शाहजहाँवाद (पुरानी दिल्ली) में कार्तिक सुदी 15, स. 1714 मे हुई थी। इसका रचनाकाल इस दृष्टि से उल्लेखनीय है क्योकि उस समय दारा मयूर सिहासन को बचाने के लिए अपने भाइयो व विशेषकर औरगजेव के विरुद्ध सघर्ष की तैयारी कर रहा था। इस ग्रथ मे पृ. 1 पर ही लिखे इस श्लोक "अथ कय(य)ति। वीतराग-विगत शोक-सन्दोह मुहम्मद दाराशुकोह" से दारा का सम्बन्ध विदित होता है। दारा के भारतीय दर्शन के प्रति रुझान के लिये उसके गुरु वावा लालदास का पूरा योगदान था। इसकी पुष्टि भी इस श्लोक से विदित होती है, "विशेषत श्चैतन्य स्वरूप-ज्ञान-मूर्ति-सद्गुर-वावा लाल" (पृ 2) मूलत इस ग्रथ मे व्रह्म तत्व तथा पृथ्वी आदि पच महाभूतो का विवेचन किया गया है। यह रचना दारा द्वारा भारतीय सस्कृति को दिये गये सम्मान का एक और श्रेष्ठ उदाहरण है।

दुर्लभ ग्रथों मे राजा रायसिह, कर्णसिह व महाराजा अनूपसिह के काल मे निर्मित अनेक रचनाएँ आती हैं। राजा रायसिह के काल की रचना 'रायसिह महोत्सव' के प्रारम्भ मे राठौडो की वशावली दी गयी है, फिर राजा रायसिह का अपना वृतान्त है। तत्पश्चात इसमें विभिन्न औषधियो का उल्लेख आया है। अन्य महत्वपूर्ण रचना, 'ज्योतिप रत्नाकर' जिसके वारे मे मुंशी देवीप्रसाद का यह विचार है कि मूलत. यह रचना श्रीपति की है, जिस पर राजा रायसिह ने 'वालवोधिनी' टीका की थी।[11] इसके अन्त मे लिखा है, "इतिश्री श्रीपति विरचिताया ज्योतिषरत्नमालायां भाषा टीकायां परम कारुणिक महाराजाधिराज महाराय श्री रायसिह विरचिताया वालाववोधिन्यां देवप्रतिष्ठा प्रकरणं विंशतितम्।" इसके अतिरिक्त महादेव कृत 'रायसिह सुधा-सिन्धु' एवं गोपाल व्यास कृत 'अनुभव सागर' की प्रशस्तियाँ उस काल के राजनैतिक इतिहास पर भी पूरा प्रकाश डालती हैं। इनकी सहायता से हम मुगलो के काबुल, कच्छ एव सिरोही अभियानो की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

राव कर्ण के काल तक आते-आते संस्कृत साहित्य की रचनाओ के विषय मे काफी अन्तर आ गया था। विशेपकर जैन-मुनियों का योगदान समाप्त सा

होता जा रहा था। आयुर्वेद व ज्योतिष पर कम लिखा जाने लगा, उसका स्थान अलकार व छन्द शास्त्र ने ले लिया। राव कर्ण के काल की मुख्य सस्कृत भाषा की रचनाएँ श्री पेश्य कृत 'साहित्य कल्पद्रुम', गगानन्द मैथिल कृत 'कर्ण भूषण' एव 'काव्य डाकिनी', मुद्रल कृत छन्द्र ग्रन्थ, 'कर्ण सतोप' तथा होसिग भट्ट का 'कर्ण वितस' है। 'साहित्य कल्पद्रुम' 383 पृष्ठो का एक वृहत ग्रन्थ है। 'कर्णवितस' तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था व सामाजिक मापदण्डो व मूल्यों पर प्रकाश डालने वाला एक पुष्ट व्यग साहित्य है। पर बहुत से परवर्ती लेखको की इस बात को नही माना जा सकता कि इस ग्रन्थ से राव कर्ण की 'जय जगल घर पातशाह' वाली घटना की पुष्टि होती है।[12] सम्बन्धित श्लोक इस प्रकार का है, "**दिल्ली शाखिल सैन्यानां प्रौढा हंकार मर्दनः करवालश्चिर जीयात्कर्ण सिंह महीपते।**" इससे यही विदित होता है कि राव कर्ण के आलमगीर के साथ सम्बन्ध बिगड़े हुए थे व उसने बादशाह के गर्व को चूर किया था। अन्य समकालीन ग्रथों से भी विदित होता है कि राव कर्ण ने कई बार औरगजेब के विरुद्ध विद्रोह किया था और इसी कारण औरगजेब ने राव कर्ण को 1669 ई मे गद्दी से भी हटा दिया था।[13] पर यह ग्रन्थ कोई कारण विशेष प्रकट नही करता है।

राव कर्ण के उत्तराधिकारी महाराजा अनूपसिह का काल बीकानेर राज्य मे साहित्य व सस्कृति की दृष्टि से स्वर्णयुग है। उनके काल मे भारत के अनेक विद्वानो ने बीकानेर आकर साहित्य, दर्शन, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र, ज्योतिष, कामशास्त्र तथा कौतुक आदि विषयों पर अनेक ग्रन्थो की रचना की। भाव भट्ट ने सगीत विषयक अनेक ग्रथो की रचना की जिनमे 'अनूप सगीत विलास', 'सगीत अनूपाकुंश', 'अनूप राग सागर', 'अनूप सगीत रत्नाकर', 'अनूपोपदेश', 'अनूप सगीत वर्तमान' आदि ग्रथ मुख्य है। महाराजा अनूपसिंह स्वय एक अच्छे लेखक थे, उन्होने 'अनूपविवेक', 'काम प्रबोध', 'श्राद्ध प्रयोग चिन्तामणी' और 'गीत गोविन्द' की 'अनूपोदय' नामक की टीका का निश्चित रूप से पता लगता है। इसके अतिरिक्त वैद्यनाथ सूरी की ज्योत्पति सार एवं श्वेताम्बर, उदयचन्द्र का 'पाण्डित्य दर्पण' इस काल की अन्य मुख्य रचनाएँ इस पुस्तकालय को समर्पित है।

महाराणा कुम्भा कृत 'सगीत राज ग्रथ' की पूरी प्रति इस पुस्तकालय मे उपलब्ध है, जो अन्यत्र कही नही है। इन्ही के राजगुरु शिवानन्दजी गोस्वामी

के विविध विषयो के 35 ग्रन्थो मे से अधिकतर इस पुस्तकालय मे हैं। इनमे 'सिंह सिद्धांत' व 'सिंधु तन्त्र शास्त्र' विशाल ग्रथ है, जिनका समकक्ष तन्त्रशास्त्र का ग्रथ अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

राजस्थानी भाषा के ग्रंथ—

पुस्नकालय मे राजस्थानी भाषा मे सग्रह बहुत ही समृद्ध है, यद्यपि यह मुख्य रूप से क्षेत्रीय घटनाओं से सम्बन्धित है। इसको 'ख्यात' व 'वात' साहित्य राजस्थान इतिहास के पूर्णलेखन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। बीकानेर मे इसके सस्थापक राव बीका के काल से ही राजस्थानी रचनाएँ रचित होनी प्रारम्भ हो गयी थी। पुस्तकालय मे लगभग 359 हस्तलिखित ग्रथ राजस्थानी मे है, लेकिन यह सख्या उनका सही प्रतिनिधित्व नही करती है। इस सग्रह मे बहुत से ऐसे ग्रथ है, जो अनेक खण्डो में विभक्त है तथा प्रत्येक खण्ड एक स्वतन्त्र विषय, घटना व पात्र चुनता है। 'वात साहित्य' इसी दृष्टि का उदाहरण है। अगर इन सबको गिना जाये तो यह संख्या सरलता से दो हजार से ऊपर चली जायेगी। राजस्थानी ग्रथों की सूची श्री दीनानाथ खत्री ने डॉ. कुन्हन राजा के निर्देशन में तैयार की थी। यद्यपि यह सूची प्रकाशित हुई थी, पर इसकी प्रतियाँ अब नही के बराबर है। पर इससे पूर्व टैसीटोरी ने अधिकाश महत्वपूर्ण राजस्थानी पद्य व गद्य साहित्य को रायल एशियाटिक सोसायटी के लिये छाप दिया था, जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। चू कि टैसीटोरी ने अपना कार्य अग्रेजी भाषा मे छापा था, इस कारण हिन्दी भाषा के पाठकों व शोधवेत्ताओ के लिये चौपासनी शोध संस्थान, जोधपुर ने डॉ नारायणसिंह भाटी के सम्पादन मे 'डॉ. टैसीटोरी का राजस्थानी ग्रन्थ-सर्वेक्षण' के नाम से 'परम्परा' शोध पत्रिका के भाग 28-29, 1969 ई मे इसे प्रकाशित किया था। इन प्रयासो से यह विदित हुआ कि टैसीटोरी का इस क्षेत्र में योगदान कितना अमूल्य है।

डॉ. कुन्हन राजा ने सूचीपत्र तैयार कराते समय राजस्थानी ग्रथो को भी विषय के अनुसार विभक्त किया और वे विषय वही है, जिनकी गणना हम सस्कृत ग्रन्थो के सन्दर्भ मे कर चुके हैं। डॉ. कुन्हन राजा की यह धारणा सही है कि आधे से अधिक राजस्थानी रचनाएँ पद्य में है।[14] सर्वप्रथम पद्यकाव्य की सूची ही आती है। इसके अन्तर्गत 'अचलदास खीची री वचनिका', महाराणा कुम्भा कृत 'गीत गोविन्द टीका', 'गुण बावनी', 'करमसी रा गीत' (दीवान

कर्मचन्द्र बच्छावत), 'ग्रन्थराज' गाडण गोपीनाथ लिखित, 'नरसी मेहता रो मायरो', 'ढोला मारू रा दोहा', 'महाराजा गजसिंघजी रा कवित्त', 'राठौडां री पीढिया रा गीत' आदि मुख्य ऐतिहासिक व साहित्यिक रचनाएँ है। इस खण्ड की सबसे प्राचीन रचना गणपति कवि की 'माधवा नल प्रबन्ध दोग्बध' है, जो स. 1584 मे रची गयी थी। वैसे प्राचीन ऐतिहासिक रचना 'बीठू सूजा रै केयो राव जैतसी रो छद' है, जो स 1591 मे प्रणीत हुआ व स. 1720 मे जिसकी कई प्रतिलिपियाँ तैयार की गयी। बाबर व अकबर के मध्यकाल के भारत व विशेषकर राजस्थान की विभिन्न अवस्थाओ को जानने के लिये यह एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

चन्दवरदाई का प्रसिद्ध 'पृथ्वीराज रासो' भी इस खण्ड की शोभा है। पर इस दृष्टि से स्थानीय महत्वपूर्ण व प्रसिद्ध रचना 'क्रिसन रुकमणी री बेलि' है। जिसकी कई प्रतियाँ पुस्तकालय मे उपलब्ध है। ऐसा प्रतीत होता है कि समय-समय पर इसकी प्रतिलिपियाँ तैयार की जाती रही थी। सम्पूर्ण व स्पष्ट रचना स. 1778 की है, जो महाराजा सुजानसिघजी के कहने पर तैयार की गयी थी। वैसे मूल रचना राजा रायसिंह जी के काल मे हुई थी व रचियता उनका प्रसिद्ध भाई पृथ्वीराज था। टैसीटोरी ने पृथ्वीराज के इन्ही गुणों से प्रभावित होकर उन्हे 'Horace in Dingal' कहा है।[15] इस रचना के बारे मे टैसीटोरी की यह मान्यता है कि 'बेलि क्रिसन रुकमणी री' राजस्थानी साहित्य रूपी रत्नगर्भा खान के अत्यन्त देदीप्यमान रत्नो मे से एक श्रेष्ठ रत्न है। ····डिगल साहित्य की यह सर्वाग सम्पूर्ण कृति है।"[16] 'अजीत विलास' की प्रति भी उपलब्ध है, पर जीर्ण-शीर्ण है। महाराजा रायसिंह के ज्येष्ठ पुत्र दलपतसिंह के परिवार के बारे मे जानने के लिये उनके पुत्र की जन्मपत्री व सक्षिप्त ब्योरा भी है।

राजस्थानी गद्य काव्य के सग्रह मे प्राचीनतम ग्रथो मे मुख्य रूप से स. 1619 मे रचित 'वैताल पच्चीसी' है। 1644 सवत् की 'सिहासन वत्तीसी' अन्य रचना है। इस पुस्तकालय मे अनेक ऐसे ग्रथ है, जो प्रमाणित करते हैं कि महाराजा अनूपसिह शासक बनने से पूर्व भी साहित्य रचनाओ को प्रोत्साहित करने मे लगे हुए थे। उनकी आज्ञा से स. 1722 मे 'फुटकर वाता' तैयार की गयी, जिसमे राजस्थान के प्रमुख चरित्रो का सक्षिप्त पर महत्वपूर्ण विवरण है। अनूपसिह ने वात साहित्य की रचनाओ को प्रोत्साहन देकर एक नया कार्य किया,

जिसके फलस्वरूप यह शैली क्रमश. बीकानेर मे विकसित होती चली गयी और राजस्थान इतिहास जानने का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गयी।

ख्यात खण्ड मे सबसे अधिक समृद्ध रचनाएँ हैं जो ऐतिहासिक धरातल पर भी काफी सीमा तक खरी उतरती हैं। ख्यातो की सूची देखते ही एक बात स्पष्ट रूप से उभरती है कि बीकानेर की प्रसिद्ध 'दयालदास री ख्यात' से पूर्व विशेषकर 18 वो शताब्दी मे कई महत्वपूर्ण ख्यात रचनाएँ हुई थी। दयालदास ने इन सबका पूरा प्रयोग किया था, जैसाकि उसकी ख्यात की घटनाओ को इन ख्यात की घटनाओ के तुलनात्मक अध्ययन से विदित होता है, पर दयालदास ने इन रचनाओ का कही वर्णन नही दिया है। पूर्वकालीन मुख्य रचनाओ मे 'महाराजा सुजाणसिंघजी सू महाराजा गजसिंघजी ताई' उल्लेखनीय है, जो 18 वी शताब्दी मे राजस्थान व बीकानेर के राजनैतिक लेखा-जोखा का प्रामाणिक विवरण प्रदान करती है। बल्कि 'नैणसी री ख्यात' के बाद के विवरण को इससे सही मापा जा सकता है। राजस्थान मे गद्य शैली की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण रचना है और इसको पढने के बाद पता लगता है कि नैणसी के बाद ख्यात लिखने की शैली मे कितना अन्तर आ गया था। यद्यपि लेखक का नाम ज्ञात नही है, पर ऐसा प्रतीत होता है कि बोकानेर के दीवान मोहता-परिवार का इस रचना से जरूर कोई सम्बन्ध रहा था। क्योकि इस काल की मोहता परिवार की अन्य रचनाओ की घटनाओ व शैली का इससे बडा सामिप्य है। इस ख्यात की भी कई प्रतिलिपियाँ तैयार को गयी थी व यह 'गजसिंहनामा' के नाम से भी जानी गयी।[17] अनूप सस्कृत पुस्तकालय मे उपलब्ध प्रति के 364 पृष्ठ है।

18 वी व 19 वी शताब्दी मे ख्यात रचनाओ पर अधिक ध्यान दिया गया। उदाहरणार्थ 'बीकानेर रै राठौड़ो री ख्यात धूहडजी सू', 'बीकानेर रै राठौड़ां री ख्यात सीहैजी सू', 'बीकानेर रै राठौड़ा री बात तथा वशावली', 'उदयपुर री ख्यात' आदि जिनमे इस बात का भी प्रयास किया गया कि पूर्व इतिहास की बातो को भी लिया जाये। उपर्युक्त वर्णित सभी ख्याते बीकानेर के सस्थापक राव बीका व उसके उत्तराधिकारियों के काल की बहुत सी महत्वपूर्ण बातो की जानकारी देती है, जिसका अभाव दयालदास री ख्यात मे होता है।

वैसे दयालदास कृत 'बीकानेर रै राठौड़ां री ख्यात' अपने आप मे बीकानेर व राजस्थान के इतिहास के लिए उल्लेखनीय योगदान है। इसमें इस बात का

सुन्दर प्रयास किया गया है कि राठौडों के इतिहास को बीकानेर राज्य के सन्दर्भ मे सक्षिप्त परन्तु उपयोगी रूप से प्रस्तुत कर दिया जाये। दयालदास अपनी सीमाओ व कमियो के बाद भी काफी सफल रहा है। दयालदास की रचनाएँ राजस्थानी इतिहास लेखन की शैली में पुराने व नये प्रयोगो का अद्‌भुत मिश्रण है। उनकी अन्य रचनाएँ प्रमुख रूप से 'देश दर्पण' एव 'आर्याख्यान कल्पद्रुम' है। यद्यपि इन दोनो रचनाओ मे बीकानेर का सक्षिप्त इतिहास दिया है, पर कई सूचनाएँ इसमे भी महत्वपूर्ण है और जिनका वर्णन दयालदास अपनी ख्यात मे भी नही करता है। उदाहरणार्थ अकबर ने रुष्ट होकर रायसिंह के स्थान पर कुछ समय के लिये गद्दी उसके पुत्र दलपत को दे दी थी, का स्पष्टीकरण 'देश दर्पण' से ही होता है।[18] 'आर्याख्यान कल्पद्रुम' अपने स्वाभाविक राजनैतिक विवरण के अतिरिक्त जो महत्वपूर्ण सूचनाएँ देता है, वह है राजपूत राज्यों में प्रचलित 'पट्टा प्रणाली' के बारे मे। इस ग्रन्थ से हम बीकानेर व जोधपुर राज्य मे प्रचलित 18 वी व 19 वी शताब्दी की 'पट्टा व्यवस्था' व सामन्ती व्यवस्था की महत्वपूर्ण सूचनाएँ एकत्रित कर सकते हैं। उल्लेखनीय बात यह भी है कि दयालदास ही पहला लेखक है जो राव कर्णसिंह के काल से सम्बन्धित 'जय जगलधर पातशाह' की घटना का सर्वप्रथम वर्णन करता है। इससे पूर्व की ख्यातों मे यह विवरण नही आया है। दयालदास री ख्यात के एक भाग का प्रकाशन प्रो दशरथ शर्मा के सम्पादन मे प्रकाशित हो चुका है।

ख्यात खण्ड मे जोधपुर राज्य की शोध सामग्री भी अध्ययन हेतु बहुत सहायक है। हमे नैणसी री ख्यात की प्रतिलिपियाँ प्राप्त होती है। स. 1899 की बीठू पनो द्वारा तैयार की गयी प्रति अधिक स्पष्ट व प्रामाणिक है। इसके अतिरिक्त 'मारवाड री ख्यात' जो तीन खण्डो मे है (पृ 179, 297, 183) अध्ययन के लिये बहुत ही उपयोगी है। आईने-अकबरी का राजस्थानी सस्करण जयपुर नरेश प्रतापसिंघजी की आज्ञा से मु शी हीरालाल ने स. 1852 मे तैयार किया था। यह प्रसिद्ध आईन का पूरा अनुवाद नही है, इसमे केवल कुछ भागो को ले लिया गया है।

जहाँ तक ख्यात खण्ड के प्राचीन ग्रन्थों का प्रश्न है, निश्चित रूप से 'दलपत विलास' जैसे ग्रथो को, चाहे सक्षिप्त रूप मे ही क्यू न हो, श्रेय जायेगा। अकबर व राजा रायसिंह कालीन यह रचना मुगल-राजपूत (प्रारम्भिक) सम्बन्धो, राजपूत राज्यो की आन्तरिक समस्याएँ, मुगल दरबार के उनके अनुभव व मुगलों का उनके प्रति दृष्टिकोण आदि विषयो पर यह प्रामाणिक रचना है। अज्ञात

लेखक की इस रचना का प्रकाशन सादूल राजस्थानी इन्स्टीट्यूट द्वारा 1960 मे हुआ है । श्री रावत सारस्वत ने इसका सम्पादन किया है एवं प्रो. दशरथ शर्मा ने इसकी भूमिका लिखी है । इसके अतिरिक्त आदूणी किले (दक्षिण) से महाराजा अनूपसिह द्वारा अपने दीवान नाजर आनन्दराम को दीवान पद के कार्यो को जतलाने के लिये भेजा गया 'परवाना' प्रशासनिक इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है ।[19]

पुस्तकालय के राजस्थानी खण्ड मे 'वात साहित्य' का पूरा एक अलग से भाग है, जिससे यह पता चलता है कि इस साहित्य पर उत्तर मुगलकालीन राजस्थान मे कितना बल दिया गया था एव इसकी प्रचुरता से यह पुस्तकालय भी कितना समृद्ध हुआ है । वैसे वात साहित्य महाराजा अनूपसिह के काल से ही प्रारम्भ हो गया था, पर महाराजा गजसिघजी के काल मे यह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया था । महाराजा गजसिह ने नैणसी की बहुत सी वातो की प्रतिलिपि तैयार करवायी थी । 'फुटकर वाता' के नाम मे अनेक ग्रथ इस भाग मे है । इनके नाम इस प्रकार है, उदाहरणार्थ— 'रावलदे साखले री वात', 'राठौर सीहेजी री वात', 'कु अर रिणमल चूड़ावत असौ सोलंकी मारियो तेरी वात', 'राव करणसिह रै कंवरा री तथा नापै साखला री वात' इत्यादि । इस साहित्य से हमे न केवल विशिष्ट चरित्रों के क्रिया-कलापो का ज्ञान होता है, बल्कि कुछ महत्वपूर्ण निश्चित घटनाओ एव सामाजिक व सास्कृतिक परम्पराओ का भी भान होता है । अब तो इस तथ्य पर भी बल दिया जा रहा है कि वात साहित्य से आर्थिक इतिहास की सूचनाएँ भी एकत्रित की जाये । इसमे प्राचीन रचनाएँ महाराजा अनूपसिंह के काल की है । कई बार यह वात साहित्य ख्यातो से मिली सूचनाओ मे वाछनीय सशोधन करा देता है । बीकानेर के राव बीका जोधपुर से क्यो जागलदेश की ओर आये, इस पर ख्यात साहित्य मे ज्यादा किस्से है । जबकि 'नापे साखला री वात' मे कारणो का अधिक स्पष्टीकरण मिलता है ।[20]

वात साहित्य की सम्मानित रचना उन फारसी फरमानो का राजस्थानी मे अनुवाद है, जिन्हे मुगल सम्राटो ने समय-समय पर बीकानेर शासको को प्रदान किये थे । इनमे से दो फरमान जो महाराजा सूरसिंह व अनूपसिंह को दिये गये थे, का राजस्थानी अनुवाद 'फुटकर वाता' मे मिलता है । जिनकी सहायता से हम मनसब, जागीर एव मनसब मे 'जात व सवार' की श्रेणियो व वेतन का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं ।

राजस्थानी साहित्य के अन्य खण्ड 'विगत' मे हम प्राचीन रचना, 'बीकानेर रै धरणीया री याद नै बीजी फुटकर वाता' पाते है, जो स. 1675 की रचना है। सबसे महत्वपूर्ण रचना राव करणसिह के समय की 'पट्टा री विगत' है। जिसमे बीकानेर राज्य के सामन्तों के नाम व उनके पट्टो का ब्यौरा दिया गया है। राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर मे इसके समीप के समय की पट्टा बहियो से इसे मिलाकर उस समय की सामन्त व्यवस्था का एक अच्छा चित्रण पा सकते है। डॉ भादानी ने इस पट्टा बही का सम्पादन करके सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट से 1979 ई. मे प्रकाशित करवा दिया है। इसी खण्ड मे हमे 18 वी शताब्दी मे किये गये प्रयासो के फलस्वरूप 'आईने अकबरी' मे विभिन्न मुगल सूबो व परगनो की सूची का सक्षिप्त विवरण के साथ राजस्थानी मे अनुवाद मिलता है। ग्रथ का नाम है, 'सूबा री सरकारां रै परगना री विगत'।

पीढी व वंशावली के अन्तर्गत जो रचनाएँ हैं वह भी मुख्य रूप से राजा रायसिंहजी के समय से है। पर अधिकतर रचनाएँ 18 वी शताब्दी की है। इन वशावलियो में स्वाभाविक है कि बीकानेर के राठौड़ो की वशावलियाँ अधिक होगी। इसके अतिरिक्त 'बरसलपुर आदि ठीकाणा री पीढिया', 'ओसवाला री पीढिया' आदि मुख्य है। 'ओसवाला री पीढिया' से हम तत्कालीन मुत्सद्दियो की वशावलिया जान सकते हैं।

हिन्दी साहित्य के ग्रन्थ—

इनका भी वर्गीकरण विषय के आधार पर किया गया है तथा विषय वही है, जो सस्कृत व राजस्थानी मे है। सर्वप्रथम 'काव्य' को और उसमें 'पद्य काव्य' को लिया गया है। 'पद्य काव्य' मे प्राचीन रचना 'कीर्तिलता' है जिसे 1672 सवत् मे लिखा गया। ऐतिहासिक दृष्टि से सवत् 1742 का 'जसवंत उद्योत' मुख्य है जो जोधपुर महाराजा जसवन्तसिह के विचारो व कार्यो के बारे में विवरण देता है। इसकी रचना मेड़ता निवासी चूरा ब्राह्मण महिधर द्वारा पहले 1705 संवत् मे की गयी थी। सती प्रथा की महिमा पर न्यामतखा ने, जो फ़तेहपुर शेखावटी के नवाब आसफखा का छोटा पुत्र था 'सत्तवन्ती सत्र' लिखा है। 'फुटकर कवित्त' काफी सख्या मे हैं और उनमे प्राचीन रचना स. 1682 की है जो बुरहानपुर (मध्य प्रदेश) मे राजा सूरसिह के पठनार्थ लिखी गयी थी। इसके अतिरिक्त 'बिहारी सतसई टीका', 'वारहमासा' कबीर व सुदामा के दोहे आदि मुख्य रचनाएँ हैं।

गद्य काव्य में सबसे प्रमुख रचना 'कुतुबुद्दीन की वात' है, जिसे औरगाबाद (महाराष्ट्र) मे सं. 1738 में लिखा गया था। नाटक के अन्तर्गत मुख्य रूप से चार रचनाएँ हैं जो संवत् 1727 मे लिखी गयी। अलंकार शास्त्र मे अनेक रचनाएँ मिलती हैं व सबसे प्रसिद्ध केसवदास की 'रसिकप्रिया' है। जो 1648 संवत् मे तैयार हुआ। इसके अतिरिक्त 'सुन्दर शृगार', 'परोक्ष सिद्धान्त' आदि है। 'संगीत' के अन्तर्गत मुख्य रूप से बीजापुर दक्षिण मे लिखित भूधर मिश्र की (1742 सं) 'राग मंजरी' है। 'कोकशास्त्र' मे दीवान नाजर आनन्दराम का 'कोकसार' है, जो 1740 सवत् मे लिखी गयी, पर यह जीर्ण अवस्था मे है।

'क्रीड़ा' व छन्दशास्त्र में भी अनेक रचनाएँ हैं। महाराज कुमार अनूपसिंह ने 1679 संवत् मे 'वचन विनोद' लिखाया था। रचनाकार थे, आनन्दराम भटनागर। इतिहास विषय के अन्तर्गत मुख्य रूप से फरिश्ता की प्रतियाँ उपलब्ध होती हैं। इसके अतिरिक्त 'वीर विनोद' को भी इसी में रखा गया है। सवत् 1748 का महाभारत व 1784 की गीता भी पुस्तकालय के हिन्दी खण्ड की शोभा है। अन्य खण्ड हैं—वृत कथा, महात्मय, पुराण, नीति, ज्योतिष, वैद्यक, योगशास्त्र, वेदान्त, वल्लभ सम्प्रदाय व स्तोत्र।

पुस्तकालय के उपयोग की सुविधाएँ—

लालगढ मे स्थित यह पुस्तकालय सभी शोधवेत्ताओं व पाठकों के लिए खुला है। इसका सचालन 'महाराजा गगासिंह ट्रस्ट' द्वारा किया जाता है। प्रतिदिन प्रातः 10 बजे से अपरान्ह 5 बजे तक यह खुला रहता है। रविवार को अवकाश रहता है। निवेदन करने पर प्रतिलिपि करवाने की सुविधाएँ जुटायी जा सकती है परन्तु फोटो स्टेट अथवा जीरोक्स की सुविधाएँ उपलब्ध नही है। पुस्तकालय का स्टॉफ संस्कृत व राजस्थानी ग्रन्थों से पूर्ण परिचित है और वे आवश्यकता पड़ने पर सहयोग प्रदान करते हैं। डॉ. करणीसिंह इस पुस्तकालय की सचालन समिति के अध्यक्ष हैं। कोई भी शोधवेत्ता जाने से पूर्व लालगढ पैलेस, वीकानेर के पते पर पत्र व्यवहार कर सकता है। इस वक्त यह संस्था भारत व विदेशो मे अपनी सेवाएँ सुचारु रूप से प्रदान कर रही है।

सन्दर्भ सूची

1. 'छन्द राव जैतसी रो वीठू सूजे रो कैयो' सर्ग 96-99 नं. 59/99, अ स. पु बी.
2 वही

3. जी एस एल. देवडा—'राजस्थान की प्रशासनिक व्यवस्था' पृ. 17, बीकानेर, 1981

4. बी. पी सक्सेना—शाहजहाँ, पृ 267-68, इलाहाबाद, 1930

5. गोरीशकर हीराचन्द ओझा—बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग प्रथम, पृ 280-83

6. वही

7. मोहता सग्रह की प्रतियो की फोटोस्टेट प्रतिया राजस्थान राज्य अभिलेखागार बीकानेर मे उपलब्ध है। देखिये रील न. 8

8 मनोहरसिंह राणावत—इतिहासकार मुहणोत नैणसी और उसके इतिहास ग्रथ, पृ 91, जोधपुर, 1981

9. ये पत्र ब्रिटिश म्यूजियम लायब्रेरी, लन्दन मे प्राप्य है। उनकी प्रतियाँ निबन्ध के लेखक के पास है।

10 पी. पाउलेट —गजेटियर ऑफ दी बीकानेर स्टेट, पृ 2, बीकानेर, 1935

11 ओझा—बीकानेर राज्य का इतिहास (उद्धृत) भाग 1, पृ 202

12. दिवाकर शर्मा—-बीकानेर क्षेत्र के सस्कृत साहित्य मे ऐतिहासिक वँ सास्कृतिक महत्व की सामग्री, 'बीकानेर इतिहास व सस्कृति', डूगर कॉलेज, बीकानेर, 1984

13 देवडा (पूर्व उल्लिखित), पृ 29

14. डॉ. सी कुन्हन राजा—'कैटलॉग ऑफ दी राजस्थानी मैनस्क्रीप्ट इन दी अनूप सस्कृत लायब्रेरी, आमुख, बीकानेर, 1947 ई.

15. एल. पी. टैसीटोरी–रॉयल एशियाटिक सोसायटी जरनल, 1917 (बिबलियोथिका इण्डीका, कलेक्शन ऑफ ओरियन्टल सीरिज)

16. वही

17. अभय जैन ग्रथालय, बीकानेर मे इसकी प्रति गजसिंह नामा के नाम से सुरक्षित है।

18. देवडा—(पूर्व उल्लिखित), पृ. 24

19. वही, पृ. 108-11

20. वही, पृ 6

इतिहास विभाग,
डूगर कॉलेज, बीकानेर

अभय जैन - ग्रन्थालय, बीकानेर

श्रीलाल नथमलजी जोशी

पुस्तकालयो व ग्रन्थागारो की उपादेयता आज इतनी सुविदित है कि इस विषय मे कुछ भी कहने की आवश्यकता नही। इन सस्थाओं की स्थापना तो सरल है किन्तु सचालन कठिन। देश मे जितने ग्रथागार हैं उनमे से अधिकांश राजकीय सरक्षण प्राप्त है, कुछ का संचालन विविध सस्थाओ द्वारा होता है और इने-गिने भण्डार ऐसे हैं जो व्यक्तिगत प्रयासों के परिणाम हैं। श्री अभय जैन ग्रथालय व्यक्तिगत प्रयास का एक सुन्दर प्रतिफल है जिसने देश-विदेश के दिग्गजो का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है।

अनुकूल धरती मिलने पर बीज के प्रस्फुटित एवं फलित होने में देर नही लगती। बात सं 1984 वि की है जब श्री जिनकृपाचन्द्र सूरिजी चातुर्मास के लिए बीकानेर पधारे और अपने प्रवचन में उन्होंने प्राचीन ग्रथो एव पाण्डुलिपियो के सरक्षण पर बल दिया ताकि मनीषियो द्वारा समाज को समर्पित ज्ञान-राशि का लोप न हो जाय। आचार्यश्री के श्रोता तो सहस्रो थे पर उनके वचनों को सहेज कर हृदयंगम करने वाले केवल दो ही व्यक्ति थे—एक चाचा, दूसरा भतीजा। ये चाचा-भतीजा कांधलजी-बीकाजी के समान किसी भूखण्ड पर आधिपत्य जमा कर वहाँ अपना राज्य स्थापित करने के अभिलाषी नही, प्रत्युत तीव्र गति से निरन्तर काल-कवलित हो रही ग्रंथ-राशि को सरक्षण देकर उनके दिवगत स्रष्टाओ को अमरत्व प्रदान करने को आतुर थे—चाचा, अगरचन्द नाहटा, भतीजा, भंवरलाल नाहटा।

उस समय उस नाहटा युगल की आयु सत्रह-साढे सोलह वर्ष थी—एक आयु जिसमें समस्त उमगो के साथ उन दिनों गार्हस्थ्य जीवन मे प्रवेश की तैयारी करते हुए स्वर्णिम स्वप्नो का ससार बसाया जाता था, पर इसके सर्वथा विपरीत

सासारिक सुखो को गौण समझते हुए ये दोनो युवक प्राचीन ग्रन्थो के संरक्षण-कार्य मे मिशनरी उत्साह एव जोश-खरोश के साथ जुट गए—एक ऐसी रुचि, जिसके कारण इनके साथी लोग इन्हें संसार से उपराम, साधु-सन्तो के समान समझ कर अपनी मित्रता के अनुपयुक्त समझने लगे।

अब समस्या थी ग्रथ-सग्रह के श्रीगणेश की। ग्रन्थ उपलब्ध कहाँ से होगे? सयोगवश बम्बई हाईकोर्ट के एक वकील मोहनलाल दलीचन्द का 'कविवर समयसुन्दर' निबन्ध नाहटो ने देखा। आश्चर्य हुआ कि एक वकील बम्बई मे बैठकर समयसुन्दर पर विस्तृत जानकारी दे सकता है तो हम पीछे क्यो रहेगे? प्रोत्साहन का कारण था—नाहटा गवाड मे एक उपाश्रय जो समयसुन्दरजी का उपासरा कहलाता था। बीकानेर के महावीर जैन मण्डल के ग्रन्थालय का अवलोकन करते समय एक गुटका मिला जिसमे समयसुन्दर की अनेक महत्वपूर्ण रचनाएँ उपलब्ध थी। युवकों का हौसला बढा और वे द्विगुण उत्साह के साथ अपने कार्य मे तल्लीन हो गए। समयसुन्दर की खोज करते समय अनेक ग्रथो को देखा। जिन कवियो की रचनाएँ श्रेष्ठ लगती, उनकी नकल करके अपने सग्रह के लिए तैयार कर लेते। कवि के सम्बन्ध मे जानकारी देने वाली आवश्यक टिप्पणिया भी अपनी नोटबुको मे उतार लेते।

उन्ही दिनो नाहटा बधुओ ने देखा कि बडे उपासरे मे प्राचीन ग्रथो के ढेर लगे हुए थे और उनका उपयोग ठाठे बनाने को किया जाने वाला था। यति मुकनचन्दजी ने उस ढेर मे से काम के कागज छांटने शुरु किये। नाहटों ने भी उनका अनुसरण किया। परिणाम सुखद निकला—काफी सामग्री उस ढेर मे से प्राप्त हो गई। उसके बाद जहाँ कही भी ऐसी सामग्री की जानकारी मिलती, ये उसे लेने का प्रयत्न करते, नि शुल्क अथवा खरीद कर। बीकानेर से बाहर जाना पड़ता तो वहाँ भी जाने पर हर हालत मे प्राचीन पाण्डुलिपियो की रक्षा का प्रयत्न करते। इस प्रकार की सामग्री मे ग्रन्थो के बिखरे हुए पन्ने ही अधिकाश मे होते थे। उन्हे ये दोनो अध्यवसायी युवक तरतीववार रख कर ग्रन्थ को पूरा वनाने की कोशिश करते। जव ग्रथ पूरा हो जाता तो इनके हर्ष का वारापार नही था, पर इस प्रकार से पन्ने जोड़-जोड़ कर इन्होने अनेक बहुमूल्य ग्रन्थो की रक्षा कर उन्हे अपने सग्रह मे सुरक्षित रख लिया।

यह ज्ञातव्य है कि प्राचीन लिपियो को पढने व उनका अर्थ लगाने मे श्री भवरलाल का अभ्यास स्व. अगरचन्द से भी अधिक था। रामचरित मानस

मे सीता अपने पति के साथ जाकर भी राम के साथ पूजी जाती हैं, जबकि उर्मिला पति-वियोग सह कर भी सर्वथा अनबूझ पड़ी है। भवरलाल की स्थिति उर्मिला की सी है, पर चाचा-भतीजे मे इतना स्नेह रहा कि भवरलालजी को कभी इस बात का ध्यान ही नही आया कि मेरा नाम अगरचन्दजी के बराबर चल रहा है या नही। अगरचन्दजी का नाम अधिक चलने का कारण सम्भवत· यही है कि भंवरलालजी अपना पारिवारिक व्यवसाय तथा ग्रथ-सग्रह कार्य दोनो ही सम्हालते थे जबकि अगरचन्दजी व्यावसायिक कार्यो से लगभग पराङ्मुख हो गए थे।

जब इनका सग्रह विस्तृत होने लगा, तो प्रारम्भ मे उसे तीन आलमारियो मे रखा जा सका, परन्तु वह तो निरन्तर वृद्धि की ओर अग्रसर था और उसे व्यवस्थित रूप देने के लिए किसी उचित स्थान की आवश्यकता का अनुभव होने लगा।

इस प्रसग को बीच मे छोड कर अब हम संस्था के नामकरण की चर्चा करेगे। अगरचन्दजी के पिता थे शकरदानजी नाहटा। अगरचन्दजी से ठीक बारह वर्ष बड़े भाई थे अभयराज नाहटा, जिनका जन्म वि. सं. 1955 की चैत्र कृष्णा षष्ठी को बीकानेर में हुआ था। समस्त मानवीय गुणो से सम्पन्न यह वैश्य बालक छोटी आयु मे ही अपने से बड़ों के सम्मान का भाजन बन गया था। साहित्य और धर्म में इसकी अपार रुचि और विलक्षण गति थी। परन्तु युवा अवस्था मे ही उनका देहान्त हो गया।

शकरदान इस पुत्र-रत्न के लिए कोई अनुपम स्मारक बनाना चाहते थे, इधर अगरचन्द-भवरलाल अपनी पाण्डुलिपियो की व्यवस्था करना चाहते थे, अतः स्व. अभयराज नाहटा की स्मृति मे 'अभय जैन ग्रन्थालय' की स्थापना की गई। ग्रथालय पर लगे हुए शिलालेख मे स्थापना का वर्ष 1977 वि. अंकित है, परन्तु फिर भी यह वर्ष विचारणीय है। स. 1984 की वसतपचमी पर जैन मुनि का बीकानेर मे चातुर्मास हुआ और तभी नाहटा बंधुओ को पाण्डुलिपि सग्रह की प्रेरणा मिली थी। कुछ वर्ष ग्रंथों के सग्रह मे भी लगे तब कही ग्रन्थालय स्थापित करने की बात उत्पन्न हुई, अतः वि. सं. 1977 को इस ग्रंथालय का स्थापना वर्ष नही माना जा सकता। यह हो सकता है कि सं. 1977 मे जब अभयराज की मृत्यु हुई तो सेठ शकरदान नाहटा ने उनकी स्मृति में कोई स्मारक स्थापित करने का संकल्प लिया होगा, अतः 1977 को

हम स्थापना वर्ष के स्थान पर सकल्प वर्ष कहेगे तो समीचीन होगा। इसके अतिरिक्त अगरचन्दजी के अग्रज मेघराजजी नाहटा के पुत्र केसरीचन्द नाहटा तथा अगरचन्दजी के ज्येष्ट पुत्र धर्मचन्द नाहटा से प्राप्त जानकारी के अनुसार जिस भवन मे यह ग्रथालय अवस्थित है, उसका निर्माण वि. स. 2000 मे ही हुआ था, उससे पहले तो वह स्थान मात्र गायों का एक बाडा था। इसके अतिरिक्त भवन की पहली मजिल पर जो शिलालेख लगा हुआ है, उस पर शकरदान नाहटा कला भवन अकित है और उसका स्थापना वर्ष वि. स 2000 लिखा गया है। स्पष्ट है कि जब वि. स. 1999 मे शकरदानजी का स्वर्गवास हुआ, तो उनके पुत्रो भैरूदान, मेघराज, अगरचन्द नाहटा ने तत्काल इस भवन का निर्माण करवा कर अपने पिता की स्मृति मे कला-भवन स्थापित किया और धरातल मजिल (ग्राउण्ड फ्लोर) पर अभय जैन ग्रन्थालय की स्थापना की। इस प्रकार वि. स. 1977 मे जिस ग्रन्थालय का सकल्प किया था, उसे मूर्त रूप वि स. 2000 मे ही दिया जा सका।

जिस समय ग्रथालय की स्थापना हुई, केवल धरातल मजिल मे ही पाण्डुलिपियो के बस्ते रखे गए, पर उत्साही नाहटा बधुओं की अदम्य लगन के कारण शीघ्र ही धरातल मजिल की सारी आलमारियाँ ग्रथो से भर गई और जो कला-भवन प्रथम मजिल मे अवस्थित था, उसे दूसरी मजिल मे सरकना पडा। यही नही, जो अन्तर्भोम मजिल (तलघर) कबाडखाना बना हुआ था, उसका भी भाग्योदय हुआ और अभय जैन ग्रथालय की पाण्डुलिपियाँ उसमें भी रखी गइ। इस प्रकार तीन मजिलो मे तो अभय जैन ग्रन्थालय अवस्थित है और ऊपरी एक मजिल शकरदान नाहटा कला-भवन।

इस ग्रन्थालय मे सुरक्षित पाण्डुलिपियो की सख्या मैं 40-45 हजार सुनता आ रहा था, जो मुझे अत्युक्तिपूर्ण लग रहा था। अभी तीन दिन पहले जब मैंने ग्रन्थालय के सूची रजिस्टरो का अवलोकन किया तो पता चला कि वह सख्या वास्तव मे त्रुटिपूर्ण थी क्योकि रजिस्टर मे चढी हुई अन्तिम पाण्डुलिपि का क्रमाक 56934 (छप्पन हजार नौ सौ चौतीस) था। पुस्तक का नाम है 'नख शिख वर्णन' रचयिता है—बलभद्र कवि।

क्रमाक 246 पर 'जम्बूदीप पन्नति चूर्णि' दर्ज है जिसका लेखन समय वि. स. 1480 और लेखन स्थान डू गरपुर है। पुस्तक मे 31 पत्र हैं, जिनका आकार 29.6 × 10 8 सेमी है। प्रत्येक पत्र मे 15 पक्तियाँ व प्रत्येक पक्ति मे

66 अक्षर हैं। इसी प्रकार क्रमांक 589 पर 'उत्तराध्ययन सूत्र' दर्ज है जिसकी भाषा प्राकृत है। यह 30 पत्रो मे है, पत्रों का आकार 30 × 7 सेमी है। प्रत्येक पत्र मे 15 पक्तिया व प्रत्येक पक्ति मे 63 अक्षर है। इसका लेखन समय 1517 वि है। क्रमाक 134 पर 'उपासक दसाग सूत्र वृत्ति' ग्रन्थ है जिसके लेखक अभयदेवसूरि हैं और लेखन समय वि स. 1532 है। यह बेल-बूटेदार है और इसमे 13 पत्र हैं। पत्रो का आकार 29.2 × 11.2 सेमी है। प्रत्येक पत्र मे 17 पक्तिया व प्रत्येक पक्ति मे 71 अक्षर हैं। मूल ग्रन्थ प्राकृत मे है व टीका संस्कृत मे।

लगभग सात हजार पाण्डुलिपियाँ ऐसी है जो अभी रजिस्टरो मे दर्ज नही हुई हैं। इस समय श्री दाऊदयाल आचार्य इन ग्रंथो का परिचय एक नये रजिस्टर मे लिख रहे हैं। अधिकाश पाण्डुलिपियाँ सत्रहवी शती की है।

अगरचन्द नाहटा पर लक्ष्मी से भी अधिक सरस्वती की कृपा थी—वे इतनी प्रबल धारणा शक्ति के घनी थे कि अपने सग्रह के सभी ग्रन्थ उनके लिए हस्तामलकवत् थे। उनके रहते किसी शोध छात्र को ग्रथोपलब्धि में कोई कष्ट नही होता था, पर अब उनके स्वर्गारोहण के पश्चात् स्थिति बदल गई है। अब किसी ग्रन्थ को ढूढ निकालना आसान काम नही रह गया है क्योकि न तो ग्रंथ भाषावार दर्ज है, न विषयवार तथा अकारादिक्रम का तो प्रश्न ही नही है। यद्यपि ग्रन्थालय के लिए एक न्यास बना हुआ है, पर वह सम्भवत: आर्थिक पहलू की ओर ही जागरूक प्रतीत होता है। अभी-अभी 'अगरचन्द भवरलाल नाहटा शोध-संस्थान' की स्थापना की गई है। आशा है यह संस्थान शीघ्र ही प्रत्येक भाषा के लिए अकारादिक्रम से विषयवार रजिस्टर तैयार कराएगा ताकि आने वाले शोधार्थी इस दुर्लभ सम्पदा से लाभान्वित हो सकें और यह सम्पदा केवल बस्तो-बुगचो की सम्पत्ति न रहे।

शोध-सग्राहको मे कितनी तल्लीनता अपेक्षित है, यह भवरलाल नाहटा के शब्दो मे पढ़िए—

> "उन दिनो हमे एक ही धुन सवार थी कि सग्रह कैसे हो। रात मे सोते हुए स्वप्न भी ऐसे ही आते। कभी तो किसी ऐतिहासिक स्थान के दर्शन होते, कभी हस्तलिखित ग्रथ-चित्रादि दिखते। आश्चर्य की बात है कि हरे रग का एक चित्र स्वप्न मे दिखाई दिया जिसमे भगवान ऋषभदेव अपनी पुत्रियो—ब्राह्मी व सुन्दरी को लिपि सिखा रहे हैं और सामने पूरी

वर्णमाला (ब्राह्मीलिपि) लिखी हुई है। श्री देवचन्दजी महाराज के जन्म स्थान के सम्बन्ध की ऊहापोह मे स्वय देवचन्दजी महाराज ऋषभदेवजी के मन्दिर के (नाहटों की गवाड़) सामने मिलते हैं और अपना जन्मग्राम बतलाते है जो कि बीकानेर रियासत या जोधपुर रियासत मे है ? इस ऊहापोह मे विस्मृत हो जाता है। समयसुन्दरजी के माता-पिता के नाम की खोज में दूसरे ही दिन बडे उपाश्रय के एक सग्रह के पत्रो मे इन्ही के शिष्यो द्वारा निर्मित गीत मिल जाते हैं और स्वप्न साकार हो जाता है। चित्त की एकाग्रता और सग्रह की अभिलाषा ही इसके मुख्य कारण हो सकते है ·········।

प्राचीन सामग्री का एक-एक पन्ना और उसका एक-एक टुकड़ा भी कितना महत्वपूर्ण हो सकता है, यह चौकाने वाली घटना भी भवरलालजी से सुनिए—

"दो इच के एक पन्ने मे हमें कुछ बारीक अक्षरो मे लिखे दोहे मिले, जिससे ज्ञानसारजी के माता-पिता का नाम, जन्म स्थान, सवत्, दीक्षा-काल, गृह नाम, राज्य सम्बन्ध आदि प्राप्त हो गए।"

अगरचन्दजी नाहटा का अभिनन्दन ग्रथ सन् 1976 मे प्रकाशित हुआ था। उसमे श्री भवरलाल नाहटा के लेख से भी पता चलता है कि इस सस्था ने इन वर्षो मे किस प्रकार प्रगति की।

उन्हे हस्तलिखित ग्रथो की खोज के लिए अनेक जैन-जैनेतर ज्ञान भण्डारो मे जाना पड़ा है और लाखो हस्तलिखित प्रतियाँ देखकर उनमे से जो जो महत्वपूर्ण एव अमूल्य तथा दुर्लभ प्रतियाँ देखने व जानने मे आई, उनके नोट्स ले रखे है। जहाँ तक सम्भव हुआ अन्यत्र से महत्वपूर्ण दुर्लभ ग्रंथो को अपने संग्रह मे भी रखना आवश्यक समझकर सैकडो रचनाओ की नकले करवाई हैं और बहुत सी प्रतियो के तो, काफी खर्च करके, फोटो एव माइक्रो फिल्म करवा ली गई है। इस तरह जो महत्वपूर्ण ग्रथ मूल हस्तलिखित प्रति के रूप मे प्राप्त नही किया जा सका, उसकी प्रतिलिपि करवा के अभय जैन ग्रथालय मे सगृहीत की गई हैं।

हिन्दी, सस्कृत, राजस्थानी, गुजराती, प्राकृत, अपभ्र श के अतिरिक्त इस ग्रथालय मे कन्नड, तमिल, बंगला, पजाबी, सिन्धी, उर्दू, फारसी, कश्मीरी आदि भाषाओ की पाण्डुलिपियाँ भी विद्यमान हैं।

हस्तलिखित ग्रंथो के समान ही मुद्रित पुस्तके भी यहाँ उपलब्ध हैं जिनकी सख्या 50,000 के आसपास है। पाण्डुलिपियाँ और छपी हुई पुस्तके प्राय: सभी विषयों पर पाई जाती है। पुस्तको के अलावा अगरचन्दजी के समय में यहाँ पत्रिकाएँ वहुत वड़ी संख्या मे आती थी और विशेष वात यह है कि कोई भी पत्रिका रद्दी मे नही फेंकी जाती थी। सारी पत्रिकाओं की व्यवस्थित फाइलें इस ग्रंथालय में विद्यमान है। एक उल्लेखनीय वात और—अन्य विद्वानों के जितने भी पत्र नाहटा जी को प्राप्त होते, उन्हे वे नष्ट नही करते थे। ये पत्र आज भी वोरो मे भरे हुए हैं।

इस ग्रथालय के सम्वन्ध मे विद्वानो की सम्मतियां द्रष्टव्य है—

वासुदेव शरण अग्रवाल के विचार से "नाहटा जी ने अकेले एक सस्था का काम पूरा किया है। आगे आने वाली पीढ़ियाँ इसके लिए उनकी आभारी रहेगी।" वाडिया कॉलेज पूना में संस्कृत के प्रोफेसर पी. एल. वैद्य ने अंकित किया—"Was pleased of see the wonderful and valuable collection to Nahata family at Bikaner" डॉ. भोगीलाल जे. साडेसरा के शब्दो में—"Any person interested in indological research and Indian art coming to Bikaner will be immensely benefited if he pays a visit to Shri Abhaya Library and the museum located in it, so ably and efficiently managed by Shri Nahata" अहमदावाद के जितेन्द्र जेटली के शब्दों मे, "यह संग्रह देख कर मुझे विशेष प्रसन्नता इसलिए हुई कि इस जमाने मे भी उच्च अभ्यास और सशोधनों के योग्य प्राचीन ग्रन्थो का और कलाकृतियो का ऐसा सग्रह इतने व्यवस्थित रूप से, किसी सस्था ने नही, वरन् एक व्यक्ति ने किया है। भारत के प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास, साहित्य और सस्कृति के अभ्यासकों को जव भी अवसर मिले, यह सग्रह अवश्य देखना चाहिए।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने विद्या-व्यसनो पुत्र अभयराज नाहटा की स्मृति को अक्षुण्ण रखने के लिए उनके यशस्वी पिता स्वर्गीय शकरदान नाहटा ने जिस अभय जैन ग्रन्थालय की स्थापना का सकल्प लिया और जिसे उनके पुत्रों, पौत्रो ने मूर्त रूप दिया, उस अभय जैन ग्रथालय की देश विदेश के पण्डितों एवं कला मर्मज्ञो ने मुक्तकण्ठ से प्रशसा की है। एक समय आ गया

था जब इस अद्वितीय सग्रह का स्थानान्तरण दिल्ली मे करने की चर्चा चली थी। राजस्थान के सौभाग्य से यह सग्रह अभी तक बीकानेर मे बना हुआ है और विश्वास है कि अब यही बना रहेगा। जिस भावना के साथ स्वर्गीय शकरदान जी ने इसकी स्थापना का सकल्प लिया, जिस अदम्य उत्साह के साथ अगरचन्द जी-भवरलाल जी आदि ने इसे स्थापित किया और जिस लगन के साथ अगरचन्दजी नाहटा ने इसे पनपाया उसी का फल है कि यह सस्था अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर सकी। आवश्यकता इस बात की है कि इससे सम्बद्ध व्यक्ति पूर्णतया जागरूक रहे ताकि जिस उद्देश्य से इसकी स्थापना की गई थी, उसका निर्वाह निरन्तर होता रहे।

केसर प्रकाशनालय
सोनगिरी चौक, बीकानेर

जयपुर एवं नागौर के जैन ग्रन्थ भण्डार

ब्रजेश कुमारसिंह

राजस्थात सदियो से ही साहित्यिक क्षेत्र रहा है। राजस्थान की रियासते यद्यपि विभिन्न राजाओ के अधीन थी तथा इन राज्यो पर दिल्ली का सीधा नियन्त्रण न रहने के कारण विशेष राजनैतिक उथल-पुथल नही हुई। यहाँ के राजा महाराजा भी अपनी प्रजा के सभी धर्मो का समादर करते रहे। जैन धर्मानुयायी भी सदैव शान्तिप्रिय रहे हैं। इनका राजस्थान के सभी राज्यो मे विशेषत जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, कोटा, बून्दी, अलवर, भरतपुर, उदयपुर राज्यो मे पूर्ण प्रभुत्व रहा। शताब्दियो तक वहाँ के शासन पर उनका अधिकार रहा तथा वे अपनी स्वामिभक्ति, शासनदक्षता एव सेवा के कारण सदैव हो शासन के सर्वोच्च स्थानो पर कार्य करते रहे।

प्राचीन साहित्य की सुरक्षा एवं नवीन साहित्य के निर्माण के लिए भी राजस्थान का वातावरण जैन धर्म के लिए बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हुआ। यहाँ के शासको ने एव समाज के सभी वर्गो ने उस ओर बहुत रुचि दिखलाई, इसलिए सैकडो, हजारो की सख्या में नए नए ग्रथ तैयार किए गए तथा हजारो प्राचीन ग्रन्थो की प्रतिलिपियाँ तैयार करवाकर उन्हे नष्ट होने से बचाया गया। ताड़पत्र एव कागज दोनो पर लिखी हुयी सबसे प्राचीन प्रतियाँ इन्ही भण्डारों मे उपलब्ध होती हैं। अपभ्र श, संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, राजस्थानी भाषा का अधिकाश साहित्य इन भण्डारो मे सगृहीत हैं। अपभ्र श साहित्य के सग्रह की दृष्टि से नागौर एव जयपुर के भण्डार उल्लेखनीय हैं।

अजमेर, नागौर, जयपुर, उदयपुर, डूगरपुर एव ऋषभदेव के ग्रथ भण्डार भट्टारकों की साहित्यिक गतिविधियो के केन्द्र रहे हैं। ये भट्टारक केवल धार्मिक नेता ही नही थे अपितु इनकी साहित्य-रचना एव उनकी सुरक्षा मे भी

पूर्ण सक्रिय योगदान रहा है। ये स्थान-स्थान पर भ्रमण करते थे और वहाँ से ग्रन्थो को ला-लाकर इनको अपने-अपने स्थानो पर सगृहीत किया करते थे।

ये ग्रथ-भण्डार प्राचीन युग मे पुस्तकालयो का काम भी देते थे। यहाँ बैठकर स्वाध्याय प्रेमीजन शास्त्रों का अध्ययन, लेखन का कार्य भी करते थे। इसीलिए इन भण्डारो मे धार्मिक जैन साहित्य के अतिरिक्त काव्य, पुराण, ज्योतिष, आयुर्वेद, कथा, मन्त्र-तन्त्र, गणित, अर्थशास्त्र आदि विषयों के भी ग्रथ सग्रह किए जाते थे। राजस्थान मे इस प्रकार के ग्रन्थ-भण्डारो की सख्या 200 से भी अधिक होगी। जिसका विस्तृत सर्वे करके उनकी सूचियाँ प्रकाशित की जा सके तो शोधजगत् के अध्येताओं के लिए उपयोगी होगी।

जयपुर प्रारम्भ से ही सस्कृति और साहित्य का केन्द्र रहा है। यहाँ लगभग 150 से अधिक ही जिन मन्दिर एव चैत्यालय हैं। इस नगर की स्थापना स. 1784 में महाराजा सवाई मानसिह जी द्वारा की गई थी। महाराजा ने इसे साहित्य एव कला का केन्द्र भी बनाया तथा एक राजकीय पोथीखाने की स्थापना की जिसमे भारत के विभिन्न स्थानो से लाये गये सैकड़ों महत्वपूर्ण ग्रन्थ सगृहीत किए हुए हैं।

जयपुर मे अनेको बडे बडे विद्वान् हुए हैं जिन्होने अपनी साहित्य-सर्जना द्वारा हिन्दी-राजस्थानी भाषा के विकास के लिए सैकड़ों सस्कृत-प्राकृत ग्रन्थो के अनुवाद तथा टीकाएँ लिखकर तथा ग्रन्थ भण्डारों की स्थापना कर उनमे पाण्डुलिपियो को सगृहीत कर प्राचीन साहित्य को सुरक्षित कर अमूल्य सेवा की है। जयपुर तथा नागौर के कुछेक जैन ग्रथ भण्डारों का सामान्य विवरण यहाँ देना समीचीन होगा।

(1) पं लूणकरण जी पांड्या जयपुर का ग्रन्थ भण्डार—

प. लूणकरण जी जैन यति थे, जो पांड्या के नाम से प्रसिद्ध थे। इनका जन्म स्थान या जीवन परिचय का विशेष विवरण उपलब्ध नही है। प. लूण-करणजी भट्टारक जगत्कीर्त्ति एव पं. खीवसी के शिष्य थे।

यह सग्रह प. लूणकरण जी के मदिर मे सगृहीत है जो प्राचीन एव प्रसिद्ध मन्दिर है। पण्डितजी स्वय एक अच्छे साहित्यकार थे जिसके कारण इन्होने अच्छे-अच्छे ग्रन्थो का संग्रह किया। इस ग्रन्थ भण्डार मे जैन साहित्य, दर्शन आदि के अतिरिक्त ज्योतिष, आयुर्वेद, काव्य साहित्य, मत्र-तंत्र, धर्मशास्त्र

आदि अनेको विषयो के ग्रथ उपलब्ध है। इस ग्रंथ भण्डार मे 800 के लगभग हस्तलिखित ग्रन्थ एवं 225 गुटके है।

सवत् 1407 मे लिखित 'परमात्म प्रकाश' नामक ग्रथ इस सग्रह का प्राचीनतम ग्रथ है। इस सग्रह मे अनेको दुर्लभ सचित्र प्रतियाँ हैं जिनमे भट्टारक सकलकीर्त्ति का यशोधर चरित्र महत्वपूर्ण है। इसमे लगभग 35 चित्र है जो प्रसंगानुकूल कथा के आधार पर निर्मित है। ये चित्र मुगलकालीन शैली से प्रभावित, सुन्दर और कलापूर्ण है। इस ग्रथ के अतिरिक्त पद्मावती, महामृत्युञ्जय, ज्वालामालिनी, भैरव आदि के चित्र भी बड़े महत्त्वपूर्ण हैं जो मन्त्र शास्त्र एव विधि-विधानो के ग्रथो मे मिलते है। देवी-देवताओ के कुछ चित्र जैसे—गणेश, पद्मावती देवी, धरणेन्द्र पद्मावती, कालिका देवी, पद्मप्रभ तथा सोलह स्वप्न आदि बहुत ही आकर्षक है। इनके अतिरिक्त 50-60 के लगभग मन्त्रो एव इतने ही व्रतो और मण्डलो के भी चित्र इस सग्रह मे उपलब्ध है। कलिकुण्ड पार्श्वनाथ, सूर्यप्रताप यन्त्र, वज्रपंजर यत्र, तीजापौहुत यन्त्र व चतुष्षष्टियोगिनी आदि के चित्र भी इस सग्रह के उल्लेखनीय चित्र है।

इस सग्रह मे कुछ प्रतियाँ रचनाकालीन समय की प्रतिलिपि होने के कारण भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। जैसे—वेष्ठन स. 131 पर सगृहीत बखतराम कृत बुद्धिविलास (रचनाकाल स. 1827) है जिसकी प्रतिलिपि का समय स. 1828 है। इसी प्रकार वेष्ठन स. 44 पर संगृहीत कवि भूधरदास रचित चर्चासमाधान जिसका लिपिकाल स. 1830 है, भी रचनाकालीन प्रति है। संस्कृत नाट्य का एक प्रकार 'व्यायोग' है जो कि बहुत ही अल्प मात्रा मे प्राप्य है, इस दृष्टि से युवराज प्रह्लाद कृत पार्थपराक्रम व्यायोग सस्कृत भाषानिवद्ध वेष्ठन स 122 पर संगृहीत है।

इतिहास की दृष्टि से सवत् 1023 से लेकर सवत् 1891 तक के हुए जयपुर के शासको का विस्तृत परिचय वेष्ठन सं 284 मे सगृहीत 'जयपुर शासको की वशावली' तथा वेष्ठन संख्या 55 पर सगृहीत 'जैन वद्री देश की पत्रिका' जिसमे हैदराबाद से मजलसराय ने पानीपत को पत्र लिखा था, कोई कम महत्त्वपूर्ण नही है।

(2) बड़ा तेरहपंथियों का जैन मन्दिर ग्रन्थ-भण्डार—

यह ग्रथ-भण्डार बड़ा मन्दिर नाम से प्रसिद्ध है जो घी वालो का रास्ता, जयपुर मे अवस्थित है। जयपुर नगर बसने के कुछ समय बाद ही इस मन्दिर

का निर्माण हुआ था। प्रारम्भ से हो इस मन्दिर को साहित्यिक एव धार्मिक क्षेत्र मे केन्द्र स्थान होने का सौभाग्य मिला है। अनेको विद्वानो ने इसी मन्दिर मे बैठकर अपनी साहित्य-सर्जना की है। इन साहित्यकारों मे महापण्डित टोडरमल जी, बाबा दुलीचन्द जी, पं. सदासुख जी कासलीवाल, पं. जयचन्द छाबडा आदि के नाम विशेषत: उल्लेखनीय हैं।

यह ग्रथ भण्डार जयपुर के अन्य जैन ग्रन्थ भण्डारो की अपेक्षा उत्तम एवं वृहद् ग्रन्थ भण्डार है। निर्मित सूची के अनुसार सब मिलाकर 2630 ग्रथ हैं जिनमे 324 के लगभग गुटके भी सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त अनेको अपूर्ण ग्रथ तथा कुछ पूर्ण ग्रथ भी है। इन गुटको मे छोटे-छोटे पाठो के अनेको सग्रहो के अतिरिक्त कई बडी बडी कृतियाँ भी मिलती हैं। इस ग्रथ भण्डार मे ग्रथों का सग्रह प्राचीनता, श्रेष्ठता एव अन्य सभी दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है। इस संग्रह में सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श तथा हिन्दी-राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध लगभग सभी विषयो के ग्रथ उपलब्ध हैं। इस भण्डार मे जैन विद्वानो द्वारा लिखित जैन साहित्य के अतिरिक्त जैनेतर विद्वानो द्वारा लिखित व्याकरण, काव्य, कथा, आयुर्वेद, ज्योतिष, सगीत आदि विषयो के ग्रथ उपलब्ध हैं।

सस्कृत साहित्य के उपलब्ध ग्रथो मे अष्ठसहस्री, उत्तरपुराण की टीका, नागकुमार चरित्र, भरटकद्वात्रिशिका, राजवंश वर्णन, आदिपुराण की सचित्र प्रति उल्लेखनीय है। अष्टसहस्री की सवत् 1490 की प्राचीन, शुद्ध एवं सुन्दर प्रति प्राप्य है, जो सम्पादन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। आचार्य गुणभद्र कृत उत्तरपुराण का सस्कृत टिप्पण पुराण के गूढार्थ को समझने की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। जिनसेनाचार्य कृत आदिपुराण की भी एक सचित्र प्रति इस भण्डार मे विद्यमान है। भरटकद्वात्रिंशिका मे छोटी छोटी 32 कथाओ का सग्रह है जो बालकोपयोगी है। 'राजवश वर्णन' नामक ग्रथ यद्यपि आकार मे छोटा है फिर भी भारत मे होने वाले प्राय: सभी राजवशो तथा उनमे होने वाले राजाओ के नाम व शासनकाल आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। इसी प्रकार नागकुमार चरित्र (धर्मधर कृत) एव तत्वार्थसूत्र की टीका, ये दोनों ही रचनाएँ नवीन और उत्तम है।

अपभ्र श एव प्राकृत के ग्रथो की प्राचीन प्रतियो के अतिरिक्त कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रचनाएँ इस भण्डार में उपलब्ध हैं। प्राचीन प्रतियों मे कुन्दकुन्दाचार्य कृत पञ्चास्तिकाय की सवत् 1329 की प्रति विद्यमान है जो भण्डार मे उपलब्ध

प्रतियो मे सबसे प्राचीन प्रति है। महाकवि पुष्पदन्त विरचित आदिपुराण की संवत् 1597 की सचित्र प्रति उपलब्ध है जिसमें 500 से भी अधिक रगीन चित्र हैं। सभी चित्र भगवान् आदिनाथ एव अन्य महापुरुषो के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले हैं। चित्र सुन्दर और कलापूर्ण है। नवीन उपलब्ध साहित्य में महाकवि स्वम्भू कृत पउमचरिय का टिप्पण, महाकवि वीर कृत जम्बूस्वामी पर संस्कृत टिप्पण, आचार्य श्रुतकीर्त्ति कृत योगसार (योगशास्त्र), वारक्खरी दोहा, दामोदर कृत णेमिणाह चरिउ तथा तेजपाल कृत सभवणाह चरिउ उल्लेखनीय हैं। महाकवि धवल के हरिवशपुराण की एक प्राचीन एव सुन्दर प्रति भी संगृहीत है।

हिन्दी भाषा मे रचित जैन विद्वानो द्वारा लिखित जैन साहित्य का भी उत्तम सग्रह है। कवि देल्ह कृत 'चउबीसी गीत' एक हिन्दी की प्राचीन रचना प्राप्त हुयी है जिसकी रचना सवत् 1371 मे हुई। श्री दशरथ निगोत्या द्वारा सवत् 1718 ई. में रचित धर्मपरीक्षा की हिन्दी गद्य टीका एव ब्रह्मनेमिदत्त विरचित नेमनाथपुराण की टव्वा टीका हिन्दी गद्य साहित्य की उल्लेखनीय रचनाएँ है। श्री जोधराज गोदीका कृत पद्मनन्दि-पंचविंशति की भाषा टीका भी महत्त्वपूर्ण है। इसकी रचना सवत् 1722 मे हुई थी। प. दौलतराम कृत 4829 पद्यात्मक अध्यात्म वारहखड़ी की एक ऐसी प्रति उपलब्ध है जो अब तक प्राप्त अन्य अध्यात्म वारहखड़ियो की अपेक्षा सबसे वृहद् एव महत्त्वपूर्ण प्रति है। इनके अतिरिक्त अन्य अनेकों रचनाएँ भी वड़े ही महत्त्व की उपलब्ध हैं।

इनके अतिरिक्त निम्न विद्वानो के ग्रथ उनके स्वय के हाथ से लिखे हुए प्राप्त हैं—

1. प. जयचन्द छावड़ा—
    1. प्रमेयरत्नमाला भाषा
    2. द्रव्य सग्रह भाषा
    3. स्वामी कार्त्तिकेयानुप्रेक्षा भाषा
    4. सर्वार्थ सिद्धि भापा
    5 अष्टपाहुड़ भाषा
    6. समयसार भाषा
    7 ज्ञानार्णव भापा
2. प. सदासुखजी कासलीवाल—
    1. तत्त्वार्थ सूत्र टीका
    2 रत्नकरण्ड श्रावकाचार भापा
3. श्री जोधराज गोदीका— पद्मनन्दिपञ्चविंशति भापा

(3) बाबा दुलीचन्द बडा मन्दिर ग्रन्थ भण्डार—

यह ग्रथ भण्डार भी बड़े मन्दिर मे ही स्वतन्त्र अस्तित्व के रूप मे विद्यमान है। इस सग्रह की महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस सग्रह मे सभी ग्रयो का एकत्रीकरण का कार्य बाबा दुलीचन्द ने अकेले स्वय किया था। वे एक जैन साधु के समान जीवन यापन करते थे। ग्रथो की सुरक्षा, लेखन आदि ही उनका जीवन का एकमात्र उद्देश्य था। इसी कारण उस समय मे साहित्य सग्रह जैसे श्रमसाध्य कार्य को अकेले ही सम्पन्न कर सके। इस सग्रह मे लगभग 850 ग्रथ हैं जिनमे जैन साहित्य के अतिरिक्त अन्य धार्मिक ग्रथो का भी सग्रह है। 15 ग्रथो का अनुवाद स्वय ने किया है। इस ग्रथ भण्डार मे अनेको महत्त्वपूर्ण एव दुर्लभ पुस्तको का सग्रह है।

इस ग्रथ भण्डार मे मुख्यत. सस्कृत एव हिन्दी के ग्रथ है। हिन्दी के ग्रन्थ अधिकाशत: सस्कृत ग्रथो की भाषा टीकाएँ है। इस सग्रह मे प्रमुखत: पुराण, कथा, चरित, धर्म एव सिद्धात विषय से सम्बन्धित ग्रथो का अधिक सग्रह है। भण्डार मे आप्तमीमासालकृति आ. विद्यानन्दि की सुन्दर प्रति है। क्रियाकलाप टीका की स. 1534 की लिखित प्रति इस भण्डार की प्राचीनतम प्रति है, जिसकी प्रतिलिपि माडवगढ मे सुलतान गयासुद्दीन के राज्य मे लिखी गई थी। तत्त्वार्थसूत्र की स्वर्णमयी गोम्मटसार, त्रिलोकसार आदि की अनेको सुन्दर प्रतियाँ है। त्रिलोकसार की सचित्र प्रति बारीक एव सुन्दर लिखी हुई है। पन्नालाल चौधरी द्वारा लिखित डालूराम कृत द्वादशाग पूजा की प्रति भी (स. 1879) दर्शनीय ग्रथ है।

19 वी शताब्दी के प्रसिद्ध हिन्दी के विद्वान प पन्नालाल जी सघी का अधिकांश साहित्य एव भण्डार के सस्थापक दुलीचन्द की सभी रचनाएँ यहाँ उपलब्ध है। महत्त्वपूर्ण ग्रथो मे अल्हूकवि का प्राकृत छदकोष, विनयचन्द की द्विसधान काव्य टीका, वादिचन्द सूरि का पवनदूत काव्य, ज्ञानार्णव पर नयविलास की सस्कृत टीका, गोम्मटसार पर सकलभूषण एव धर्मचन्द की सम्कृत टीकाएँ है। धर्मशास्त्र पर धन्वन्तरि कृत आगम विलास, स्तोत्र साहित्य का शम्भुसाधु कृत जिनशतक टीका, वादिराज कृत वाग्भटालकारावचूरि तथा देवसूरि कृत 'यति दिनचर्या' नामक ग्रथ भी महत्त्वपूर्ण हैं। प्रद्युम्नचरित, वर्द्धमानकाव्य तथा हरिवशपुराण पर सस्कृत टीकाएँ भी उल्लेखनीय है।

हिन्दी रचनाओं में देवीसिंह छाबड़ा कृत उपदेशरत्नमाला भाषा (सं. 1796), हरिकिशन का भद्रबाहु चरित (स. 1787), छत्रपति जैसवाल की मनमोदन पंचविंशति भाषा (स. 1916) के नाम उल्लेख्य हैं। इस ग्रन्थ भण्डार मे हिन्दी पदो का भी अच्छा सग्रह है। इन कवियों में माणकचन्द, हीराचन्द, दौलतराम, भागचन्द, मगलचन्द एव जयचन्द छाबडा के हिन्दी पद उल्लेखनीय हैं।

(4) पाटौदी जैन मन्दिर ग्रंथ भण्डार—

यह ग्रथ भण्डार दि. जैन पाटौदी के मन्दिर मे अवस्थित है जो जयपुर की चौकड़ी मोदीखाना मे है। इस मन्दिर का प्रारम्भिक नाम आदिनाथ चैत्यालय था। इस मन्दिर का निर्माण जोधराज पाटौदी ने कराया था इस कारण बाद मे पाटौदी का मन्दिर नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस मन्दिर का निर्माण जयपुर नगर की स्थापना के साथ साथ हुआ था। मन्दिर निर्माण के पश्चात् ग्रथ भण्डार की स्थापना हुई। इस प्रकार यह ग्रथ भण्डार 200 वर्ष से अधिक पुराना है।

प्रारम्भ मे आमेर के भट्टारक भी यही आकर रहने लगे थे। आमेर ग्रथ भण्डार जयपुर में सगृहीत भट्टारक पट्टावली के अनुसार भट्टारक क्षेमेन्द्रकीर्त्ति, सुरेन्द्रकीर्त्ति, सुखेन्द्रकीर्त्ति एव नरेन्द्रकीर्त्ति का क्रमश 1815, 1822, 1863 तथा 1879 मे पट्टाभिषेक हुआ था। इस तरह इस मन्दिर से करीब 100 वर्षों तक भट्टारकों का सीधा सम्पर्क रहा। इस कारण शास्त्रो के सग्रह की वृद्धि होती रही।

भण्डार में ग्रंथो की कुल संख्या 2257 है इसके अतिरिक्त 308 गुटके हैं जिनमे 1800 से भी अधिक रचनाएँ सगृहीत हैं। इस प्रकार यहाँ लगभग 4 हजार ग्रथों का सग्रह विद्यमान है। भक्तामर स्तोत्र एव तत्वार्थसूत्र की मात्र एक ताड़पत्रीय प्रति को छोड़कर शेष ग्रंथ कागज पर लिखित हैं। कपडे पर लिखित कुछ जम्बूद्वीप एवं अढाईद्वीप के चित्र एव यन्त्र-मन्त्र आदि का यहाँ उल्लेखनीय संग्रह है।

इस भण्डार की प्राचीनतम प्रति सवत् 1407 में चन्द्रपुर दुर्ग मे लिखित महाकवि पुष्पदन्त कृत जसहर चरिउ (यशोधर चरित) है। अन्य प्राचीन ग्रन्थो में गोम्मटसार, जीवकाण्ड, तत्वार्थसूत्र (स. 1458), उपासकाचार दोहा (स.

1555), धर्मसग्रह श्रावकाचार (स 1542), शातिनाथपुराण श्रासगकवि (स. 1552), वरागचरित्र (वर्द्धमानदेव स. 1594), श्रावकाचार (गुणभूषणाचार्य स. 1562), समयसार (स. 1594), नागकुमारचरित्र (मल्लिषेण कवि स. 1594) श्रादि अनेको उल्लेखनीय है।

इस भण्डार मे वैसे तो लगभग सभी विषयो के ग्रथ सगृहीत है लेकिन पुराण, चरित्र, काव्य, कथा, व्याकरण, श्रायुर्वेद, पूजा एव स्तोत्र साहित्य का अच्छा सग्रह है। गुटको मे अधिकाशत: श्रायुर्वेद के नुस्खे एव जैन कवियो के हिन्दी मे पद लिखित है। इनमे अनेक पद अज्ञात जैन कवियो द्वारा रचित भी हैं जो शोध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जैन विद्वानो के पद श्राध्यात्मिक एव स्तुतिपरक दोनो ही है।

इस ग्रन्थ भण्डार में सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी एव राजस्थानी भाषा मे लिपिबद्ध अनेको अज्ञात रचनाएँ हैं। सस्कृत भाषा के ग्रन्थो मे व्रतकथाकोष सकलकीर्त्ति एव देवेन्द्रकीर्त्ति कृत, श्राशाधर कृत भूपालचतुर्विशति स्तोत्र की सस्कृत टीका रत्नत्रय विधि, भट्टारक सकलकीर्त्ति का परमात्मराज स्तोत्र, भट्टारक प्रभाचन्द का मुनिसुव्रतछन्द, श्राशाधर के शिष्य विनयचन्द की भूपालचतुर्विशति स्तोत्र की टीका के नाम उल्लेखनीय है। अपभ्रंश भाषा के ग्रन्थो मे लक्ष्मणदेव कृत णेमिणाह चरिउ, नरसेन की जिनरात्रिविधान कथा, मुनिगुणभद्र की रोहिणी विघान एव दशलक्षण कथा, विमलसेन की सुगधदशमी कथा अज्ञात रचनाएँ हैं। हिन्दी भाषा की रचनाओं मे रल्ह कवि कृत जिनदत्त चउपई (स 1354), मुनि सकलकीर्त्ति की कर्मचूरि वेलि (17 वी शताब्दी), ब्रह्मगुलाल का समोशरण वर्णन (17 वी शताब्दी), पृथ्वीराज कृत कृष्ण-रुक्मिणी वेलि की हिन्दी गद्य टीका, बूचराज का भुवनकीर्त्ति गीत (17 वी शताब्दी), बिहारी सतसई पर हरिचरणदास की हिन्दी गद्य टीका, कल्याणकीर्त्ति का चारुदत्त चरित श्रादि हिन्दी की अनेको महत्त्वपूर्ण एव पूर्व मे अज्ञात रचनाओ मे से हैं। जिनदत्त चउपई 13 वी शताब्दो की हिन्दी मे रचित अब तक उपलब्ध हिन्दी रचनाओ मे प्राचीन है। इसी प्रकार अन्य भी अनेको महत्त्वपूर्ण ग्रथ यहाँ उपलब्ध है।

(5) जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जोबनेर (जयपुर)—

यह ग्रन्थ भण्डार दि. जैन मन्दिर जोबनेर मे सगृहीत है, जो खेजडे का रास्ता, चादपोल बाजार मे स्थित है। ग्रन्थ भण्डार को सग्रह करने मे प.

पन्नालाल जी तथा उनके शिष्य प. वख्तावरलाल जी का विशेष सहयोग रहा था। दोनो ही विद्वानों की ज्योतिष, आयुर्वेद, मन्त्र शास्त्र एव पूजा साहित्य में विशेष अभिरुचि के कारण इन्ही विषयो के अधिकांश ग्रथ उपलब्ध हैं। यहाँ भण्डार मे 340 ग्रंथ हैं।

इस ग्रन्थ भण्डार मे 17 वी शताब्दी से लेकर 19 वी शताब्दी तक के अधिकांश ग्रथ सगृहीत हैं। सबसे प्राचीन प्रति पद्मनन्दि पचविंशति (सं. 1578) है। प. आशाधर की आराधनासार टीका एव नागौर के भट्टारक क्षेमेन्द्रकीर्त्ति कृत गजपथामण्डलपूजन उल्लेखनीय ग्रन्थ हैं। रघुवश महाकाव्य की (सं 1680) की अच्छी प्रति भी उपलब्ध है। हिन्दी ग्रन्थों में शांतिकुशल का अंजनारास एवं पृथ्वीराज का रुक्मिणी विवाहलो, बिहारी सतसई की वर्णक्रमानुसार लिखित प्रति एव मानसिंह का मानविनोद आयुर्वेदीय ग्रथ उल्लेखनीय हैं।

(6) **चौधरियो का जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—**

यह मन्दिर वोली का कुआ के पास, चौकड़ी मोदीखाना में अवस्थित है। पूर्व मे 'नेमिनाथ का मन्दिर' के नाम से प्रसिद्ध मन्दिर अव चौधरियो का चैत्यालय नाम से प्रसिद्ध है।

यहाँ केवल 108 ग्रथ हैं जिनमे 75 हिन्दी के तथा शेष सस्कृत भाषा के ग्रन्थ हैं जो दैनिक स्वाध्याय के उपयोगी हैं। लगभग 160 वर्ष प्राचीन यह ग्रन्थ भण्डार है। पं. जयचन्द छावड़ा कृत ज्ञानार्णव भाषा (स. 1882), खुसालचन्द्र कृत त्रिलोकसार भाषा (स. 1884) एवं छीतर ठोलिया कृत होलिका चरित (स 1883) के नाम उल्लेखनीय है। ग्रन्थ-सग्रह व्यवस्थित रूप से रखा हुआ है।

(7) **बैराठियों का जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार—**

यह मन्दिर जौहरी वाजार, मोतीसिंह भौमिये के रास्ते मे स्थित है। इस ग्रथ भण्डार में लगभग 150 ग्रथ सगृहीत हैं, जिनमे वीरनन्दि कृत चन्द्रप्रभ चरित की प्रति सवसे प्राचीन है। इस ग्रथ का प्रतिलिपि समय सं. 1524 है।

प्राचीन अन्य हस्तलिखित ग्रथो में गुणभद्राचार्य कृत उत्तरपुराण (स. 1606), ब्रह्मजिनदास कृत हरिवंशपुराण (सं. 1641), दोपचन्द्र कृत ज्ञानदर्पण एव लोकसेन कृत दशलक्षण कथा उल्लेखनीय हैं। श्री राजहसोपाध्याय की षष्ठ्यधिक शतक की टीका (स. 1579), ब्रह्मजिनदास कृत अठावीस मूल गुणरास

एवं दानकथा (हिन्दी) तथा ब्रह्मअजित का हंसतिलक रास उल्लेखनीय प्रतियो मे हैं। इस संग्रह में ऋषिमण्डल स्तोत्र, ऋषिमण्डल पूजा, निर्वाणकाण्ड, अष्टान्हिका जयमाल की स्वर्णाक्षरी प्रतियाँ हैं। इन प्रतियो के बार्डर सुन्दर बेलबूटो से युक्त हैं तथा कलापूर्ण हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि प्रत्येक पत्र पर बेल की डिजाइन नवीन है, किसी दूसरे पत्र पर दुहराई नही गई है।

(8) **संघीजी जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—**

सघीजी का जैन मन्दिर चौकड़ी मोदीखाना मे महावीर पार्क के पास स्थित है। इस मन्दिर का निर्माण कार्य महाराजा जयसिंह के प्रधानमन्त्री दीवान झूथारामजी सघी ने कराया था।

मन्दिर के ग्रन्थ भण्डार मे 980 हस्तलिखित ग्रथो का सग्रह है। अधिकाश ग्रन्थ 18 वी व 19 वी शताब्दी के लिखित है। नवीन ग्रन्थ णमोकार काव्य सवत् 1995 का लिखित है, इससे पता चलता है कि प्रतिलिपियो का कार्य काफी वर्षों बाद तक होता रहा है। आचार्य कुन्दकुन्द कृत पचास्तिकाय की सबसे प्राचीन हस्तलिखित प्रति सवत् 1487 की लिखित है।

इस ग्रन्थ भण्डार की प्राचीन प्रतियो में मुनि श्रीचन्द कृत पुराणसार सवत् 1543, भ. शुभचन्द कृत पाण्डवपुराण सवत् 1613, पद्मनिन्द कृत श्रावकाचार सवत् 1613, धर्मकीर्त्ति की कौमुदीकथा सवत् 1663, भ. हर्षकीर्त्ति का अनेकार्थशत सवत् 1797, बनारसी विलास सवत् 1715 के नाम उल्लेखनीय हैं। संवत् 1530 की लिखित किरातार्जुनीय की एक सुन्दर प्रति भी विद्यमान है। दशरथ निगोत्या कृत धर्मपरीक्षा (र काल स. 1718) की सवत् 1719 की रचनाकालीन प्रति, महेश कवि कृत हम्मीररासो, किशनलाल कृत कृष्णबालविलास उल्लेखनीय ग्रथ हैं।

इस ग्रन्थ सग्रह मे 66 गुटके है जिनमे हिन्दी-सस्कृत की लघु रचनाएँ हर्षकीर्त्ति कवि कृत चन्द्रहस कथा स. 1708, हरिदास की ज्ञानोपदेश बत्तीसी (हिन्दी), मुनिभद्र कृत शान्तिनाथ स्तोत्र (सस्कृत) आदि महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

(9) **छोटे दीवानजी का जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार—**
(श्री चन्द्रप्रभ दि जैन सरस्वती भवन)

यह सरस्वती ग्रथ संग्रह छोटे दीवानजी के मन्दिर मे स्थित है जो अमरचन्द जी दीवान का मन्दिर नाम से प्रसिद्ध है। इस भण्डार मे 830 हस्तलिखित

ग्रंथ कागज पर लिखित है। इसमें भाषानुसार निम्न ग्रथ हैं—संस्कृत 418, प्राकृत 68, अपभ्रंश 4 और हिन्दी के 340 ग्रंथ है जिनमें धर्म एवं सिद्धांत के 147, अध्यात्म के 62, पुराण के 30, कथा के 38, पूजा साहित्य के 152, स्तोत्र के 81 एवं अन्य विषयों के 320 ग्रंथ है।

इस सग्रह मे अधिकाश प्रतियाँ 19 वी 20 वी शताब्दी की हैं, परन्तु कुछ ग्रथ 16 वी एवं 17 वी शताब्दी के भी हैं। इनमें निम्न ग्रथों के नाम उल्लेखनीय है—

क्रमांक	ग्रंथ नाम	कर्ता	लिपि समय	भाषा
1.	उपसर्गहरस्तोत्र	पूर्णचन्द्राचार्य	स 1553	संस्कृत
2	लब्धिविधानकथा	प. अभ्रदेव	1607	,,
3.	षट्कर्मोपदेशरत्नमाला	अमरकीर्ति	1622	अपभ्रंश
4.	सर्वार्थसिद्धि	पूज्यपाद	1625	सस्कृत
5.	यशोधरचरित्र	पुष्पदन्त	1630	अपभ्रंश
6.	नेमिनाथ पुराण	ब्रह्मनेमिदत्त	1646	संस्कृत
7	प्रवचनसारभाषा	जोधराज	1730	हिन्दी

अज्ञात कृतियो मे तेजपाल कवि कृत सभवजिणणाह चरिए (अपभ्रंश) तथा हरचन्द गंगवाल कृत सुकुमाल चरित्र भाषा (र काल स 1918) के नाम विशेषत: उल्लेखनीय है।

(10) गोधो का दिगम्बर जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—

गोधो का मन्दिर घी वालो का रास्ता, नागौरियो का चौक, जौहरी बाजार मे अवस्थित है। इस मन्दिर का निर्माण कार्य 18 वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे हुआ था और तब से ही ग्रंथ संग्रह का कार्य भी प्रारम्भ कर दिया गया था। अनेको ग्रन्थ सांगानेर के मन्दिरो से भी लाए गए थे। यह एक व्यवस्थित ग्रथ सग्रह है। इसमें 616 हस्तलिखित ग्रन्थ एव 102 गुटके है। इस सग्रह में पुराण, चरित, कथा तथा स्तोत्र साहित्य का अच्छा सग्रह है। अधिकतर ग्रथ 17 वीं शताब्दी से लेकर 19 वी शताब्दी तक के विद्यमान है। ग्रन्थ भण्डार मे व्रतकथाकोश की संवत् 1586 मे लिखित प्रति प्राचीनतम है। इस सग्रह में अन्य विषयो की अपेक्षा हिन्दी रचनाओं का अच्छा सग्रह है। हिन्दी की महत्वपूर्ण कुछ रचनाएं निम्न प्रकार से हैं—

1 चिन्तामणिजयमाल	ठक्कुरकवि	हिन्दी	16 वी शताब्दी
2 सीमन्धरस्तवन	,,	,,	,,
3 गीत एव आदिनाथ स्तवन	पल्ह कवि	,,	,,
4 नेमीश्वर चौमासा	मुनिसिहनन्दि	,,	,,
5 चेतन गीत	,,	,,	,,
6 नेमीश्वर रास	मुनि रतनकीर्ति	,,	,,
7 नेमीश्वर हिंडोलना	,,	,,	,,
8 द्रव्यसग्रह भाषा	हेमराज	,,	र. का. 1719
9 चतुर्दशी कथा	डालूराम	,,	1795
10 बिहारी सतसई टीका	हरचरणदास	,,	1834

उक्त रचनाओं के अतिरिक्त जैन हिंदी कवियों के पदों का भी अच्छा सग्रह है। इनमें बूचराज, छीहल, कनककीर्ति, प्रभाचन्द, मुनि शुभचन्द्र, मनराम एव अजयराम के पद विशेषत: उल्लेखनीय हैं। संवत् 1629 मे रचित डूगर कवि की होलिका चउपई भी ऐसी रचना है जिसका परिचय अल्पज्ञात है। संवत् 1830 मे रचित हरचद गगवाल कृत पचकल्याणक पाठ भी ऐसी ही सुन्दर रचना है।

सस्कृत ग्रंथों मे उमास्वामि विरचित पंचपरमेष्ठि स्तोत्र महत्वपूर्ण हैं। ग्रन्थ सग्रह मे सगृहीत प्राचीन प्रतियों मे विमलनाथ पुराण सं. 1696 गुणभद्राचार्य कृत धन्यकुमार चरित सं. 1652, विदग्धमुखमण्डन सं 1683, सारस्वत दीपिका स. 1657, नाममाला (धनंजय) सं 1643, धर्मपरीक्षा (अमितगति) स 1653, समयसार नाटक (बनारसीदास) स 1704 आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

(11) यशोदानन्दजी का जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—

यह जैन मंदिर यति यशोदानन्द जी द्वारा स. 1848 में बनवाया गया था और निर्माण के पश्चात् ही ग्रन्थ सग्रह का कार्य प्रारम्भ कर दिया। यह मन्दिर चौड़ा रास्ता में अवस्थित है। चू कि यशोदानन्द जी साहित्य मे स्वयं रुचि रखते थे इसलिए हस्तलिखित ग्रथों का अपने यहाँ अच्छा सकलन कर लिया था। इस समय पर इस सग्रह मे 353 हस्तलिखित ग्रंथ एव 13 गुटके सगृहीत हैं। अधिकांशत: ग्रंथ 18 वी शताब्दी के एवं बाद की शताब्दियों के हैं। ग्रन्थ सामान्य ही हैं। उल्लेखनीय ग्रन्थो मे चन्द्रप्रभकाव्य पजिका संवत्

1564, पं देवीचंद कृत हितोपदेश की हिंदी गद्य टीका है । प्राचीन प्रतियों मे आचार्य कुन्दकुन्द कृत समयसार स 1614, आशाधर कृत सागारधर्मामृत सवत् 1628, केशवमिश्र कृत तर्कभाषा सं. 1669 के नाम उल्लेखनीय है ।

(12) विजयराम पांड्या का जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—

विजयराम पांड्या जैन मन्दिर का निर्माण कब हुआ ? इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है लेकिन मदिर की दशा देखने से यही प्रतीत होता है कि जयपुर बसने के समय का ही निर्मित प्रतीत होता है । यह मदिर पानो का दरीबा चो. रामचन्द्र जी मे स्थित है ।

इस सग्रह के ग्रथ अधिकाश जीर्ण-शीर्ण अवस्था मे हैं तथा अनेको के पत्र भी पूरे प्राप्त नही है । वर्तमान में यहाँ 275 ग्रन्थ एव 79 गुटके है । यहाँ के गुटको का अच्छा सग्रह है । इनमे विश्वभूषण की नेमीश्वर की लहरी, पुण्यरत्न की नेमिनाथ पूजा, श्याम कवि की तोन चौबीसो चउपई (र. काल 1759), स्योजीराम सोगाणी की लग्नचन्द्रिका भाषा के नाम उल्लेखनीय हैं । इन छोटी छोटी रचनाओ के अतिरिक्त रूपचन्द्र, दरिगह, मनिराम, हर्षकीर्ति, कुमुदचन्द्र आदि कवियो के पद भी सगृहीत है । साह लोहट कृत षटलेश्यावृत्ति एव जसुराम का राजनीतिशास्त्र भाषा भी हिंदी की उल्लेखनीय रचनाएँ है ।

(13) पार्श्वनाथ का जैन मन्दिर ग्रथ भण्डार, जयपुर—

यह मदिर जयपुर का प्रसिद्ध जैन मदिर है । इस मदिर का निर्माण सं. 1805 मे सोनी गोत्र वाले किसी श्रावक ने कराया था, इसलिए यह सोनियो के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है । यहाँ के ग्रंथ संग्रह मे 540 ग्रथ एवं 18 गुटके हैं । इसमे सस्कृत भाषा के ग्रन्थ अधिकाशत: विद्यमान हैं । सवत् 1445 की लिखित प्रति माणिक्य सूरि कृत नलोदय काव्य इस ग्रंथ सग्रह का प्राचीनतम ग्रथ है । हालाकि इस संग्रह मे अल्प ग्रन्थ ही हैं तथापि अल्पज्ञात एव महत्वपूर्ण ग्रथो का सकलन अच्छा है ।

अल्पज्ञात ग्रन्थो मे अपभ्र श भाषा का विजयसिह कृत अजितनाथ पुराण, कवि दामोदर कृत णेमिणाहचरिउ, गुणनन्दि कृत वीरनन्दि के चन्द्रप्रभकाव्य की पंजिका (संस्कृत), महापडित जगन्नाथ कृत नेमिनरेन्द्र स्तोत्र (सस्कृत), मुनि पद्मनन्दि कृत वर्द्धमानकाव्य, शुभचन्द्र कृत तत्ववर्णन, चन्द्रमुनि कृत पुराणसार व हिंदी भाषा का इन्द्रजीत कृत मुनिसुव्रत पुराण आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

इस संग्रह में ग्रन्थों की कई प्राचीन प्रतियाँ उपलब्ध है। इनमें से कुछ प्रतियों का विवरण निम्नरूपेण है—

1	षट्पाहुड	आचार्य कुन्दकुन्द	संवत् 1516	प्राकृत
2	वर्द्धमानकाव्य	पद्मनन्दि	1518	संस्कृत
3	स्याद्वादमजरी	मल्लिषेण	1521	,,
4	अजितनाथपुराण	विजयसिंह	1580	अपभ्रंश
5	णेमिणाह चरिए	दामोदर	1582	,,
6	यशोधरचरित्र टिप्पण	प्रभाचन्द	1585	सस्कृत
7	सागारधर्मामृत	आशाधर	1595	,,
8	कथाकोष	हरिषेणाचार्य	1567	,,
9	जिनशतक टीका	नरसिंह भट्ट	1595	,,
10	तत्वार्थरत्न प्रभाकर	प्रभाचन्द	1633	,,
11	क्षत्रचूडामणि	वादीभसिंह	1605	,,
12	धन्यकुमार चरित्र	आ. गुणभद्र	1603	,,
13	नागकुमार चरित्र	धर्मधर	1616	,,

इस सग्रह मे कपडे पर संवत् 1516 का लिखित प्रतिष्ठा पाठ है जो जयपुर के ग्रन्थ सग्रहों में उपलब्ध कपड़े पर लिखे हुए ग्रन्थो में प्राचीनतम है। यशोधर चरित की सुन्दर एव कलापूर्ण सचित्र प्रति है, चित्र मुगल शैली से प्रभावित है तथा लगभग 200 वर्ष से अधिक पुराना है।

(14) **आमेर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—**

आमेर का ग्रन्थ संग्रह राजस्थान के प्राचीन ग्रन्थ सग्रहो मे से एक है। इस ग्रन्थ भण्डार की स्थापना सर्वप्रथम नेमिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर मे, आमेर के भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति ने 18 वी शताब्दी मे की थी। विद्वान भट्टारक ने अपने जीवनकाल मे जैन ग्रन्थो का अच्छा सग्रह कर लिया था। इसलिए प्रारम्भ मे यह ग्रंथ सग्रह भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति ग्रथ भण्डार के नाम से प्रसिद्ध था। कालांतर मे यह सग्रह महावीर भवन, मनिहारो का रास्ता, जयपुर मे स्थानान्तरित कर दिया गया। इस ग्रन्थ भण्डार मे 2605 महत्वपूर्ण और दुर्लभ ग्रंथ तथा लगभग 150 गुटके विभिन्न भाषाओ जैसे— प्राकृत, अपभ्रंश, सस्कृत, हिन्दी, गुजराती, राजस्थानी के हस्तलिखित ग्रन्थ सगृहीत हैं। इस सग्रह मे जयपुर के छाबड़ो के मन्दिर तथा बाबू ज्ञानचन्द जी खिन्दूका द्वारा भेंट किए हुए ग्रथ भी

है। यहाँ के सग्रह में प्रकाशित पुस्तकों का भी अच्छा संग्रह है जो कि अध्येताओं को सन्दर्भ आदि के लिए उपयोगी है।

इस संग्रह का प्राचीनतम ग्रथ संवत् 1334 का लिखित महाकवि पुष्पदन्त विरचित उत्तरपुराण है। इसके अतिरिक्त प्राचीन ग्रंथों में मानिकराज कृत अमरसेनचरित, पद्मकीर्ति का पार्श्वनाथपुराण तथा किरातार्जुनीय की टीका है। 16 वी से 18 वी शताब्दी में लिखे हुए अन्य ग्रथों में भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति विरचित छांदसीय कवित्त (हिन्दी), ब्रह्मजिनदास कृत चौरासी न्यातिमाला (हिन्दी), लाभवर्द्धन कृत पाण्डवचरित (संस्कृत), लाखो कवि कृत पार्श्वनाथ चउपई (हिन्दी) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। गुटकों के संग्रह मे मनोहर मिश्र कृत मनोहर मजरी, उदयभानु कृत भोजरासो, तिपरदास कृत रुक्मिणी कृष्णजी का रासो, अग्रदास के कवित्त, श्याम मिश्र कृत रागमाला, जनमोहन कृत स्नेहलीला, विनयकीर्ति कृत अष्टान्हिका रासो तथा वंशीदास कृत रोहिणी विधि कथा आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। इस प्रकार आमेर ग्रंथ भण्डार में प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थो का एक अच्छा संग्रह है।

(15) बढ़ीचन्द जी जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—

यह ग्रंथ संग्रह बढ़ीचन्द जी जैन मन्दिर मे संगृहीत है जो घी वालो का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर में अवस्थित है। इस ग्रथ संग्रह की स्थापना सन् 1735 ई मे हुई थी। इस सग्रह मे कुल 1280 हस्तलिखित ग्रथ हैं जिनमे 162 गुटके भी सम्मिलित हैं। इनमें प्राकृत, अपभ्रंश, सस्कृत, हिंदी भाषाओ मे लिपिबद्ध पुराण, पूजा, प्रतिष्ठा, कथा, काव्य आदि विपयो के ग्रथ सगृहीत हैं। यहाँ के ग्रथो मे अनेक रचनाकारों की प्रसिद्ध रचनाओं के साथ ही यहाँ के विद्वान् प. टोडरमल और उनके पुत्र गुमानीराम की प्रसिद्ध रचनाएँ लिखी हुई संगृहीत हैं।

यहाँ के ग्रंथो मे प्राचीनतम प्रति सं. 1431 की वर्द्धमानकाव्य की संस्कृत टीका तथा नवीनतम प्रति मे सवत् 1987 की अभिद्वीपपूजा उपलब्ध है। इस ग्रथ सग्रह मे अप्रकाशित, दुर्लभ और उल्लेखनीय ग्रथ भी विद्यमान हैं। अपभ्रंश भापा मे लिखित महाकवि स्वयम्भू कृत हरिवशपुराण की प्रति जो कम उपलब्ध होती है, विद्यमान है। हिन्दी भापानिवद्ध प्रद्युम्नचरित (र. का. 1354 ई.) दुर्लभ प्रति भी सधारु द्वारा लिखित उपलब्ध है। इस ग्रथ संग्रह के गुटकों में अनेको छोटी छोटी रचनाएँ सगृहीत हैं।

(16) **जीवबाई जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—**

यह ग्रंथ संग्रह जीवबाई जैन मन्दिर में सगृहीत है जो मोतीसिह भौमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर मे स्थित है। इस ग्रंथ भण्डार मे मात्र 230 हस्तलिखित ग्रथों का सग्रह है। इनमे अधिकांश ग्रथ संस्कृत और हिन्दी भाषा के है। हिन्दी भाषा मे उपलब्ध ग्रन्थ सस्कृत रचनाओ जैसे पुराण, कथा, चरित आदि के अनुवाद अथवा टीकाएँ आदि ही है।

संग्रह के कुछ महत्वपूर्ण कृतियों का विवरण निम्न प्रकार है—

1 अष्टान्हिककथा भाषा	—	हिन्दी	स. 1914
2 ब्रह्मविलास	भगवतीदास	,,	1754
3 चर्चा समाधान	—	,,	1879
4 क्रियाकोश कथा भाषा	किशनसिह	,,	1795

(17) **खत्तरगच्छीय ज्ञान भण्डार जैन उपाश्रय, शिवजीराम भवन, जयपुर—**

यह ग्रथ सग्रह जैन उपासरा मे है जो मोतीसिंह भौमियो का रास्ता, जौहरी बाजार मे अवस्थित है। यह ग्रथ भण्डार जयपुर के बड़े ग्रथ भण्डारो मे से एक है। इस ग्रथ भण्डार मे 4500 से अधिक हस्तलिखित ग्रथ मौजूद है जिनमे 500 के लगभग गुटके है। सभी ग्रन्थ कागज पर लिखित है जिनमे कुछेक ग्रंथ 14 वी शताब्दी तक के पुराने है।

इस ग्रन्थ सग्रह मे महत्वपूर्ण बात यह है कि यहाँ के ग्रंथ बहुत ही सुरक्षित रूप से रखे हुए है। प्रत्येक ग्रन्थ दो लकड़ी की पट्टियो के बीच रखकर डोरी से लपेटकर बस्तो मे बान्धकर लकड़ी के बड़े सन्दूको मे रखे हुए हैं। यहाँ के सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, हिन्दी और राजस्थानी भाषा मे विभिन्न विषयों— आगम, सिद्धान्त, पुराण, कथा, चरित, पूजा, स्तोत्र, विधान, काव्य, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, ज्योतिष, गणित, सगीत, रस व अलकारादि है।

इस भण्डार के कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थों का विवरण इस प्रकार है—

1 गिरनार तीर्थ महिमा प्रबन्ध	—	प्राकृत	स. 1670
2 पन्नवण सुत्त	श्यामाचार्य	,,	1663
3 उपासगदशांगसुत्त	सुधर्मस्वामी	,,	1862
4 विक्रमादित्य चरित	सुभशील सूरि	संस्कृत	1556

(18) लश्कर जैन मन्दिर ग्रंथ भण्डार, जयपुर—

यह ग्रन्थ भण्डार दि. जैन मन्दिर लश्कर, किशनपोल बाजार, चौकडी मोदीखाना, जयपुर में स्थित है। यहाँ के भण्डार मे कुल 828 हस्तलिखित ग्रन्थ गुटको सहित विद्यमान हैं।

इस ग्रथ भण्डार मे विभिन्न विषयो जैसे पुराण, पूजा, कथा, चरित, काव्य, व्याकरण, ज्योतिप आदि के ग्रथ सस्कृत, प्राकृत, हिन्दी व राजस्थानी भाषा में उपलब्ध हैं। ग्रन्थ भण्डार के सभी ग्रन्थों को क्रमाकित कर व्यवस्थित रखा हुआ है। महत्वपूर्ण ग्रन्थो का विवरण बतौर नमूने निम्न प्रकार से है—

1	भोजचरित	भवानीदास व्यास	हिन्दी	स. 1825
2	चौबीसस्थान चर्चा	आचार्य नेमिचन्द्र	संस्कृत	1784
3	गीत वीतराग	प अभिनवाचार्य कीर्ति	सस्कृत	1889
4	कातन्त्रविभ्रम सूत्रावचूरि	चरित्रसिंह	सस्कृत व्या	1669
5	पद्मचरित टिप्पण	श्रीचन्द मुनि	,,	1511
6	श्रेणिक चउपई	डूग वैद	हिन्दी	1699
7	वैदर्भी विवाह	पेमराज	राजस्थानी	18 वी

(19) मरुजी जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—

यह ग्रन्थ भण्डार मरुजी जैन मन्दिर मे सगृहीत है जो मरुजी का चौक, मोतीसिंह भौमियो का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर में स्थित है। इस ग्रन्थ भण्डार में केवल 275 हस्तलिखित ग्रन्थ विद्यमान हैं जो पुराण, चरित, काव्य, व्याकरण, जैन साहित्य आदि विभिन्न विषयो के प्राकृत, सस्कृत, हिन्दी, राजस्थानी भाषा मे लिपिवद्ध हैं। इस सग्रह में अधिकांश ग्रंथ पूजा और स्तोत्र विषयो के हैं। इस संग्रह के कुछ महत्वपूर्ण ग्रथो का विवरण निम्न प्रकार से है—

1	चतुर्विशति पूजा	धर्मचन्द	हिन्दी	स. 1941
2	चतुर्विशति पूजा	वृन्दावनकीर्ति	,,	1922
3	रोहिणीव्रतमण्डल विधान	ब्रह्मसेन	संस्कृत	19 वी
4	सरस्वती प्रक्रिया प्रथमावृत्ति	परमहंस परिव्राजक	,,	1852
5	समयसार वृत्ति	भट्टारक जिनचन्द्राचार्य सूरि	,,	1788

(20) **थोलिया जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, जयपुर—**

यह ग्रन्थ भण्डार थोलिया जैन मन्दिर, घी वालों का रास्ता, जौहरी बाजार, मे सगृहीत है। इस सग्रहालय में 515 हस्तलिखित ग्रथ एव 143 गुटके है। यद्यपि इस सग्रह में ग्रथों की सख्या अल्प ही है किन्तु यह सग्रह महत्वपूर्ण एव दुर्लभ ग्रथों का है। यहाँ के ग्रंथ सस्कृत और हिन्दी भाषा मे ही उपलब्ध हैं।

संस्कृत भाषा मे निबद्ध इस भण्डार का प्राचीनतम हस्तलिखित ग्रथ ब्रह्मदेव विरचित द्रव्यसग्रह है जिसका लिपिकाल स. 1416 है। यह ग्रन्थ योगिनीपुर (दिल्ली) मे लिखा गया था। योगीन्द्रदेव की परमात्माप्रकाश पर टीका, हेमचन्द्राचार्य का शब्दानुशासन और पुष्पदन्त का आदिपुराण इस सग्रह के महत्वपूर्ण ग्रथ है।

इस सग्रह के 143 गुटको मे हिन्दी की अच्छी कृतियों का संग्रह है जिनमे भट्टारक हेमराज, शुभचन्द्र, रघुनाथ, ब्रह्मजिनदास, ब्रह्मज्ञान सागर आदि की रचनाएँ उल्लेखनीय है। कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थो का विवरण निम्न है—

1	धर्मपरीक्षा	अमितगति	संस्कृत	र का 1070 प्र. का 1537
2	ज्ञानसूर्योदय नाटक वचनिका	वादिचन्द्र सूरि	स.-हिन्दी	स. 1929
3	कर्मविपाक सूत्र चउपई	—	हिन्दी	19 वी
4	निघण्टु	धन्वन्तरि	सस्कृत	19 वी
5	परमात्मप्रकाश टीका	जीवराज	हिन्दी	र. का. 1762 प्र. का 1872
6	समयसार	अमृतचन्द्राचार्य	प्रा.-सस्कृत	स. 1463
7	सुकुमाल चरित्र	भट्टारक सकलकीर्ति	सस्कृत	1537
8	यशोधर चरित्र	पद्मनाभ कायस्थ	,,	—

(21) **बीसपन्थी दि. जैन मन्दिर ग्रन्थ भण्डार, वडा मन्दिर, नागौर—**

यह ग्रथ भण्डार देवरा की गली, पुरानी नागौर मे अवस्थित है। भट्टारक पट्टावली के अनुसार भट्टारक रत्नकीर्ति ने स्वयं सवत् 1581 मे भट्टारक की गद्दी की स्थापना की थी। इसके साथ ही नागौर मे एक वृहद् हस्तलिखित ग्रन्थ भण्डार की स्थापना की थी।

इस ग्रंथ भण्डार में लगभग 20,000 महत्वपूर्ण हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह है। इसमे अनेकों गुटके भी सम्मिलित हैं। ग्रथ काफी प्राचीन हैं तथा अधिकांश ग्रंथ संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी तथा राजस्थानी भाषा के हैं। सभी ग्रन्थ कागज पर लिखित है।

यहाँ के ग्रन्थ जैन व जैनेतर विद्वानों द्वारा रचित है। जैन विद्वानो के ग्रंथ अधिकांशत जैन साहित्य के सिद्धान्त, पूजा, प्रतिष्ठा, कथा, चरित्र, स्तोत्र, व्रत-विधान, पुराण आदि विषयो तथा जैन साहित्य से इतर विषय—काव्य, कथा, लघुकाव्य, दर्शन, व्याकरण, छन्दशास्त्र, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि के उपलब्ध हैं। जैनेतर विद्वानो के अधिकांशत: काव्य, व्याकरण, आयुर्वेद, ज्योतिष और कामशास्त्र आदि विषयों की रचनाएँ उपलब्ध हैं।

यह सग्रह काफी महत्वपूर्ण और उपयोगी है। कुछ महत्वपूर्ण ग्रथो का विवरण इस प्रकार है—

1	सिद्धान्तचन्द्रिका	रामचन्द्र शरण	सस्कृत	16 वी
2	त्रिशति	रावल शार्ङ्गधर	,,	1751
3	जसहर चरिउ	पुष्पदन्त	अपभ्रंश	1505
4	वर्द्धमानकाव्य	पं. नरसेन	,,	1475
5	सुदर्शनचरित्र	नयनन्दी	,,	1570
6	श्रीपाल चरित्र	प. रायघू	,,	1595
7	त्रिशति महापुराण	पुष्पदन्त	,,	1493
8	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	श्रीचन्द	,,	1651
9	उच्छतित्रिभंगी	नेमिचन्द्र	प्राकृत	1562
10	पार्श्वनाथ पुराण	भूधरदास	हिन्दी	1838
11	समयसार टीका	बनारसीदास	,,	1723
12	नागकुमार चरित्र	धर्मधर	संस्कृत	1596
13	भोजप्रबन्ध	कवि भल्लालाल	,,	1558
14	रामपुराण	सोमसेन	,,	—
15	रामायण शास्त्र	चिरन्तनमुनि	,,	1463
16	सुदर्शन चरित्र	मुमुक्षु विघ्य	,,	1682
17	क्षेत्र चूडामणि	वादीभसिंह	,,	1544
18	प्रश्नोत्तर श्रावकाचार	भट्टारक सकलकीर्ति	,,	1590

19	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	सामन्त भद्राचार्य	संस्कृत	1543
20	अबड़ चरित्र	प अमर सुन्दर	,,	1826
21	भगवती सूत्र	—	प्राकृत	1609
22	ज्ञानतरगिणी	मुमुक्षु भट्टारक	संस्कृत र. का	1506
		पूज्य ज्ञानभूषण	लि.का.	1819
23	जीवप्ररूपण	गुणरत्न भूषण	प्राकृत	1411
24	ज्ञानसूर्योदय नाटक	वादिचन्द्र	प्रा.-संस्कृत	1798
25	रामाज्ञा	तुलसीदास	हिन्दी	—
26	सकलविधि विधान कथा	मुनिवर नयनन्दी	अपभ्रंश	1628
27	समाधितन्त्र	कुन्दकुन्दाचार्य	सस्कृत	1723
28	श्रीपालरास	यशविजय गणि	हिन्दी	1932
29	सिद्धिप्रियास्तोत्र	देवनन्दि	सस्कृत	17 वी
30	तत्वधर्मामृत	चन्द्रकीर्ति	,,	18 वी
31	पुण्यचन्द्रोदय मुनिसुव्रत पुराण	मुनि केशवसेनाचार्य	,,	1867
32	तर्कभाषा प्रकाशिका	बलभद्र	,,	1623
33	वर्द्धमानकाव्य	जयमित्र	अपभ्रंश	18 वी
34	वृषभ चरित्र	सकलकीर्ति	सस्कृत	1605

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर

The Arabic and Persian collection of Tonk

Shri Shaukat Ali Khan

The Arabic and Persian collection of Tonk was merely a pile up record of brittle, tattered, worm-eaten and fragile manuscripts in a decadent and deplorable state but, inspite of its being dilapidated, it has a splendid and glorious history of the happy past and tells a tale of our composite cultural and historical heritage Every page and folio seems to be revealing a history of its own in multifarious aspects i.e political, social, economic, religious and cultural. Every book, every codex and every manuscript keeps a world, a treasure and an ocean within itself

Though this collection has been in existence for over a century but when it was taken over by the Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur, there were only worms, moths, mildew, its keepers, and myself and 'Abid Kaifi' (of revered memory), as the only custodians. Severely handicapped by paucity, of funds furniture and other scientific equipments, the office was started in 1961 only and since then one man staff had been running the whole show. It has now won many laurels in the field of orientalogy and Indology and highlighted India's image in the Arabic and

Persian speaking countries. It served as a feeder to the scholars of various tastes and talents while attracting them from far a field. Housed in a very ignominious place, it emerged as a pride of the place and extended facilities and amenities to the scholars whose unsatiated quench for research pursuits, attracted them here for a purposeful and dedicated mission. They returned with a mine of vast knowledge glaned from this unique collection

In the last quarter of 19th century it was founded by Nawwab Muhammad 'Ali Khan, the third ruler of Tonk—a prince, and patron of art, culture and languages It started functioning first as Saidiyah Kutub Khanah, then a Distt., Branch Office of Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur with headquarters at Jonhpur.

In 1973 it was further enriched with a considerable addition of Arabic and Persian manuscripts lying scattered in different Government Museums and Libraries of Rajasthan On 4th of December, 1978 the Government of Rajasthan took the decision reorienting it as an independent department of the State Government ushering in as the first State in the promotion and cultivation of Arabic and Persian Research studies

The Aims and Objectives of this Institute are given below :

1. To preserve and conserve Arabic and Persian sources forming composite national heritage
2. To promote and cultivate Arabic and Persian Research Studies with special reference to Indology, Historiography and Islamics.
3. To provide facilities and amenities to scholars and to conduct research based on original sources
4. To publish, edit, translate, transliterate, and decipher original sources by attracting intellectual savants and

scholars through seminars, symposia, exhibitions, deliberations and Extension Lectures and also by releasing an Institute's Journal.

5 To establish a Centre of Calligraphy and School of advanced Studies with a view to educate fundamentals of research and methodology in oriental studies and research.

6. To acquire manuscripts and transcribed, xeroxed or microfilmed copies of rare and important works adorning other sister institutions and private collections.

7. To award prizes and scholarships for conducting research related to orientalogy and Islamics

The Institute is located in the idyllic precincts of the historic Nazar Bagh Palace near the celebrated Sunheri Mahal repleting with Reference Library of the rare printed works. Its impressive edifice 'Qasr-i-ilm' is going to be constructed on Oriental pattern between the two historical valleys the Rasiya and Anpoorna.

Since its very inception it has put conspicous landmark in the history of Islamic studies while attracting the Arabic and Persian scholars and eminent world litterateurs from the eastern and western hemispheres, it is the only Institute which has been highlighting the contribution of Rajasthan towards the advancement and furtherance of the literary and research pursuits of orientalogy and Islamics, in the scholarly community of the world. It has represented Rajasthan in various international and All India Seminars, Symposia and Conferences and thus earned acclaim and applause from the scholarly community, world over.

The Institute constitute a conspicuous collection of 76007 holdings, 6573 manuscripts, 1520 rare printed works excluding 54,000 historical documents comprising as many

as 30 disciplines of varied sciences. Apart from this secular heritage there are rare royal edicts called Faramin right from Akbar the Great down to Akbar Shah II excluding the Kharait of the rulers of the earstwhile princely States. The newly acquired inscriptions of epigraphical interest, are assigned to pre-Mughal era and said to have been among the pretty old inscriptions found in India, capture the vision of the visitors.

Darul Insha Huzoori :

There is also a pile up record of historical documents designated as Munshi Khana-i-Huzuri comprising Khairat documents and Amsila related to political and cultural history of Rajasthan with special reference to the Tonk State.

Adalat-ul-alia Shar'a Sharif :

The Shariat Record is another unique collection treating of Muslim polity based on Islamic Jurisprudence

Reference Library :

The importance of the Institute gets enhanced more and more when a scholar finds the recently built-up Reference Library repleting with rare and old printed works in Arabic, Persian and Urdu languages with a pretty well equipped nucleus of old research journals and magazines

The Rajasthan Government has again taken another historical decision of transferring old printed works from various divisional and district Libraries, important collection of works from Maharaja's Public Library, Jaipur, Saeedia Distt. Library, Tonk, Raja Harish Chandra Public Library, Jhalawar, Saraswati Bhawan, Udaipur, City

Palace, Udaipur and Distt Library, Bharatpur have successfully been centralized in this Institute forming another cultural centre at par with the other unique collection of manuscripts. The transferred printed works are as valuable as manuscripts. This Reference Library is also enriched with new additions of modern works and publication on historiography, literature, oriental studies and Islamics.

The Arabic and Persian Research Institute Rajasthan, Tonk is one of the outstanding institutes of India

The creation of the department is the greatest achievement of the Rajasthan Government for which the presidential Address by Prof. S A H. Abidi lavishly eulogises in the Sixth Session of All India Persian Teachers Conference held in Bombay University from 29th to 31st December, 1983.

"I am sure all lovers of Persian." Prof Abidi exultantly asserts, "will join me in thanking the Government of Rajasthan for establishing an Arabic and Persian Research Institute at Tonk; this Government, I am happy to say, has been sanctioning liberal grants for the maintenance and expansion of this Institute" He further observes, "It is heartening to note that its Director, Sahibzadah Shaukat Ali Khan, has by his sincerity, devotion and dynamism developed it into a fullfledged centre of research and publication in a short time."

The invaluable collection encompassing multi disciplinary facets viz : Orientalogy, Indology and Historiography treats of the following sciences :

Quranic subjects, Holy traditions, Jurisprudence, Astronomy, Astrology, Mathematics, Metaphysics, Materia-medica Music, Orthography, Palaeography, Calligraphy,

Lexicography. Sufism, Classics, Islamics, Ethics, Syntax, Etymology, education and occult sciences etc.

The profusely decoreted and ornate manuscripts embellished with gold, rubies emerald, pearls, sapphire and lapislazuli form an exquisitely treasured nucleus of unique nature. The antique, unique and solitary codices and princes, pioneer's and pedagogue's autographs, emperors, courtiers and celebrities endorsed works par excellence are the master-pieces, the Institute boasts of owning Scores of manuscripts on National Integration, Hindu Philosophy, Indian culture and on other fascinating fine arts such as decorative calligraphic panels, microscopic transcribed texts on rice, seeds and even on very small articles such as sesame, lentil bean and on even a single and small poppy seed invite and attract the research scholars, tourists, and even commoners

In a very short span of time the Institute has taken giant strides on the way of progress in terms of cataloguing, calendaring classification, critically edited works : redaction rendition translation, transliteration and publication.

Apart from this the Institute is instituting a school of Oriental Studies comprising two centres of Calligraphy each for girls and boys, one for decorative Calligraphy and a centre of Arabic and Persian Teaching Classes where scholarships are awarded to the students @ 100/-, 175/-, 200/- each per month for two years

Besides this, the Institute has recently established a Cassette Library, Rotography section and Reprography Cells Some of the very rare works of the Institute are being dealt with as follow

Si Waraqi Qur'an-majid :

A masterpiece of illumination and artistic beauty which exhibits superb calligraphic art of the Mughal age

The whole manuscript comprises only thirty folios with the striking feature of having been transcribed each line with the letter 'Alif' in red with double Jadwal and interlinear spaces in gold. First two pages are decorated with floral designs in gold. Its binding is an elegant specimen of Persian lacquer work. On the first and the last binding cards, splendid craftsmanship of floral designs in gold is demonstrated

This copy is ascribed to the calligraphy of 'Abu-ul-Baqi who had been awarded the title of Yaqut Raqam and weighed against the currency as a reward of the work by the Mughal emperor Shahjahan (1627-1658).

Alamgiri Qur'an-majid :

Another excellent specimen of calligraphy with an artistic, floral and ornamented work and illumination of Mughal age is worth mentioning. The second and the third pages contains Lawh in gold. On the margin, artistic floral designs are demonstrated in gold with important glosses and notes. It appears that this codex had once been housed in the library of the great Mughals On the first page, is an endorsement in Persian which runs as under "From the library of Mirza Muhammad Humayun Shah Bahadur the son of Mirza Muhammad Kam Baksh "Alam Bahadur."

Hama'Il-Sharif :

Another rare and antique copy of the, Qur'an is a splendid work of 11th cent. A.D. with elegant and ornate features of superb nature, which have made it a strikingly unique and priceless asset of this Institute It was transcribed in Iran by the calligraphist Muhammad-bin Ahmad an-Niriz ash-Shirazi The date of its transcription is given on the last page as 447 cent. A.H corresponding to 1055 A.D. Its ground is

brittling on account of old age. The binding is an excellent Persian lacquer of floral and decorative art

Taqrib un-Nashr :

A rare work on the art of the recitation of Qur'an propounded by Muhammad b. M.b. M Al-Jazarı (d. 833/1429) transcribed by the author's contemporary calligraphist Muhammad b M.b. A b Nasir b Ibrahim from the treatise which had-been perused by the author himself. Its rarity is enhanced when one finds an ijazat in the handwriting of the author awarded to his disciple Shams-ud-Din Nawiri. On the second page of the manuscript is affixed the seal of the Mughal emperor 'Alamgir with the legend "Nasir ud Din Hussain Khanahzad Padshah 'Alamgir."

At-Talkhis :

The manuscript is an ostensibly rare, antique and authentıc commentary of the holy Qur'an composed by Abul-'Abbas Ahmad Yusuf-al Kawashi (d. 680/1281) in 649/1251. No other copy of this manuscript could be traced out so far. It is condensed from three commentaries viz Tafsir-ut-Tam, Tafsır-ul-Hasan and Tafsir-ul-Kaı as observed by Haji Ḳhalifah in hıs "Kashf uz Zunun "

The authenticity and rarity of this manuscript are enhanced as ıt was collated from the original manuscript of the commentator and subsequently compared with the manuscript which had been transcrıbed by the commentator hımself. After 900/1494 it adorned the royal libraries as indicated by several writings 'Arzdidah, 'Arz Shud Jaizah of 917/1511, 919/1513, 921/1515, 925/1519, 942/1535. A seal of Sultan Mahmud Shah of Gujarat is also impressed upon folios nos. 131 & 140 wherein is inscribed the following Persian couplet :

"Jawıdan Bada Nıshan-i-Khatamı. Mahmud Shah
Ta Balauhi Asman Bashad Munawwar Mihru Mah"

The seal is of Mahmud Shah Baigrah I who ruled Gujarat from 1459 to 1511 A.D This archival reminiscence, has augmented the importance and value of this manuscript After changing over many hands it came in the custody of I'jaz Husain b. Muhmmad whose notes are penned down with other marginal notes of its custodians The commentator was a native of Mausil a centre of Islamic studies and learning Being an erudite scholar, versatile commentator and veteran Qari, he was an ardent and exalted sufi of no mean order

It was copied in the life time of the commentator in 677/1278 cent by the calligraphist, 'Abd-ul-Qahir b. Mahmud b Abi Bakr, a prolific writer and eminent scholar who had been a pupil of the commetator.

Kaff ur-Ra'A 'An Muharramat il-Lahw Wassama :
('Arabic Fiqh)

A rare and original treatise written in the handwriting of the author himself in 958/1551. Shihab ud-Din b al Hajar al Haitami (d. 973/1565) Its author commenced this work in 958/1551 cent a areply to the Farhus Sama' composed by an Egyptian, at Tunisi al-Maliki. It is a polemic against games and music, and consists of one Muqaddimah, two baabs and a Khatimah. In the India Office Library, London, there is only the Khatimah. Its copies adorn India Office, Berlin and British Museum; see I.O. III, Fiqh, P. 327

The manuscript, is really an invaluable piece which is a specimen of the author's calligraphy, contains his corrections and amendments

Futuh-ul Islam or Saulati Faruqi :

The original and rare work in verse supplemented by a versatile and veteran team of scholars to the original work

captioned Saulati Faruqı by Mirza M. Khan Turkmani Ashaub who verified the victorıes of the first two bcaliphs and could only continue it upto the battle of Halab. In the meantıme a portion of the treatise was lost ın the attack of Nadir Shah and the ramnant of which was located by Nawab Muhammad 'Ali Khan, the 3rd ruler of Tonk The manuscript has become too rare and ınvaluable It consists of six volumes which are further sub-dıvıded ınto chapters The Nawab very gracıously appointed a team of highly qualıfied and erudite scholars for completing Saulatı Faruqi, ın full, after the peculiar style of Shah Namah of Firdausı. The names of the scholars are cited below .

Maulana 'Abdul Karim Khan.

Maulana 'Abd ul-Wahid

Maulana Muhammad Hasan Malıhabadi

Maulana S. Najaf 'Ali Jhajjhari.

Maulana Nurul Haq Khastah S. Ahmad 'Ali Sımab & Sultan Mahmud Khan.

Critıcal and historical prefaces are prefixed to some of the volumes.

Scribe : Intızam 'Alı Khan b. Khan 'Ali Khan

Tarjamat ul-Kitab (Sufism) :

A rare and authentıc treatıse, by ash-Shaıkh Muhibbullah Allahabadi (d. 1058/1649) on sufic doctrines copied durıng the life of the author with hıs Mınhıyat The last page was added lately by someone other than the scribe. It is a rare copy of a comprehensıve work of importance and intrinsıc values settıng forth the general, theological and mystical system of the sufis

The work is also called Al-Maratib u-Arba'ah in view of its division into four sections, called Maratib Each

Martabah is subdivided into a number of Fusul. The 1st section deals with dogmatic theology, the second with religious law, the third with Sufic discipline and the fourth with Sufic experience. The author has observed that the Fusus-ul Hikam of Ibn-ul-'Arabi has been a principal source of inspiration to him It is preceded by an index.

The manuscript under review is so rare, authentic and important that, A.G. Areberry the cataloguer of I.O. Library writes that no other copy appears to be recorded not even by Haji Khalifah Its importance enhances when we mark that it would have been copied during the life time of the author

In 1108/1696 it was gifted by Muhammad Ajmal Allahabadi to Maulawi Azhar ul-Haq Muhammad b. M. Ahmad 'Abd-il-Haq.

Naqd un-Nusus (Tasawwuf) :

By Allamah Nur-ud-Din b Ahmad al-Jami is a rare and valuable acquisition not so much from its subject point of view, though for a Sufi it is a compendium of mysticism and philosophy of ethics for a scholar it is a mine of literature and for a student it is a vast storehouse of knowledge, being an elucidation of the mystic ideas propounded in the famous treatise FUSUS UL-HIKAM of Ibn-ul 'Arabi who is too well-known figure in the oriental world of sufism and much applauded scholar and commentator to need any further introduction here; but more than its contents, there are a few features of this manuscript which make it interesting.

The manuscript under review is an old copy. Unfortunately the date of its transcription has not been given, but with the help of various marginal notes, writings and the calligraphical datas, its date can be determined with sufficient

amount of certainty. There are indications that the manuscript was written during the life time of Maulana Jami, by Darwish Muhammad Khwafi, a friend of the writer. As the author died in A.D. 898/1492, the manuscript might have been transcribed before the date. For assigning its date, we are guided among other things, mainly by a statement of Dara Shukuh in his own handwriting on the first leaf of the manuscript proper, ascribing some of the notes to MAULANA JAMI himself We cannot help remarking that this manuscript almost half a millennium old is still in its captivating freshness and looks as if it has been recently transcribed.

The manuscript, from one end to the other, is full of useful and valuable marginal notes and comments written in more than one hand, few of which have been ascribed to the penmanship of Jami himself by Dara Shukuh, in an endorsement written and signed by himself, on the 3rd page of the manuscript (or the first page on whose reverse it commences). Some one has unsuccessfully, attempted to ruleout the name of Dara Shukuh, but though blurred, it is still perfectly legible.

Shah Jahan Namah Manzum :

A rare, perhaps the original work, versified by Abu Talib Kalim Hamadani a contemporary poet-laureate commencing with Hilyah-i-ShahJahan, (external features and virtues) his geneology, his campaigns, enterprises and other related historical events of his father's reign. The military campaigns to Kabul, Qandhar, the Deccan and Gujarat and the capture of Kangra-Hugli are specifically described

The manuscript comprises two parts bound in one. The first part contains events of Jahahgir's reign related to prince Khurram (Shah Jahan) ending at folio no. 57 and the 2nd part ends abruptly at folio no. 160, describing the

military campaigns of Shah Jahan launched under the generalship of his third son prince Shuja. From a colophonic note it is supposed to have been copied either in 1042/1632 or 1142/1729 as only the last two digits are apperant but from calligraphy it appears that it might have been transcribed in 1042/1632.

Mantuqah-i-Shah Jahani :

Composed by Bhagwan Das in 1037/1627 in the 1st regnal year of Shah Jahan and was copied by 'Abd-ur-Rahim Lahauri in 16th Feb. 1886 A D. It is a general history of Mughal Emperors containing biographical notices on the ancestors of Shah Jahan's horoscope and life sketches. It comprises 54 babs under the title of mantiqah beginning with Shah Jahan and ending with Shah Jahan with a general survey of all the Mughal Emperors from Chingiz Khan and Amir Timur prefixed with an introduction eulogizing the emperors in a hyperbolical and ornate prose. Its only copy adorns Salar Jung Museum under caption Mantuqah-i-Shah Jahani

Aulad Namah-i-Chingiz Khan :

A detailed account of the military campaigns of Chingiz Khan with special reference to Halagu Khan and his successors, issues and wives A tract designated as Tabaqat-Aulad-i-Chingiz Khan relating to the successors of Halagu Khan to Likhan dynasty down to the death of Sultan Ahmad b Uweis (813/1410) is noticed in British Museum. Most probably both seem identical. This manuscript was copied from that of the Asiatic Society Library, as a note on its first folio, indicates.

Tarikh-i-Ranthambore ·

Another rare and unpublished Persian manuscript on the history of the famous Qilah-i-Ranthambore by anonymous translator, is a Persian rendering of a Hindi book entitled

Pothi Hamir' in response to the request of some of his friends The treatise comprises five parts. The first part includes the origin and development of the land of Hamir Deva and the change over from Padamgarh to Ranthambore. The second part deals with the fortification of this land, the account of Raja Jit Hamir Deva, his military achievements over Jaspal and the account of the parganat of Hamir Deva. The third part contains the affairs of Dewal Dewi with famous Rani Hindola and relation of Hamir Deva with the ruler of Delhi. The fourth part deals with the account of the visit of Ulugh Khan, the general of 'Ala-ud-Din Khalji and the pitched and decisive battle between the Rajputs and the Khaljis entertainment and recreational activities, the construction of the fort, the tragic story of Jauhar of the Rajput ladies and the regal entry of the emperor 'Ala-ud-Din Khalji of Delhi The last eight pages written by another hand deal with the later story of the fort; how it fell into the hands of Akbar the Great and ultimately in 1815 into the possession of Raja Madho Singh of Jaipur, These pages were added by Har Anand the native of Nagaur who had been in the service of Naib Qiladar of Ranthambore named Sayyid 'Ali Markab Khan. It means, the manuscript under review would have been transcribed after 1815 It should, therefore, be the original manuscript of the translator who had omitted to write his name

Mir 'At-i-Waridat :

A history of the Indian Timurid dynasty from Babur down to the 16th regnal year of Muhammad Shah, corresponding to 1146/1733-4, written in a ornate style by Muhammad Shafi'b, Sayyid Muhammad Sharif, poetically surnamed Warid. It is a vivid account of Timur and his successors Babur, Humayun, Akbar the Great. Jahangir, Shah Jahan, Aurangzib, Shah 'Alam Bahadur Shah, Jahandar Shah, Farrukh Siyar and Raushan Akhtar Muhammad

Shah supplemented with an account of the battle between Mubariz-ul-Mulk Sarbuland Khan and Maharaja Abhai Singh son of Ajit Singh at Ahmadabad, Gujarat in 1141/1728. The work consists of three Tabaqat

(i) A geographical and historical survey of the countries.

(ii) Biographical sketches and notices of the Indian history.

(iii) Memories of Indian poets and authors.

Khulasat-ut-Tawarikh :

A rare work on the history of the world in general with reference to Persian and Indian history compiled by some anonymous author. The manuscript begins with the preface containing a list of its contents without giving its title and the name of the author. In superscription, someone has given its title as Khulasat-ut-Tawarikh as appears from the text. It is different from all the Khulasat-ut-Tawarikhs of Sujan Rai Bhandari, of Kaliyan Singh and of Ilah Yar Khan.

From the preface, it seems that it is based on the famous historical works such as Muntakhab-i-Tarikh of Hasan b.M. 'Ali Shirazi, Lubb-ut-Tawarikh of Yahaya 'Abd-ul-Latif al-Husaini al-Qazvini, Rauzat us-Safa, Jahan Kushai of 'Ata Baig Juwini Tarikh-i-Rashidi, Tarikh-i-Jahan Ara of Ahmad Ghaffari, Tabaqat-i-Nasiri and Akbar Namah of Abul Fazal. Among the above quoted histories, Akbar Namah is perhaps the latest work which was compiled in 1004/1595 It means that the Khulasat-ut-Tawarikh might have been compiled after 1004/1595 Moreover the work ends abruptly while referring to Shah Abbas I (996/1587-1038/1628) the famous Safawi ruler of Iran, incorporating the events of his reign occurring up to 998/1589, it might have been written down not before 998/1589 but the chapter VI relating to the Mughal rulers placed prior to the chapter VII treating of Safawi ruler which is the last chapter of the

work, dealing with Jahangır (1605-1627) ends with the historical emissary of Shah Quli Ilchi's retreat from Shah Abbas I with regard to the Deccan affairs in 1020/1611 The last portion of the history on the events of 998/1589 upto 1020/1611, is either damaged or the author could not continue his work onward. Most probably it might be the original draft of the author.

The work comprises seven babs which are divided into Fasls, further subdivided into Tabaqat and Ta'ifahs. The 1st chapter deals with the Prophets. The 2nd chapter treats of the kings upto the holy prophet Muhammad Sal'am. It is divided into two Fasls. First Fasl contains four Tabaqat dealing with lives and works of the kings and Amirs of Iran while the 2nd Fasl deals with the Taifah-i-Mughal Chapter III comprises three Fasls containing the accounts of the holy prophet Muhammad Sal'am, Sahabah Imams Chapter IV, comprising two Fasls treats of the Umaiyads and Abbasids dynasties, chapter V is divided into ten Fasls : 1st Safawiyah, 2nd Samanis, the third Ghaznawids, IV the Ghoris, V Gilan-wa-Mazandaran. This fasl is divided into four Firqhas, Fasl, VI deals with the rulers of Saljuqis, VII with Khawarazm Shah dynasty, VIII with Atabakan Azarbalijan (this Fasl is also further subdivided into six Firaqaha), and IX with Sa'dat-i-Ismailiyah having two Firqahs. The last and the X Fasl of this fifth chapter has not been furnished.

Chapter VI incorporates the accounts of the Mughal dynasty. It is divided into four Fasls which are subdivided into Firqahs It treats of the accounts of Chingiz Khan, Amir Timur and other Timurids.

Chapter VII deals with the ruler of Iran It contains 12 Ta'ifahs with a Khatimah highlighting the works and achievements of Shah Safi and his successors upto Shah

'Abbas I, ending abruptly with the affairs occurring in the year 998/1589.

Chapter VII comprises 77 folios treating of the Indian Mughal rulers right from Babur to Jahangir ending at his 17th regnal year corresponding to 1020/1611 It means the account of the last chapter dealing with Safawi dynasty from 998/1589 and onwards is either missing or left to be completed by the author

Thus either the manuscript seems to be the original one if not, original, it is however, the only copy in the world which has not been traced out else where so far. It can with all probabilities, be supposed to be the rare and unpublished copy as far as the research is undertaken by consulting reputed catalogues and bibliographies. If someone finds its another copy the editor may kindly be informed accordingly, so that he may revise this information

Miftah ul-Asrar :

A rare and unpublished general history by anonymous author with special reference to Indian rulers upto to the accession of Shihab-ud-Din Shah Jahan b. Nur-id-Din Jahangir

The work is divided into 12 Khizanahs, further subdivided into various Ganjinahs dealing with Islamic history, General history, the Mughal history, the Indian Timurids and the history of the Deccan rulers.

Khizanah I comprises nine Ganjinahs.

Khizanah II contains four Ganjinahs dealing with the prophets.

Khizanah III comprises four Ganjinahs treating of the Muluk-i-Ajam the Persian Kings

Khizanah IV contains four Ganjinahs dealing with Adam to Hazrat Muhammad Sala'am

Khizanah V contains two Ganjinahs treating of the Caliphs

Khizanah VI comprises 14 Ganjinahs dealing with the kings and rulers of the world

Khizanah VII contains four Ganjinahs dealing with the Khans of Turkey.

Khajinah VIII treats of Amir Timur and his successors in India upto the accession of Shah Jahan.

Khizanah IX deals with other species of the Turks.

Khizanan X deals with the Safawis and Khawaqin.

Khizanah XI treats of the rulers of the Deccan

Tarikh-i-Rajasthan (History) Or Nasb-ul-Ansab :
Author Kali Ram Kayasth

Tarikh-i-Rajasthan is a rare and original work It deals with the history of the rulers of Jaipur, Marwar, Mewar and Hadauti dynasties with special reference to the political affairs relating to the Punjab, the Deccan, Bengal, Gujarat and Sindh The manuscript contains three sections called Tabaqat. Its first section is devoted to the Kachchawas of the Jaipur House, embracing the political and social history of Jaipur right from the rise to the reign of Raja Pratap Singh In the beginning there is a detailed list of the Kachchawa rulers, who flourished before the Great Mughals, but from Babur and onwards their account is vivid and more reliable It also throws a flood of light on the political and matrimonial relations of the Mughals and the Rajputs The 2nd Tabaqah comprising 100 folios is on the Chauhan and the Sisodia dynasties of Ajmer and Mewar respectively. The brief history of Mewar closes abruptly with the reign of Rana Bhim Singh. This chapter starts with the description of geographical and strategical situation of Jodhpur, Nagaur and Jaisalmer The author takes up the invasion of Muhammad Ghauri and his victory over Prithvi Raj and Jai Chand. The political and cultural history of Marwar and Hadauti are fairly dealthwith The

third missing section said to have contained but as stated in the preface it contains a vivid account of the leading generals, sardars and the rulers of Deccan, Malwah, Gujarat, Kabul and Kashmir with a fair treatment of the celebrities of the oriental world.

The author Kali Ram was a native of Ajmer. In the preface he says that he undertook this work in deference to the wishes of Maharaja Sawai Pratap Singh in 1209 A.H./1794 A.D. From the contents of this history it appears that the author must have consulted the Archives of the Jaipur State, the Pothi Khanah, Kapat Duwarah, Tawshak Khanah records comprising Farmans, Sanads and the Akhbarat. The author might have had all the authentic records at his disposal as indicated by himself in the preface, In the beginning, he was attached to the office of the Munshi Khanah holding the post of epistolographer. He was very fond of reading the works on history. Since the beginning of his service he had been collecting the raw material from Persian and Hindi manuscripts and personal collections of the Rajah. The manuscript was completed in V.S. 1851 corresponding to Hizri yeer 1209/1794 A.D. No other copy of it is known to exist

Tarikh-i-Masudi (History) :

It is an excellent treatise on history and travels Its original title is Murujuz-Zahab-wa Ma'din-ul-Jauhar and was written by Qutb-ud-Din Abul Hasan 'Ali al-masudi (d. 346/957).

On the 21st Rabrius Sani, 1030 A H. this manuscript was presented to 'Abd-ur-Rahim Khan Khanan, who in his own hand writing has written a note in Persian,

The six seals marked on the fly-leaf have not been deciphered so far. On the last page there are three more seals, one of which is still undecipherable, while the

ramining two are of the Emperor Auranzib. However the words 'Alamgir-Badshah are legible while the rest of the legend is illegible. These two seal impressions show that the manuscript had been transferred to the Royal Library of Aurangzib. Apart from this, the manuscript has also been in the library of Diwan Shams-ud-Din, a famous scholar of Tonk and the Prime Minister to Nawab Wazir-ud-Daulah of Tonk.

In the beginning the author prepared a voluminous work 'Akhbar uz-Zaman' which dealt with geography, history and topography In this book, he wrote down a detailed account of all the renowned countries of the world; but as it was too elaborate, he made a more precise and condensed recension and changed the title to 'Ausat' which was subsequently condensed as 'Muruj uz-Zahabwa-Ma'din-ul-Jauhar'. The account of all the well-known scholars upto 332 A.H has been given in this book Moreover, it throws a flood of light on the literary and educational achievements of the intelligensia of the ninth century A.D The treatise also deals with the geography, topography and historical back-ground of the famous cities of the world and the cultural activities of the people of thôse places. In this respect it is a sort of abridged Encyclopaedia wherein socio-economical aspects of the age with political conditions, prevailing at different times, have been interestingly dealt with. It was copied in 993/1584 by Muhammad 'Ali b. Shahwari, a famous calligraphist.

Kitab ul-Gharibain (Lexicography) :

It is a rare, perhaps the oldest and authentic, copy of archival importance. The work is an old lexicon of less familiar words occurring in the holy Hadis. There are few salient features of calligraphy, antiquity, Asnad and marginal notes which have made it a rare asset

Its author is Abu Ubaid Ahmad b. M.b Abı Ubaid al-Abdi al-Harawi al-Fashani who got himself educated by Abu Mansur al-Azhari, a reputed 'Arabic scholar of varying talents and taste He died in 401 A.H. corresponding to 1011 A.D.

We have two copies of this work in our collection, the first copy comprising Bab ul-Aın with Mim to Bab ul-Qaf with Fa bears the date of transcription 542/1147 as furnished in its colophon. It was transcribed by 'Abd ur-Rahman b. Husain b 'Abdıllah al-Habbab as-Sa'di in Egypt. Moreover, it contains important Sanads and historical writings of the celebrated scholars who flourished during 6th and 7th cent. A H corresponding to 12th and 13th cent. A D.

The second copy begins with Kıtab uz-Zad to Kitab ul-Ha. There is no indication of the date of its transcription and the name of scribe. The style of the calligraphy and diacritical dots. Kufic written title and profusely used Zir under the words, place it tothe 6th and 7th cent. A H corresponding to 12th and 13th cent. A.D Many words are without diacritical marks while on the other hand the letters, 'Ra', 'Dal' 'Sad' and 'Ha' are often marked with dots and 'Sin with three dots Mostly, the sentences are seperated from each other by special signs and even minor pauses are marked often with three dots written in red; signs of full points are also visible which give an impression of its being Kufic calligraphy which had been in vogue upto 5th and the beginning of the 6th century according to Prof Hafiz Mahmud Shirani's verdict The dots were marked later on but not later than 7th/13th cent ca.

Director
Arabic and Persian Research Institute
TONK